ह ई कहानियाँ

[बालकोपयोगी ग्यारह मनोहर कहानियों का संग्रह]

लेखक—

मनोहर ऐतिहासिक कहानियाँ, मनोरञ्जक कहानियाँ,
समाज की चिनगारियाँ आदि उत्तमोत्तम पुस्तकों
के रचयिता तथा हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक—

अध्यापक ज़हूरबख़्श, हिन्दी-कोविद

प्रकाशक—

चाँद प्रेस लिमिटेड

चन्द्रलोक — इलाहाबाद

दिसम्बर, १९३४

पहला संस्करण]

[मूल्य १)

FIRST EDITION

One Thousand Copies

Printed and Published for and on behalf of

THE CHAND PRESS, LIMITED

BY

Munshi NAUJADIK LAL SRIVASTAVA

AT

THE FINE ART PRINTING COTTAGE

28, Edmonstone Road, Chandralok, Allahabad

December 1934

निवेदन

इस पुस्तक में ग्यारह बालकोपयोगी हवाई कहानियों का संग्रह किया गया है। ये कहानियाँ हमने समय-समय पर बालकों को सुनाई हैं। उन्होंने इन्हें पसन्द भी खूब किया है। इसीलिए अब ये पुस्तकाकार प्रकाशित की जा रही हैं।

इस संग्रह के पहले हमारे तैयार किए हुए, इसी प्रकार की कहानियों के दो संग्रह और प्रकाशित हो चुके हैं—पहला "मजेदार कहानियाँ" मिश्रबन्धु कार्यालय, जबलपुर द्वारा, और दूसरा "मनोरञ्जक कहानियाँ" चाँद प्रेस लिमिटेड इलाहाबाद द्वारा। उक्त संग्रह भी बहुत पसन्द किये गये हैं, और उनकी कई-कई आवृत्तियाँ हो चुकी हैं। "मजेदार कहानियाँ" तो इस वर्ष से मध्य-प्रान्त की आठवीं कक्षा में बतौर पाठ्य-पुस्तक के पढ़ाई जायगी। प्रस्तुत पुस्तक इसी अपूर्व उत्साह का परिणाम है। हमारा विश्वास है कि यह संग्रह पहले दो संग्रहों की अपेक्षा भी अधिक उपयोगी, रोचक और मनोरञ्जक प्रमाणित होगा। इसकी भाषा अत्यन्त सरल और बोल-चाल की रक्खी गई है, जो

सोने का पानी

किसी मुल्क में एक बादशाह था। उसकी बेगम की आँखें हमेशा दुखा करती थीं, जिससे राजमहल के सभी लोग बहुत परेशान रहते थे। पर सब से ज्यादा दुःख और रञ्ज शाहज़ादे को होता था। शाहज़ादे की उम्र थी तो बारह-तेरह बरस की, पर था वह बहुत समझदार। वह अपने माँ-बाप को बहुत चाहता, और उनकी सेवा भी ख़ूब करता था। उसे हमेशा यही फ़िक्र लगी रहती थी कि किसी तरह माँ की आँखें अच्छी हो जातीं।

बादशाह ने बहुत कोशिश की, कितने ही वैद्यों और हकीमों की दवा कराई, दिल खोल कर पानी की तरह धन बहाया, पर बेगम की आँखें अच्छी न हुईं। बादशाह, बेगम और शाहज़ादा, सभी मन मार कर बैठ रहे। कुछ दिन बाद एक हकीम आया। उसने बेगम की आँखें देख कर कहा—इनका अच्छा होना मुश्किल है। हाँ, अगर

सोने का पानी मिल जाय, तो क्या कहना, आँखें घड़ा भर में अच्छी हो सकती हैं।

यह कह कर हकीम तो चला गया, पर यहाँ सब लोग बड़ी चिन्ता में पड़ गये। कोई यह न जानता था, कि सोने का पानी कहाँ मिलेगा। तब उसे लेने जाता ही कौन? मगर शाहजादा बोला—कोई सोने का पानी लेने नहीं जाता, तो न जाय। मैं तो जाऊँगा, उसका पता लगाऊँगा, और जैसे बनेगा, लेकर ही लौटूँगा।

शाहजादे की बात सुन कर माँ-बाप बोले—बेटा, यह विचार छोड़ दो, अभी तुम बच्चे हो, तुम्हें सोने के पानी का पता मालूम नहीं; नाहक़ ही मुसीबतें उठाते फिरोगे। आराम से घर बैठो।

शाहजादे ने जवाब दिया—अगर मुझे उसका पता मालूम नहीं है, तो क्या हुआ। मैं पता लगाऊँगा। मैं जो कह चुका हूँ, वही करूँगा। आप मुझे जाने की इजाजत दीजिए।

सबने शाहजादे को बहुत समझाया, बहुत रोका, पर वह न माना। एक शीशी लेकर घर से बाहर निकल ही पड़ा। शाहजादा चलते-चलते कई दिन बाद एक घने जङ्गल में जा पहुँचा। वहाँ एक झोपड़ी बनी हुई थी। उसने सोचा, इसमें जरूर कोई रहता होगा, शायद वह सोने के पानी का पता भी जानता हो। बस, वह झोपड़ी के दरवाजे

पर जा पहुँचा। उसमें एक बूढ़ा फ़क़ीर रहता था, उसके तमाम बाल बर्फ़ की तरह सफ़ेद हो गये थे, और शरीर में अनगिनती झुर्रियाँ पड़ गई थीं। उस समय वह आँखें बन्द किये चुपचाप तस्बीह के दानों पर उँगलियाँ चला रहा था। थोड़ी देर बाद उसका भजन ख़तम हुआ। उसने आँखें खोलीं तो सामने क्या देखा कि शाहज़ादा बड़ी ख़ामोशी से बैठा हुआ है, और उसका चेहरा आशा के प्रकाश से चमक रहा है। उसका वह रूप-रङ्ग देखते ही फ़क़ीर की तबीयत ख़ुश हो गई। उसने बड़ी ही मुहब्बत से शाहज़ादे से पूछा—"बेटा, तुम कौन हो? यहाँ कैसे आ पहुँचे?" इस पर शाहज़ादे ने फ़क़ीर को अपना सब हाल सुना दिया।

शाहज़ादे की कहानी सुन कर फ़क़ीर बहुत .ख़ुश हुआ, बोला—बेटा, तुम बहुत अच्छे लड़के हो। माँ-बाप की सेवा तो सभी को करनी चाहिए, और अगर इसके लिए कुछ तकलीफ़ भी सहनी पड़े, तो .ख़ुशी से सह लेनी चाहिए। जो आदमी माँ-बाप की सेवा करता है, उस पर ख़ुदा ख़ुश होता और उसकी आशा भी पूरी करता है। तुम्हें सोने का पानी मिल तो जायगा, पर कुछ कठिनाई ज़रूर होगी। यहाँ से उत्तर की तरफ़ कोई पचास कोस की दूरी पर राक्षसों का एक महल है। उसी में सोने के पानी का कुण्ड है। तुम्हें वहीं जाना पड़ेगा। राक्षसों की

सूरत-शकल बहुत डरावनी होती है, और वे इन्सान को मार कर खा जाते हैं। आज तक वहाँ से लौट कर कोई नहीं आया। पर कुछ हर्ज नहीं, तुम थोड़ी हिम्मत से काम लेना। जब वहाँ पहुँचो, तब अगर राक्षस मिलें, तो 'मामू साहब' कह कर, और अगर उनकी बुढ़िया माँ मिले तो उसे नानी कह कर सलाम करना। फिर कोई डर न रहेगा। वे तुम्हारा आदर भी करेंगे, और तुम्हें सोने का पानी भी देंगे।

राक्षसों का यह हाल सुन कर शाहज़ादा ज़रा भी न डरा। फ़क़ीर की बातें सुनते ही उत्तर की तरफ़ चल पड़ा; मञ्ज़िल पर मञ्ज़िल तय करता और कितने ही नदी-नाले और पहाड़ लाँघता हुआ कई दिन बाद उस महल के सामने जा पहुँचा। जिस वक़्त वह वहाँ पहुँचा, उस वक़्त शाम हो रही थी। राक्षसों की माँ चरखा कात कर उठी ही थी कि शाहज़ादा धड़धड़ाता हुआ उसके सामने जा खड़ा हुआ, और सिर झुका कर बोला—"नानी, सलाम!" यह सुनते ही बुढ़िया .खुश हो गई। उसने शाहज़ादे पर प्यार किया, उसे अपने यहाँ ठहराया और बढ़िया खाना खिलाया। फिर एक छोटी-सी खाट पर मुलायम सा बिस्तर भी लगा दिया। शाहज़ादा उस पर जा लेटा। रास्ते का थका-माँदा तो था ही, आराम मिला तो थोड़ी ही देर बाद नींद की गोद में बेहोश हो गया।

जब कुछ रात बीत गई, तो राक्षस भी आ पहुँचे। शाहज़ादे को देखते ही बहुत .खुश हुए। उन्होंने बुढ़िया से कहा—अम्माँ, आदमी का यह बचा कहाँ से आ पहुँचा ? तुमने इसे यहाँ ठहरा लिया, यह बहुत अच्छा किया। हमने बहुत दिन से आदमी का गोश्त नहीं खाया था। अभी तो यह बच्चा ही है, इसका गोश्त बहुत मज़ेदार होगा। हथियार तो उठा लाओ, और हाँ, चूल्हे में आग भी सुलगा दो। हम इसे अभी भूनेंगे।

यह सुन बुढ़िया घबरा कर बोली—नहीं बेटा, यह अभी नादान बच्चा है। न जाने कहाँ का भूला-भटका यहाँ आ पहुँचा है। मुझे इस पर दया आ गई और मैंने इसे अपने यहाँ ठहरा लिया। अहा ! बेचारा थक कर कैसी सुख की नींद सो रहा है। बेटा, इसे खाने का इरादा छोड़ दो। इसने आते ही मुझे 'नानी' कह कर पुकारा था। सो अब तो यह अपना ही बच्चा हो गया। अब तो हमें इसकी मदद ही करनी पड़ेगी। क्या तुम लोग अपनी माँ की बात न मानोगे ?

अब राक्षस क्या करते, उन्हें माँ की बात माननी ही पड़ी। खाने-पीने से .फ़ुरसत पाते ही वे भी अपने-अपने बिस्तरों पर जा लेटे।

सवेरा हुआ। शाहज़ादा सोकर उठा। राक्षसों की डरावनी सूरतें देखकर वह ज़रा भी न डरा, बल्कि हँसता

हुआ उनके सामने पहुँचा और सिर झुकाकर बोला—"मामूँ साहब, सलाम!" राक्षसों ने उसे आशीर्वाद दिया, और उससे वहाँ आने का मतलब पूछा। शाहज़ादे ने बेखटके कुल हाल सुना दिया, जिसे सुनकर राक्षस भी बहुत ख़ुश हुए। उन्होंने शाहज़ादे की पीठ ठोंकी। कहा—बेटा, हम तुम्हें सोने का पानी देंगे तो; पर अभी नहीं! थोड़ा ठहरो। दिवाली आने वाली है। उस दिन हम देवी की पूजा करेंगे, और तुम्हें सोने का पानी भी देंगे।

थोड़ी देर बाद राक्षस अपनी माँ को साथ लेकर कहीं चले गये। जाते समय वे शाहज़ादे को महल की चाबियाँ भी दे गये और उससे कह गये कि तुम्हारा जी चाहे तो बग़ीचे में घूमना, महल की सब चीज़ें देखना, पर उस उत्तर वाली कोठरी में भूलकर भी न जाना।

शाहज़ादा दिन भर बग़ीचे में घूमता रहा। उसने एक-एक करके महल के सब कमरे देख डाले। उनमें रक्खी हुई सुन्दर-सुन्दर चीज़ें देखकर उसकी तबीयत बहुत ख़ुश हुई। फिर उसने सोचा, उस उत्तर वाली कोठरी में ज़रूर कोई बहुत अच्छी चीज होगी, शायद सोने का पानी ही हो, तभी तो वे मुझे उसमें जाने को मना कर गये हैं। पर यहाँ कौन देखता है, ज़रा देखें तो सही, उसमें क्या है? बस, वह उस कोठरी का दरवाज़ा खोल भीतर जा पहुँचा, तो देखता क्या है कि कोठरी के बीचोबीच पक्का

बँधा हुआ एक कुण्ड है, और उसमें सोने का साफ़ पानी लहरा रहा है। कुण्ड के बीच में एक फ़व्वारा है, जिससे सोने का पानी कोठरी में चारों तरफ़ उड़ता है, और फिर उसी कुण्ड में जा पहुँचता है। उस पानी के उजेले से कोठरी जगर-मगर हो रही है।

यह तमाशा देख शाहज़ादा मारे ख़ुशी के उछल पड़ा। उसने सोचा—यह ख़ूब रही। सोने का पानी मिल गया, एक शीशी भर कर चटपट घर की राह लेनी चाहिए, अब यहाँ ठहरना सरासर बेवक़ूफ़ी है। बस, उसने ज्योंही कुण्ड में हाथ डाला, त्योंही उसका हाथ कुण्ड में चिपक गया। बेचारे को ऐसा दर्द होने लगा, जैसे सौ-सौ बिच्छू काट रहे हैं। वह ज्यों-ज्यों हाथ छुड़ाने की कोशिश करता था, त्यों-त्यों दर्द बढ़ता था। अन्त में बेचारा मारे दर्द के छटपटाने लगा, और छटपटाते-छटपटाते बेहोश हो गया। वह बहुत देर तक उसी हालत में पड़ा रहा।

शाम होते-होते राक्षस महल में लौट आये। वे शाह-ज़ादे की करतूत जान गये। उन्होंने नाराज़ होकर कहा कि "उसने हमारा कहना नहीं माना। कम्बख़्त को वहीं चिपका रहने दो। मगर बुढ़िया का जी न माना। वह बिगड़ कर बेटों से बोली—वाह! कैसी बातें करते हो। अभी वह नादान है। उसमें समझ ही कितनी? बेचारा भूल से ऐसा कर

बैठा है। मुझे उस पर दया आती है। जब तक तुम उसे छुड़ा न दोगे, मुझे चैन न पड़ेगी।

तब उनमें से एक राक्षस कुण्ड के पास गया। उसने कुछ मन्त्र पढ़कर थोड़ा-सा पानी कुण्ड में डाला। उसका गिरना था कि सोने का पानी ज़ोरों से उबलने लगा, और थोड़ी देर बाद शान्त हो गया। उसके शान्त होते ही शाहज़ादे का हाथ छूट गया। वह उठकर खड़ा हो गया। तब राक्षस ने उसके सिर पर एक चपत जमा कर कहा—क्यों बेटे, हमारा कहना न माना। कहो, कैसा मज़ा आया? और करोगे ऐसी नादानी? फिर उस दिन से शाहज़ादे ने किसी तरह की गड़बड़ नहीं की।

जब दिवाली का दिन आया, तब राक्षसों ने देवी की पूजा की, और शाहज़ादे को एक शीशी सोने का पानी दिया। वह पानी लेकर .खुशी-.खुशी अपने घर लौट आया। उसे देखकर सब लोग बहुत .खुश हुए। सोने के पानी ने बहुत जल्दी बेगम की आँखें अच्छी कर दीं। उस दिन से माँ-बाप शाहज़ादे पर और भी प्यार करने लगे, और मुल्क भर में उसकी बड़ाई होने लगी।

देवता का दान

किसी गाँव के बाहर बरगद का एक पेड़ था, जिसके पास ही गणेशजी का एक छोटा सा मन्दिर था। उस गाँव में और मन्दिर थे ही नहीं, इसलिए सब लोग इसी मन्दिर में पूजा करने आया करते थे। उस गाँव में एक ग़रीब भिखारी भी रहता था। भीख माँगना ही उसका काम था। गाँव छोटा सा था, भिखारी को काफ़ी भीख नहीं मिलती थी, इसलिए वह और कोई उपाय न देख मन्दिर के दरवाज़े पर बैठने लगा। उसने सोचा, लोग यहाँ धर्म करने आते हैं, और नहीं तो पेट भरने लायक़ भीख मिल ही जाया करेगी।

भिखारी दिन भर मन्दिर के दरवाज़े पर बैठा रहता, और जब वहाँ किसी को आते देखता, तो 'शिव-शिव' रटने लगता था। इस तरह बेचारा दिन भर गणेशजी और शिवजी का नाम लिया करता था, मगर शाम तक उसे भीख मिलती थी—सिर्फ़ दो-चार मुट्ठी अन्न और कुछ

फल-फूल और कभी-कभी चार-छः पैसे। भला इतनी थोड़ी आमदनी से किसी की गुज़र कैसे हो सकती है? फिर भिखारी को अपनी ही नहीं, अपनी बेटी की चिन्ता भी करनी पड़ती थी। उसकी बेटी का नाम कमला था और वह बड़ी चतुर, बड़ी समझदार थी। मगर चतुराई और समझदारी से तो पेट की आग बुझती नहीं, उसे तो भोजन चाहिए। इसलिए कमला कभी-कभी अपने बाप को भोजन-पानी के लिए तङ्ग करने लगती थी। उस वक्त भिखारी के दिल पर कड़ी चोट लगती थी। उसकी आँखें भर आती थीं। वह चिन्ता के समुद्र में डूबने-उतराने लगता था।

२

गर्मी के दिन थे। दोपहरी का समय था। ऊपर आसमान और नीचे धरती धक्-धक् जल रही थी। चारों तरफ़ सन्नाटा छा रहा था। ऐसे ही समय में महादेव-पार्वती लोगों का सुख-दुःख देखने इस संसार में आये। चलते-चलते वे उसी गाँव में पहुँचे और गणेशजी के मन्दिर के सामने से निकले। भिखारी उन्हें आते देख जोरों से 'जय-शिव, जय-शिव' की रटना करने लगा।

भिखारी की यह हालत देख पार्वती को बड़ी दया आई। उन्होंने महादेव जी से कहा—उफ़! इस भिखारी की तरफ़ तो देखो। बेचारा कितना दुःखी है। देखो तो,

कितने प्रेम से तुम्हारा नाम जप रहा है। पर एक तुम हो, कितने कठोर ! तुमने आज तक इस पर दया न की। मैंने सुना था कि लोग अब बड़े पापी हो गये हैं। वे अब देवताओं की पूजा नहीं करते। मगर नहीं, आज मालूम हुआ कि इसमें उनका कोई अपराध नहीं है। सब अपराध देवताओं का ही है। इसी आदमी को लो, बेचारे को तुम्हारा नाम लेते बरसों बीत गये, इतने पर भी अभागा पेट भर भोजन तक नहीं पाता। जब देवता ही ऐसे कठोर हो जायँगे, तब कोई काहे को उनकी पूजा करेगा।

महादेव को पार्वती की बात लग गई। वे पार्वती से बोले—असल बात क्या है, यह तुम नहीं जानतीं। जान भी नहीं सकतीं। क्योंकि तुम्हारा हृदय ही इतना कोमल है। मगर नहीं, तुम रञ्ज न करो। मैं आज ही कुछ बन्दोबस्त कराये देता हूँ, जिससे इस भिखारी का दुःख दूर हो जायगा।

इतना कह कर महादेव जी पार्वती के साथ मन्दिर में पहुँचे। माता-पिता को आते देख गणेशजी उठ कर खड़े हो गये। उन्होंने बड़े प्रेम से माता-पिता को प्रणाम किया। महादेव जी ने गणेशजी को आशीर्वाद दिया और कहा—"देखो बेटा, यह भिखारी बरसों से तुम्हारे द्वार पर बैठा और मेरा नाम जपा करता है। मगर तुमने अब तक इस पर दया नहीं की। अब ऐसा कुछ उपाय करो, जिससे इस

बेचारे का दुःख दूर हो जाय।" गणेशजी ने हाथ जोड़ कर उत्तर दिया—"अच्छी बात है पिता जी, सात दिन के भीतर उसका दुःख दूर हो जायगा। उसे कहीं न कहीं से एक लाख रुपये मिल जायँगे।"

गणेशजी का उत्तर सुन कर महादेव-पार्वती आगे चले गये।

३

इसी समय एक बनिया मन्दिर में पूजा करने आया था। वह आड़ में छिपा-छिपा महादेव जी और गणेशजी की बातें सुन रहा था। उसने सोचा, यह तो बहुत अच्छा मौक़ा है। यदि थोड़ी चतुराई से काम लूँ, तो सहज ही दो लाख का मालिक हो सकता हूँ। वह बड़ी ख़ुशी से भिखारी के सामने पहुँचा, और उसे प्रणाम कर एक तरफ़ बैठ गया। भिखारी से आज तक न तो किसी ने प्रणाम किया था, और न कोई उसके पास आकर बैठा ही था। बनिए के इस काम से भिखारी ने समझा कि यह बेशक कोई भलामानुस है। वह मन ही मन प्रसन्न हुआ और बनिए से बोला—बाबा, आप बहुत दयालु जान पड़ते हैं। कहिए, मेरे पास आने की कृपा क्योंकर हुई? आप नहीं जानते, मैं एक ग़रीब भिखारी हूँ?

बनिये को तो अपना मतलब गाँठना था; मीठेपन से बोला—आप भिखारी हैं! कौन कहता है कि आप

भिखारी हैं ? मुझे अच्छी तरह मालूम है कि आप पहुँचे हुए महात्मा हैं, और आपके दर्शन से लोगों के पाप दूर हो जाते हैं। मैं भी आपके दर्शन करने चला आया हूँ। मुझे आप से कुछ पूछना है, यदि आज्ञा हो तो पूछूँ।

भिखारी—.खुशी से पूछिए ।

बनिया—भला दिन भर में आपको कितनी भीख मिल जाती है ?

भिखारी—भई, मिलने की क्या पूछते हो, पेट के भी लाले पड़े रहते हैं। रोजाना दो-चार मुट्ठी अन्न मिल जाता है; कभी दो-चार पैसे भी मिल जाते हैं। किसी तरह दिन काट लेता हूँ।

बनिया—राम-राम ! आप जैसे महात्मा और यह कष्ट ! इस गाँव के आदमी भी क्या आदमी हैं। आपकी थोड़ी भी सहायता नहीं कर सकते ! आप कैसे यह कष्ट सह लेते हैं ? मुझे तो आप पर बड़ी दया आती है। मेरे ज़ी में आता है कि आपकी कुछ सेवा करूँ, पर कहने में डर मालूम होता है।

भिखारी—आप मेरी क्या सहायता कर सकते हैं ?

"हें-हें-हें !"—बनिया दाँत निकाल कर बोला—"मेरी इतनी हैसियत कहाँ, जो आपकी कुछ सेवा कर सकूँ। मगर एक बात है। आज से सात दिन तक आपको जो

कुछ भी मिले, वह मुझे दे दीजिए। बदले में, मैं आपको सौ रुपये दे दूँगा।

सौ रुपये का नाम सुनते ही भिखारी मारे .खुशी के उछल पड़ा। उसने सोचा, अगर सौ रुपये मिल जायँ, तो क्या कहना ! यहाँ तो सात दिन में सात आने का सामान भी न मिलेगा ! तब सौ रुपये छोड़ देना सरासर बेवक़ूफ़ी है—पूरा गधापन है।

मगर इसी समय उसे लड़की का ख़याल आ गया। मैं सौ रुपये लेकर घर पहुँचा और कमला नाराज़ हो पड़ी तो ? उसकी सलाह भी ले लेनी चाहिए। बस, यह विचार आते ही उसने बनिये को जवाब दिया—आपने मुझ पर बड़ी कृपा की, मगर मैं अभी कुछ नहीं कह सकता, सोच-समझ कर कल कहूँगा।

जब बनिया चला गया, तब भिखारी ने कमला को बुलाया और उसे सब हाल सुनाया। चतुर कमला फ़ौरन् समझ गई कि इसमें ज़रूर बनिये की कोई शैतानी है। उसने पिता से कहा—बनिया बिना अपने फ़ायदे के क्यों सौ रुपये देने चला ! ख़ैर, मैं कल उससे सब बातें तय कर लूँगी, मगर तुम बीच में न बोलना।

४

उधर बनिये का बुरा हाल था। रात भर उसके पेट में चूहे उछलते रहे। बड़ी मुश्किल से सवेरा हुआ। बनिये की

जान में जान आई। वह हाथ-मुँह धोते ही भिखारी के पास जा पहुँचा और छूटते ही बोला—आपने क्या विचार किया ?

कमला भी बनिये से निबटने को तैयार बैठी थी। बनिये की बात सुनते ही उसने जवाब दिया—सेठ जी, हम लोगों ने विचार कर लिया। मगर सौ रुपये में क्या होता है। इतना सस्ता सौदा होना मुश्किल है। माफ़ कीजिए।

कमला का उत्तर सुनते ही बनिये पर मानो बिजली गिर पड़ी। पर लाख रुपए का लालच छोड़ना भी तो कठिन था। वह दो सौ रुपए देने को राज़ी हो गया। अब तो कमला का सन्देह और भी पक्का हो गया। वह समझ गई कि बनिया ज़रूर किसी भारी लाभ के लिए ही इतने रुपए देना चाहता है। उसने जवाब दिया—सेठ जी, इतना सस्ता सौदा और कहीं होता होगा। सौ-दो सौ या हज़ार-दो हज़ार में होता ही क्या है। जो चीज़ आप कौड़ियों के मोल खरीदना चाहते हैं, वह लाख रुपए से कम की नहीं है।

यह सुनकर बनिया बहुत घबराया; परन्तु उसने अपनी कोशिश जारी रक्खी। मारे लोभ के वह अन्धा हो रहा था—उस पर लोभ का भूत सवार हो गया था। उसने सौ-दो सौ से बढ़ते-बढ़ते अन्त में पचास हज़ार लगा दिये। अब कमला ने सोचा—इतने रुपये थोड़े नहीं होते। बैठे-

ठाले इस क़ायदे को छोड़ना ठीक नहीं। उसने बनिये से कहा—ख़ैर, आप नहीं मानते तो मैं ही आपकी बात माने लेती हूँ। मगर शर्त यह है कि रुपये अभी मिलने चाहिए।

यह शर्त मञ्जूर करने में बनिये को क्या उज्र थी। वह .खुशी-.खुशी घर लौटा। उसने सोचा—पचास हज़ार देकर एक लाख लेना कुछ बुरा नहीं है। दो लाख न सही, डेढ़ लाख का मालिक तो बन ही जाऊँगा। अहा! मेरी तक़दीर भी कितनी चोखी है। सात दिन में ही पचास हज़ार का लाभ हो गया। उसने घर आते ही भिखारी के पास पचास हज़ार रुपये भेज दिये।

अब बनिया हर रोज़ भिखारी के पास जाता, और उसकी दिन भर की भीख घर ले आता। इस तरह छः दिन बीत गये। अब तो बनिये को बड़ी फ़िक्र हुई। सातवें दिन वह फिर गणेशजी के मन्दिर में पहुँचा! उसने देखा कि आज फिर महादेव-पार्वती मन्दिर में पधारे हैं। बस, वह दीवाल से कान लगा, उनकी बातें सुनने लगा। मगर उसका कान दीवाल से चिपक गया। उसने कान छुड़ाने की बहुत कोशिश की, पर कान टस से मस न हुआ। तब वह दाहिने हाथ की सहायता से कान छुड़ाने लगा। इतने में हाथ भी दीवाल से चिपक गया।

इधर महादेव जी ने गणेशजी से पूछा—"बेटा, इस भिखारी के लिए कुछ इन्तज़ाम हुआ?" गणेशजी

बोले—"जी हाँ, उसे पचास हज़ार रुपये तो दिलवा दिए हैं, बाक़ी के लिए बनिये को दीवाल से चिपका दिया है। यह बनिया बड़ा लोभी और कञ्जूस है। इसने ग़रीबों से एक-एक के चार-चार वसूल कर अपना घर बनाया है। रूपये वसूल करने में इसने ग़रीबों पर दया नहीं की। उनके बच्चे भूखों मरते रहे, पर इसने चौगुने रुपये वसूल करके भी सन्तोष नहीं किया।। इस तरह इसने एक लाख रुपयों से अपनी तिजोड़ी भर ली। ग़रीबों के माल से यह सुख नहीं उठा सकता। अब जब तक यह भिखारी को बाक़ी पचास हज़ार रुपये न दे देगा, तब तक दीवाल से ही चिपका रहेगा।"

गणेशजी की बातें सुनकर बनिए ने अपना माथा पीट लिया। उसकी आँखों से आँसू बरसने लगे! पर अब रोने से क्या होता था? अपने प्राण सभी को प्यारे होते हैं। जब उसने घर से पचास हज़ार रुपये मँगवा कर भिखारी को दे दिये, तब कहीं दीवाल से उसका पीछा छूटा।

रुपये पाने से भिखारी का दुःख दूर हो गया। उसके दिन आनन्द से कटने लगे। वह अब ऊँची हवेली में रहता है। मगर बनिये की हालत ख़राब हो गई है। वह अब उसी मन्दिर के दरवाज़े पर बैठा आने-जाने वाले लोगों से भीख माँगा करता है। सच है—"जिसकी जैसी करनी, तिसकी तैसी भरनी।"

सुखिया और दुखिया

बहुत दिन हुए, किसी शहर में एक कोली रहता था। उसके दो स्त्रियाँ थीं। दोनों के एक-एक बेटी थी। बड़ी स्त्री की बेटी का नाम था दुखिया, और छोटी स्त्री की बेटी का नाम था सुखिया। कोली छोटी स्त्री और उसकी बेटी सुखिया को बहुत चाहता था; मगर बड़ी स्त्री और उसकी बेटी दुखिया को फूटी आँखों भी न देखता था। नतीजा यह हुआ था कि छोटी स्त्री और उसकी बेटी सुखिया के दिमाग़ सातवें आसमान पर चढ़ गये थे। रुपया-पैसा उन्हीं के हाथ में रहता था और घर में उन्हीं की तूनी बोलती थी। क्या मजाल कि घर के काम-धन्धे के नाते माँ-बेटी में से कोई एक तिनका तो उठाकर यहाँ से वहाँ रख देने का नाम लेतीं। दिन भर मज़े से कचर-कचर खाना, पड़े-पड़े खाट तोड़ते रहना या फिर पुरा-पड़ौस की औरतों से गप्पें हाँकना—यही उन माँ-बेटी का काम था।

मगर बड़ी स्त्री और उसकी बेटी दुखिया की बुरी हालत थी। बेचारी घड़ी भर रात रहे उठतीं, घर झाड़ती-बुहारतीं, चौका-बर्तन करतीं, निस्तार के लिए कुएँ से पानी भर लातीं, रसोई बनातीं और जब इन कामों से छुट्टी पातीं, तो दिन भर चरखा चलाती रहतीं। तब कहीं शाम को बेचारियों को रूखा-सूखा भोजन नसीब होता। इतने पर भी सुखिया और उसकी माँ उन दुखियारियों को चैन न लेने देतीं। जब देखो तब जली-कटी सुनाती रहतीं। कोली भी ऐसा कठोर था कि सुखिया और उसकी माँ की ही तरफ़दारी करता, और जब कभी दुखिया और उसकी माँ पर हाथ चला बैठता था। मगर दुखिया और उसकी माँ चुपचाप खून के आँसू पीकर रह जातीं। जब उनका जी भर आता, तब ग़रीबिनी आँसू भरी आँखों से आसमान की तरफ़ ताकतीं और कहतीं—"हे भगवन्, तू ही हमारा मालिक है! तू ही हमारे सुख-दुःख की खबर लेने वाला है।"

कुछ दिनों बाद कोली बीमार हुआ और इस संसार से चल बसा। घर की कुल जमा-पूँजी तो सुखिया की माँ के क़ब्ज़े में थी ही, वह हाथ सिकोड़ कर बैठ रही। अब उसने दुखिया और उसकी माँ को और भी सताना शुरू किया। जब देखो तब दाँता-किलकिल मचाये रहती। मगर दुखिया और उसकी माँ औंधा सिर किये सब कुछ

सहतीं—उफ़ भी न करतीं। जब इतने पर भी सुखिया और उसकी माँ का जी न भरा, तो एक दिन उन दोनों ने दुखिया और उसकी माँ को घर से निकाल बाहर किया। अब सुखिया और उसकी माँ के पौ-बारह थे। दोनों तरह-तरह के मनमाने भोजन करतीं, अच्छे-अच्छे कपड़े पहिनती-ओढ़तीं; और यों दुखिया और उसकी माँ को जलाने की कोशिश में लगी रहतीं।

मगर दुखिया और उसकी माँ अपनी ग़रीबी में ही ख़ुश थीं। दोनों माँ-बेटी सवेरे से शाम तक गाढ़ी मेहनत करतीं, चरख़े पर सूत निकालती रहतीं, ज्यों-त्यों करके दो-चार गज़ खादी बिन डालतीं, और उसकी बिक्री से आने-दो आने की जो आमदनी हो जाती, उसी से किसी तरह अपनी गुज़र-बसर चलाती थीं। अगर कभी दुखिया इस मेहनत मशक़्क़त से घबरा उठती और कह बैठती, अब तो यह तकलीफ़ नहीं सही जाती, तो माँ उसे गोद में लेकर समझाती—"मेरी दुलारी बेटी, भगवान् की मर्ज़ी पर किसका ज़ोर है? उसने हमें दुःख सहने के लिए ही पदा किया है। इस तरह घबराने से तो अपना दुःख और भी बढ़ जायगा। उसने हमें दुःख दिया है, तो वही सुख भी देगा। उसकी दया होगी तो कभी दुःख का यह अँधेरा भी ख़तम हो जायगा, और तब हमें सुख का उजेला दिखाई देगा।"

एक दिन की बात है, दुखिया की माँ खादी बेचने बाज़ार चली गई। यहाँ दुखिया ने झोपड़ी के सामने वाले मैदान में रूई फैला कर रख दी। अभी रूई धूप खा ही रही थी कि आँधी का एक झोंका आया और रूई को उड़ा ले चला। सब रूई उड़ गई। ज़मीन पर एक फाहा भी न बचा। यह देख दुखिया रूई पकड़ने दौड़ी। मगर आँधी ने दुखिया की एक न चलने दी, वह रूई को और भी ऊँचे ले गई। अब दुखिया क्या करती ? बेचारी ज़ोर-ज़ोर से चीख़ने और रोने लगी—हाय ! हाय ! मेरी सब रूई उड़ी जा रही है। माँ लौटेगी तो मुझे जीता न न छोड़ेगी। अरे ! कोई दौड़ो, मेरी रूई बचा लो ! हाय ! अब मैं क्या करूँ ?

यह सुन आँधी बोली—दुक्खी-दुक्खी ! रोओ मत ! ज़रा मेरे साथ चलो। मैं तुम्हें इतनी रूई दूँगी कि तुमसे ढोते भी न बनेगी।

दुखिया रोती-पीटती आँधी के पीछे चली। अभी वह थोड़ी ही दूर गई थी कि रास्ते में एक गाय मिली। उसने कहा—"दुक्खी-दुक्खी ! कहाँ जाती हो ? बेटी, मेरा भी थोड़ा काम कर दो। मेरी थान मैली हो गई है, झाड़-बुहार कर साफ़ कर दो। मैं भूखी हूँ, मेरी सानी कर दो।" दुखिया रुक गई। उसने अपने आँसू पोंछ डाले और गोबर तथा कूड़ा-कचरा फेंक कर, झाड़ू से थान

झकाझक कर दी। फिर भूसा सान कर सानी तैयार की और गाय के सामने रख दी। इसके बाद बेचारी आँधी के पीछे दौड़ने लगी।

कुछ आगे चलने पर अङ्गूरों की एक बाड़ी मिली। उसने कहा—"दुक्खी-दुक्खी! कहाँ जाती हो! बेटी, मेरा भी थोड़ा काम कर दो। देखो घास-पात ने मुझे कितनी बुरी तरह हैरान कर रक्खा है। भई, इसे तो साफ़ कर दो।" दुखिया फ़ौरन् वहीं ठहर गई। उसने घास-पात उखाड़ कर बाड़ी को खूब साफ़ कर दिया और फिर आँधी का पीछा पकड़ा।

थोड़ा आगे बढ़ने पर आम का एक पेड़ मिला। उसने कहा—"दुक्खी-दुक्खी! कहाँ चली? बिटिया, मेरी भी कुछ ख़बर ले। मेरे तने को झाड़-झङ्खाड़ों ने घेर रक्खा है। बड़ी तकलीफ़ है बिटिया!" अब दुखिया क्या करती; ठहर कर पत्ती-सत्ती बटोरने और झाड़-झङ्खाड़ उखाड़ने-पुखाड़ने लगी। थोड़ी देर में आम-तला साफ़-सुथरा हो गया। अब दुखिया आँधी के पीछे बढ़ी।

मगर बेचारी को आगे चलना मुश्किल हो गया। थोड़ी दूरी पर एक घोड़ी मिली। वह बोली—"दुक्खी-दुक्खी! कहाँ चली? मेरी भी कुछ ख़बर है। बड़ी भूखी हूँ। एकाध मुट्ठी घास ही डाल दे।" दुखिया के पैर जहाँ के तहाँ रुक गये। उसने जल्दी-जल्दी दो-चार मुट्ठी घास छीली और

घोड़ी के सामने डाल दी। घोड़ी तो घास खाने लगी और दुखिया ने आँधी के पीछे दौड़ना शुरू किया।

आँधी बड़े-बड़े झाड़-झङ्खाड़, नदी-नाले और पहाड़-जङ्गल पार करती हुई न जाने कहाँ चली जा रही थी। दुखिया भी उसके पीछे उसी तेज़ी से उड़ी जा रही थी। रास्ते के काँटों-कङ्कड़ों ने उसके नन्हें-नन्हें पैर घायल कर डाले, उनसे ख़ून बहने लगा, दौड़ते-दौड़ते बेचारी पस्त पड़ गई, पर उसने हिम्मत न हारी। वह बराबर आँधी का पीछा पकड़े चली ही गई। अन्त में आँधी एक ख़ूब हरे-भरे जङ्गल में पहुँची, जहाँ एक सुन्दर महल जगर-मगर हो रहा था। आँधी ने महल पर तीन-चार चक्कर मारे और फिर एक दरवाज़े से उसके भीतर घुस गई। दुखिया भी उसके पीछे-पीछे महल में जा पहुँची।

महल बाहर से जैसा सुन्दर था, वैसे ही भीतर भी देखने लायक़ था। चारों तरफ़ बड़े-बड़े बरामदे और साफ़-सुथरे कोठे थे। बीचो-बीच एक बहुत लम्बा-चौड़ा आँगन था, जिसमें छोटा सा ख़ुशनुमा बाग़ लगा था। पेड़-पौधे फलों और फूलों के बोझ से झुके जा रहे थे। चारों तरफ़ मीठी-मीठी ख़ुशबू उड़ रही थी। एक सजी हुई दालान में एक बुढ़िया बैठी हुई थी। उसकी उमर बहुत ज्यादा हो गई थी, सिर के बाल चाँदी के समान सफ़ेद हो गये थे, चमड़े में झुर्रियाँ पड़ गई थीं, मगर शरीर से उजेला निकल रहा था।

बुढ़िया चरखा चला रही थी, तकुए की नोक से बहुत ही बारीक और चमकदार सूत निकल रहा था, जिससे आप ही आप ढेर की ढेर साड़ियाँ और धोतियाँ बिनती जाती थीं। आँधी बुढ़िया के सामने पहुँचते ही रुक गई और बोली— "दुक्खी, ये बुढ़िया माई चन्दा मामा की मौसी हैं। सुघर लड़कियों को बहुत चाहती हैं। ये तुझे ढेर की ढेर रूई देने वाली हैं।"

दुखिया ने यह बात सुनी, तो वह बुढ़िया के पैरों पर गिर पड़ी और रोती-रोती बोली—"नानी, आँधी मेरी सब रूई उड़ा लाई है। माँ घर लौटेगी, तो मुझे बिना पीटे न छोड़ेगी। मुझ पर दया करो, मेरी रूई दिलवा दो। हम लोग बहुत ग़रीब हैं नानी !"

बुढ़िया ने सिर के बाल हटाते-हटाते सामने देखा। नन्हीं-सी दुखिया को देखते और उसकी मीठी-मीठी बातें सुनते ही बुढ़िया ख़ुश हो गई। उसने दुखिया की बलैयाँ लेते-लेते कहा—"अहा बेटी ! तू ही दुखिया है ? फूल सा मुखड़ा कैसा कुम्हला गया है। दौड़ते-दौड़ते बहुत थक गई होगी बेटी ! अच्छा, अब एक काम कर। उस कोठरी में बहुत सी अच्छी-अच्छी साड़ियाँ रक्खी हैं। तू उनमें से एक ले ले और गङ्गा जी में नहा आ। फिर मैं तेरी रूई दिलवा दूँगी।"

दुखिया कोठरी में पहुँची, तो वहाँ रङ्ग-बिरङ्गी और

चमकीली साड़ियों के ढेर देख कर चकित हो गई। बेचारी ने ऐसी साड़ियाँ पहनी तो क्या, कभी देखी भी न थीं। हमेशा से खादी के फटे-पुराने टुकड़े पहनती आई थी। ये साड़ियाँ छूने में भी उसे डर मालूम होता था। तब उसने एक मोटी सी साड़ी उठा कर गङ्गा जी की राह ली। उसे ज्यादा नहीं चलना पड़ा। गङ्गा जी महल को छूती हुई ही बह रही थीं। दुखिया ने सिर झुका कर उन्हें प्रणाम किया, और एक डुबकी लगाई तो उसका रूप कुछ का कुछ हो गया। तमाम देह ऐसी हो गई, जैसे सोने की बनी हो। उसमें ख़ूबसूरती इतनी आ गई कि देवताओं की बेटियाँ भी देखतीं तो लजा कर रह जातीं। तब दुखिया ने दूसरी डुबकी लगाई। इस बार उसकी पोर-पोर में हीरे-मोती के सुन्दर-सुन्दर गहने भर गये।

इसके बाद दुखिया साड़ी पहन कर महल में लौट आई, और बुढ़िया से बोली—"नानी, अब मेरी रूई दिलवा दो। माँ मेरी राह देख रही होगी।" बुढ़िया ने कहा—"मेरी भोली बेटी! क्या भूखी ही चली जायगी? उस कोठरी में पूरी-कचौरी और मेवा-मिठाई रक्खी है। जा, कुछ खा ले। फिर तेरी रूई दिलवा दूँगी।"

दुखिया कोठरी में पहुँची तो क्या देखती है कि सोने के बड़े-बड़े थाल पूरी, कचौरी, खीर, अचार, चटनी, साग-भाजी, मगद, जलेबी, बरफ़ी, बालूशाही, मेवा और

न जाने क्या-क्या अट्ट-सट्ट से भरे धरे हैं। बेचारी ने ये चीज़ें खाईं तो क्या कभी देखी भी न थीं। वह तो हमेशा चना-चबैना पर ही गुज़र करने वाली थी। ये बड़े-बड़े थाल देखते ही घबरा गई और अपना पुराना भोजन तलाश करने लगी। इतने में उसकी नज़र एक कोने पर पड़ी, जहाँ एक टोकनी में कुछ भुने हुए चने रक्खे थे। उन्हें देखते ही दुखिया ख़ुश हो गई। वह दो-चार मुट्ठी चने चबा और एक लोटा ठण्ढा पानी पीकर बाहर निकल आई।

दुखिया को आये बहुत देर हो चुकी थी। उसे रह-रह कर माँ की याद आती थी। इसलिए उसने बुढ़िया से कहा—"नानी, अब रूई दिलवा दो। वहाँ माँ घबरा रही होगी।" यह सुन बुढ़िया तिनक कर बोली—"ऐ है! इसे घर जाने की पड़ी है! अरी पगली! इतनी दूर चल कर आई है, थक गई होगी। थोड़ी देर सुस्ता ले। रूई कहाँ भगी जाती है। जा, उस कोठरी में सो रह।"

दुखिया कोठरी में पहुँची। वहाँ सोने के बहुत से पलङ्ग पड़े हुए थे, जिन पर रेशमी बिस्तर बिछ रहे थे, और मोतियों की झालरें टँकी हुई मसहरियाँ झकाझक हो रही थीं। दुखिया ने सपने में भी ऐसे बिस्तर न देखे थे। बेचारी को टूटी खाट भी नसीब न होती थी, वह ऐसे बिस्तरों पर सोना क्या जानती। एक कोने में एक मामूली

पलङ्ग पड़ा था, जिस पर दरी तक न थी। दुखिया उसी पर जा लेटी। पर उसकी आँखों में नींद कहाँ थी? जब तक लेटी रही, माँ की बात ही सोचती रही। आखिर उसे चैन न पड़ा। थोड़ी ही देर में वह बाहर निकल आई, और बुढ़िया से बोली—"नानी, तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, अब मुझे न रोको। माँ तेरी तलाश में गाँव भर की धूल छान रही होगी।"

बुढ़िया बिगड़ कर बोली—"हाय-हाय! इस छोकरी ने तो मेरी जान खा ली। जब से आई है, जाने की धुन में पागल हो रही है। अच्छा जा, उस कोठरी में से एक पिटारी निकाल ला!"

दुखिया कोठरी के भीतर गई, तो उसकी अक़्ल हैरान हो गई। सैकड़ों पिटारियाँ तर-ऊपर रक्खी थीं। छोटी से छोटी, बड़ी से बड़ी, रङ्ग-बिरङ्गी और सुन्दर से सुन्दर। अब दुखिया कौन सी पिटारी ले! आखिर देख-भाल करते-करते उसने एक छोटी और रद्दी सी पिटारी पसन्द की। वह उसी को उठा कर बुढ़िया के पास ले आई। बुढ़िया ने कहा—"अब मेरे पास क्यों आई? माँ-माँ पुकार रही है, तो जाती क्यों नहीं! इसी पिटारी में तेरी रूई रक्खी है। लेती जा, अपनी अम्माँ को दे देना।"

दुखिया ने बड़े प्रेम से बुढ़िया को प्रणाम किया, पिटारी सिर पर रक्खी और अपनी राह ली। रास्ते में

वही घोड़ी मिली और दुखिया को देख कर बोली—"अहा ! दुक्खी बेटी, तू आ गई, अब मैं तुझे क्या दूँ ? अच्छा ले, यह बछेड़ा लेती जा !" यह कह कर घोड़ी ने दुखिया को एक बछेड़ा दिया। उसके पङ्ख सोने के थे, जो उजेले में जगर-मगर होते थे। बछेड़ा उन्हें फैला कर आसमान में ऐसे उड़ता था, जैसे हवाई जहाज़।

दुखिया बछेड़े को लेकर चली। कुछ आगे बढ़ने पर आम का पेड़ मिला। दुखिया को देख कर बोला—"अहा ! दुक्खी बेटी, तू लौट आई ? अब मैं तुझे क्या दूँ ? अच्छा ले, ये थोड़े से आम लेती जा।" यह कह कर उसने थोड़े से आम गिरा दिये, जो सोने के थे और धूप में चम-चम कर रहे थे।

दुखिया आम बटोर कर आगे बढ़ी, तो अङ्गूरों की बाड़ी मिली। वह दुखिया को देख कर बोली—"अहा ! दुक्खी बेटी, आ गई। अब मैं तुझे क्या दूँ ? अच्छा इधर आ। अङ्गूर के कुछ गुच्छे तोड़ ले।"

दुखिया ने थोड़े से गुच्छे तोड़ लिये। पर उसका हाथ लगते ही सब अङ्गूर मोती बन गये। उनसे उजेले की किरणें निकलने लगीं। अङ्गूर लेकर दुखिया आगे बढ़ी। अब गाय मिली। वह दुखिया को देखते ही बोली—'अहा ! दुक्खी बेटी, तू आ पहुँची ? मेरी अच्छी लल्ली।

रात को माँ-बेटी ने पिटारी खोली, तो उसमें से एक सुन्दर राजकुमार निकल आया। दुखिया की माँ ने हँसी-ख़ुशी से उसके साथ दुखिया की शादी कर दी। अब झोपड़ी की जगह महल बन गया। राजकुमार गौ के दूध से कुल्ला करता और परदार घोड़े पर बैठकर आसमान में घूमता-फिरता। दुखिया राजरानी बनकर महल में रहती, छप्पन भोजन करती और गुदगुदे पलङ्ग पर पड़ी-पड़ी पान चबाती।

मगर सुखिया की माँ दुखिया का यह ठाट-बाट देखती, तो मारे डाह के जल-भुनकर ख़ाक हुआ करती। एक दिन उसने सुखिया से कहा—"अभागिन! दुखिया तो रानी बन गई, पर तू अब तक सुखिया की सुखिया बनी है। निगोड़ी! तू भी कुछ उपाय कर! मैं बाज़ार जाती हूँ, तू चन्दा मामा की मौसी के पास जा। देख, इतना धन लाना कि दुखिया और उसकी माँ भी झख मार कर रह जाय।"

यह कहकर सुखिया की माँ तो बाज़ार चली गई, और सुखिया घर के पिछवाड़े रूई फैला कर बैठ रही। थोड़ी देर बाद आँधी आई और रूई उड़ाकर ले चली। सुखिया की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। वह पगली के समान आँधी के पीछे दौड़ी।

रास्ते में वही गाय मिली। सुखिया को देखकर

बोली—"सुक्खी-सुक्खी ! कहाँ चली ? मेरा भी काम करती जा ! मेरी थान बुहारती जा, मुझे सानी देती जा !" सुखिया ने एक पत्थर उठाया, तड़ से गाय को मारा और कहा—"राँड़ ! तू मुझे टोकने वाली कौन ? मैं चन्दा मामा की मौसी के पास जा रही हूँ, यह बीच में आ कूदी !"

अङ्गूरों की बाड़ी ने, आम के पेड़ ने और घोड़ी ने भी सुखिया को बुलाया। मगर उसने जवाब देना तो दूर रहा, किसी की तरफ़ देखा तक नहीं। वह तो नाक की सीध में आँधी का पीछा पकड़े जा रही थी, और बीच-बीच में गालियाँ भी बकती जाती थी—"इनका सत्यानाश हो, सभी मेरे पीछे पड़े हैं, मानों मैं इनके बाप की नौकरी करती हूँ, और यह अभागिनी आँधी देखो, मेरे पैर छिले जाते हैं, मगर यह एकदम चली जा रही है।"

थोड़ी देर बाद आँधी उसी महल में जा पहुँची। सुखिया भी उसके पीछे घुसती-घुसती चली गई। सामने ही बुढ़िया को देखकर बोली—"क्यों री डोकरी ! तू ही चन्दा मामा की मौसी है ? मगर तू यह क्या कर रही है ? चरखा चला रही है ? अच्छा-अच्छा ! अब देर न कर, जल्दी से साड़ियाँ, गहनें, अशर्फ़ियाँ और हीरे-मोती ले आ ! फिर चरखा चलाती रहना।"

बुढ़िया भौंचक्की सी होकर सुखिया को देखने लगी।

सुखिया बिगड़ कर बोली—"दौड़ते-दौड़ते मेरे पैरों में छाले पड़ गये, और यह शैतान की ख़ाला टुकुर-टुकुर देख रही है। ला-ला! जल्दी कर! मुझे देर हो रही है।"

बुढ़िया ने कहा—"बेटी! तू बात करना भी नहीं जानती। तेरी माँ ने क्या तुझे यही सिखाया है?"

इतना सुनना था कि सुखिया झपटी। उसने चरख़ा मचमचाते हुए कहा—"दुखिया को इतनी सारी चीज़ें दे डालीं, और मेरे साथ ये बातें! देती है कि नहीं, नहीं तो चरख़ा-सरखा तोड़ कर फेंक दूँगी।"

बुढ़िया बेचारी डर कर बोली—"अरे भई, सब दूँगी। ज़रा सब्र तो कर! उस कोठरी में अच्छी-अच्छी साड़ियाँ रक्खी हैं, जो तुझे पसन्द हो, ले ले, और जल्दी से गङ्गा जी में स्नान कर आ।"

कहने भर की देर थी कि सुखिया लपक कर कोठरी में जा पहुँची। उसने साड़ियों को इस तरह उलटना-पुलटना शुरू किया, जैसे उनसे मुद्दत से दुश्मनी रही हो। कभी यह उठाती थी कभी वह; कभी इसे देखती थी कभी उसे। कभी इसे पटकती थी कभी उसे; कभी यह पसन्द करती थी कभी वह। पर उसका मन न भरता था। बड़ी देर तक वह साड़ियों की फेंक-फाँक करती रही। अन्त में ज़री की एक बढ़िया साड़ी लेकर बाहर निकली और गङ्गा जी में नहाने चली।

सुखिया गङ्गा की जल-धारा में एक डुबकी लगा कर बाहर निकली, तो उसका रूप निखर गया, दुनिया की तमाम ख़ूबसूरती मानों उसी के शरीर में आ समाई। सुखिया की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। उसने दूसरी डुबकी लगाई, तो उसका शरीर गहनों से भर गया। सुखिया मारे ख़ुशी के पगली हो गई। उसने सोचा, जितनी डुबकियाँ लगाऊँगी उतना ही फ़ायदा होगा—न जाने क्या-क्या मिल जायगा। अहा, मैं कितनी भाग्यवान् हूँ। अब देखूँगी करम-फूटी दुखिया मेरे सामने किस गिनती में है। बस, वह लगी ग़ोते पर ग़ोते मारने। थक जाने पर ही उसने डुबकियों का पीछा छोड़ा। बाहर निकली तो क्या देखती है कि उसका सब शरीर एड़ी से चोटी तक दाद, खाज, खुजली और मस्सों से भरा हुआ है, गहनों का नाम भी नहीं है, सिर के बाल ऐसे हो गये हैं, जैसे सन के लच्छे; रूप-रङ्ग कोयले के समान काला-कलूटा हो गया है, मानों वह मरघट की डाइन हो। अब सुखिया हाय-हाय करती, अरे बाप रे, अरी अम्मा री, चीख़ती, गङ्गा मैया और चन्दा मामा की मौसी की सात पीढ़ियों को पानी देती और दाद-खाज को खुजाती हुई महल में लौटी।

उसे देखते ही बुढ़िया बोली—अरी अभागिन! तू कब तक डुबकी मारती रही! इतना लालच क्यों किया? अब रोने-पीटने से क्या होगा?

सुखिया ने हलक़ फाड़ कर कहा—आग लगे तुझमें और तेरी गङ्गा मैया में। मुझे जो देना हो, झटपट दे दे।

बुढ़िया बोली—कुछ खायेगी-पियेगी भी या भूखी ही चली जायगी? चल उठ, देर मत कर! उस कोठरी में मिठाइयाँ और पूरियाँ धरी हैं। जो खाना हो, खा-पी लो।

मिठाई-पूरी का नाम सुनते ही सुखिया तीर की तरह कोठरी में जा घुसी। खाने-पीने का वह सामान देखते ही सुखिया उस पर टूट पड़ी। कभी पूरियाँ खाती थी, तो कभी मिठाइयाँ और कभी मेवे चबाने लगती। खाते-खाते सुखिया का पेट भर गया, पर मन न भरा। जी चाहता था कि थोड़ी सी खीर और खा लूँ, एकाध रसगुल्ला और इमरती भी चख लूँ। इस तरह उसने कुछ खाया, ढेर भर इधर-उधर गिराया और तमाम फ़र्श गन्दा कर दिया। फिर हाथ-मुँह धोकर बाहर निकल आई और बुढ़िया से बोली—अब कुछ देगी भी या बातों में ही टरकाती रहेगी?

बुढ़िया ने कहा—थोड़ी देर आराम तो कर ले।

सुखिया तमक कर बोली—तेरे आराम की ऐसी-तैसी! मुझे पिटारी दे दे, तो मैं जाऊँ। ला-ला, जल्दी कर! अब उठती है कि नहीं?

बुढ़िया ने कहा—अच्छा जा, उस कोठरी में बहुत से पिटारे धरे हैं, जो तुझे पसन्द हो, लेकर चल दे।

सुखिया धम् से कोठरी में आ पहुँची, और लगी पिटारे इधर-उधर फेंकने। वह एक-एक पिटारा उठाकर पटकती और बड़बड़ाती थी—"राँड को साँप डँस ले! इतने पिटारे जमा कर रक्खे हैं, अब मैं किसे पसन्द करूँ?" अन्त में एक बहुत सुन्दर और बड़ा सा पिटारा लेकर वह बाहर निकली। उसने बुढ़िया की तरफ़ देखा तक नहीं, चुपचाप घर की राह ली।

रास्ते में घोड़ी मिली। वह सुखिया को देखकर बोली—"कौन? सुखिया? अरे! यह तो डाइन है!" यह कह कर वह सुखिया की तरफ़ झपटी। सुखिया "अरे दैया रे! मार डाला!" की पुकार मचाती हुई भागी। आम का पेड़ मिला, तो वह "सुखिया-सुखिया! वाह री चुड़ैल!" कह कर हँस पड़ा। अङ्गूरों की बाड़ी मिली, तो वह "ओहो री सुखिया! ओहो री भुतनी!" कह कर हँस पड़ी। गाय मिली तो वह "यह सुखिया है या डाकिन?" कह कर उसे मारने दौड़ी। बेचारी सुखिया गिरती-पड़ती और रोती-पीटती घर पहुँची।

यहाँ सुखिया की माँ बड़ी ख़ुशी से सुखिया की राह ताक रही थी। उसने घर लीप-पोत कर झक कर रक्खा था। द्वार पर बन्दनवार बाँध रक्खे थे। वह ख़ुद द्वार पर कलस लिये खड़ी थी कि सुखिया अब आती है—अब आती है! अभी घर में माया भरी जाती है! मगर जब

सुखिया आई तो उसे देखकर वह एकबारगी चीख़ उठी—हे भगवान्! यह क्या हुआ! अरी राँड़! तेरा सत्यानाश हो! यह क्या कर आई? हाय! अब मैं क्या करूँ?

सुखिया के शरीर में आग लग गई। वह मुँह बना कर, हाथ चमका कर बोली—सत्यानाश तेरा हो—तेरे बाप का हो! राँड! तूने ही तो मुझे भेजा था। अब चीख़ती क्यों है?

सुखिया की माँ झुँझला कर बोली—"अरी! पिटारा भीतर ले चल! कोई देख लेगा। कौन जाने, इसी में सब दौलत भरी हो!" वह दोनों पिटारा भीतर ले गई। उसका वज़न देखकर सुखिया की माँ ने कहा—अरे! यह तो बहुत वज़नी है! ज़रूर ख़ूब धन भरा हुआ है!

रात हुई तो सुखिया की माँ बोली—"बेटी, पिटारा तो खोल! देखूँ, क्या-क्या लाई है।" सुखिया ने बिगड़ कर कहा—"मेरी कमाई में हिस्सा बँटाने वाली तू कौन? मैं अपना अकेले में खोल लूँगी!"—यह कह कर वह एक अलग कोठरी में चली गई।

सुखिया ने पिटारा खोला तो उसमें से उसका दूल्हा बाहर निकल आया। सुखिया ने माँ को पुकारा—अम्मा-अम्मा! पैर टूटे!

अम्मा बोली—बेटी-बेटी! गहने पहनो!

सुखिया ने पुकारा—अम्मा-अम्मा! कमर टूटी!

अम्मा बोली—बेटी-बेटी ! गहने पहनो !

सुखिया ने पुकारा—अम्मा-अम्मा ! पेट फटा !

अम्मा बोली—बेटी-बेटी ! गहने पहनो !

सुखिया ने पुकारा—अम्मा-अम्मा ! हाथ टूटे !

अम्मा बोली—बेटी-बेटी ! गहने पहनो !

सुखिया ने पुकारा—अम्मा-अम्मा ! गला घुटा !

अम्मा बोली—बेटी-बेटी ! गहने पहनो !

सुखिया की माँ के आनन्द का ठिकाना न था। वह समझ रही थी कि सुखिया का दूल्हा सुखिया को गहने पहना रहा है। धीरे-धीरे सुखिया चुप हो गई, तो उसने समझा कि बेटी अब सो गई है, इसलिए वह भी बिस्तर पर जा लेटी। मगर उसकी आँखों में नींद कहाँ! कब सवेरा हो, कब सुखिया को गहनों से लदी देखूँ—इसी ख़ुशी में उसने रात बिता दी। ज्यों-त्यों करके सवेरा हुआ, घड़ी भर दिन चढ़ आया, मगर सुखिया न जागी। तब माँ दरवाज़े पर पहुँची और किवाड़ों में धक्का मारकर बोली—अरी बेशरम ! मुँह-जली ! सोती ही रहेगी ! कुछ ख़बर भी है, पहर भर दिन चढ़ आया है ?

मगर किवाड़ न खुले। माँ मारे ग़ुस्से के जल मरी और ज़ोर-ज़ोर से किवाड़ पीटने लगी। तब भी किवाड़ न खुले। फिर क्या था—दे लात, दे घूँसे, किवाड़ चरमरा कर टूट गये। किवाड़ों का खुलना था कि एक अजगर

फुफकार मारता हुआ सर से बाहर निकल गया। यह देखते ही सुखिया की माँ घबरा कर भीतर पहुँची, तो क्या देखती है कि कोठरी में कहीं सुखिया का पता नहीं है, उसकी जगह केवल थोड़ी सी हड्डियाँ पड़ी हैं।

"अरी मेरी बेटी! मेरी लाड़ली! तू कहाँ गई? हाय! मैं लुट गई!"—सुखिया की माँ माथा पीट-पीट कर रोने लगी।

सोनपरी

बहुत पुराने ज़माने की बात है, शहर बग़दाद में एक सौदागर रहता था। वह ऐसा वैसा सौदागर नहीं था, उसके पास इतनी दौलत थी कि बड़े-बड़े बादशाह उससे क़र्ज़ लेते थे। सौदागर का कारबार बहुत बढ़ा-चढ़ा था, दुनिया के बड़े-बड़े शहरों में उसकी दूकानें थीं, घर के सैकड़ों जहाज़ चलते थे, रोज़ लाखों का लेन-देन होता था।

शहर के बाहर, नदी के किनारे एक ख़ूबसूरत महल बना हुआ था। महल इतना ऊँचा था कि आसमान को चूमता था। उसमें आठ पहर चौंसठ घड़ी नौकरों-चाकरों की धूम मची रहती थी। जब देखो, तब चौकी-पहरे लगे रहते थे। महल के चारों तरफ़ एक बहुत बड़ा और मनोहर बाग़ लगा हुआ था, जिसमें रङ्ग-बिरङ्गे ख़ुशबूदार फूल फूलते थे, और चिड़ियाँ मीठे-मीठे गाने गाया करती थीं। सौदागर उसी महल में अपने बाल-बच्चों के साथ चैन से रहता था।

सौदागर के एक लड़का भी था, जिसका नाम महमूद था। महमूद इतना ख़ूबसूरत था कि उसकी ख़ूबसूरती देख देवता भी शरमा जाते थे। महमूद कुछ दिनों में पढ़-लिख कर सयाना हुआ, तो सौदागर को उसके विवाह की चिन्ता हुई। उसने अपने कुछ होशियार नौकर बुलाये और उनसे कहा—"देखो जी, महमूद अब विवाह के लायक़ हो गया है। तुम उसके लिए ऐसी लड़की ढूँढ़ कर लाओ, जो ख़ूब पढ़ी-लिखी हो, ख़ूबसूरत इतनी हो कि दुनिया की कोई लड़की उसके सामने न ठहर सके। चाहे जितनी मेहनत उठानी पड़े, चाहे जितना ख़र्च हो जाय, परवा नहीं, मगर लड़की हो नम्बर एक की। समझे न?" सौदागर के हुक्म की देर थी कि उसके आदमी चारों तरफ़ लड़की की तलाश में निकल पड़े।

महमूद ने यह हाल सुना तो वह मारे ख़ुशी के फूला न समाया। हमेशा यही सोचा करता, अब क्या है, दुनिया में जो लड़की सबसे ज्यादा ख़ूबसूरत होगी, उसी के साथ मेरा विवाह होगा। एक दिन उसने सपने में देखा कि एक लड़की उसके सिरहाने खड़ी है, और उससे घुल-घुल कर बातें कर रही है। उसका रङ्ग सोनहला है, ख़ूबसूरत इतनी है कि उसके रूप की ज्योति से तमाम कोठा झलमला रहा है। महमूद उसे पकड़ने दौड़ा, तो उसकी आँख खुल गई। वह घबरा कर उठ बैठा, और

आँखें मल-मल कर चारों तरफ़ देखने लगा। मगर वहाँ क्या रक्खा था। वह बेचैन होकर बाहर निकल आया और बग़ीचे में टहलने लगा। इस समय उसके ध्यान में एक ही बात थी—वह लड़की कौन थी, सपने में क्यों दिखाई दी, न जाने कहाँ की रहने वाली है?

थोड़ी देर बाद सवेरा हो गया। इतने में बाग़ की मालिन फूल चुनने आई। सामने महमूद को देख कर ताज्जुब से बोली—छोटे सरकार, आज इतने तड़के बग़ीचे में क्यों टहल रहे हैं। चेहरे पर यह हवाइयाँ क्यों उड़ रही हैं?

महमूद ने जवाब दिया—क्या बतलाऊँ मालिन मौसी, आज मैंने सपने में एक लड़की देखी है, बिल्कुल सोनहले रङ्ग की, बहुत ही ख़ूबसूरत। उसी की बात सोच रहा हूँ मौसी! ख़ुदा जाने वह कौन है, कहाँ की रहने वाली है।

मालिन ने कुछ सोच कर कहा—ठीक तो है। मैं समझ गई। वह सोनपरी होगी।

महमूद का मुखड़ा चमक उठा। उसने मालिन को कुछ अशर्फ़ियाँ देते हुए कहा—तब तो मौसी, तुम उसे ज़रूर जानती हो। वह कहाँ की रहने वाली है?

मालिन—सरकार, मैं उसे जानती ही नहीं, आपको बतला भी सकती हूँ। मगर एक शर्त पर।

महमूद—वह क्या?

मालिन—आपको उसी के साथ शादी करनी पड़ेगी।

महमूद—वाह! यह खूब कहा! अरी मौसी, उसके साथ शादी करने का इरादा न होता, तो उसकी फ़िक्र ही क्यों करता? तुम मुझे फ़ौरन् उसके पास ले चलो। मैं अभी शादी करूँगा।

मालिन ने हँस कर कहा—इतनी जल्दी! बड़ा मुश्किल काम है सरकार! मगर हर्ज नहीं, मैं उसे अभी जादू के ज़ोर से बुलाती हूँ और आपको उसकी एक झलक दिखाये देती हूँ। अच्छा, आइए मेरे साथ।

मालिन की एक बेटी थी। वह बहुत खूबसूरत थी और सिर से पैर तक सोनहले रङ्ग की थी। दिन-रात फूलों के बग़ीचे में रहा करती थी, जिससे उसकी खूबसूरती और भी बढ़ गई थी। मालिन की बड़ी इच्छा थी कि उसका विवाह महमूद के साथ हो। वह महमूद को लेकर अपने घर पहुँची। उस समय मालिन की बेटी बग़ीचे में फूलों के साथ खेल रही थी। मालिन ने उसकी तरफ़ इशारा करते हुए महमूद से कहा—वह देखो, वही सोनपरी है। मालिन की बेटी महमूद को देखते ही एक झुरमुट में जा छिपी।

मालिन की बेटी को देखते ही महमूद ख़ुश हो गया। बोला—अरे! यह तो वही है। मौसी, मैं ज़रूर इसके साथ विवाह करूँगा। बताओ, अब मैं क्या करूँ?

मालिन ने कहा—जाकर अपने अब्बा से कहो कि मैं

सोनपरी को छोड़ कर किसी दूसरी लड़की के साथ शादी न करूँगा। देखो, वे क्या कहते हैं।

महमूद दौड़ा-दौड़ा बाप के पास पहुँचा। उसके मुँह से सब हाल सुन कर सौदागर बहुत घबराया। बोला—पागल लड़के! इन्सान को भी कहीं परियाँ मिलती हैं? सपने पर क्यों मरता है। मैंने तेरे लिए बहुत अच्छी लड़की ढूँढ़ने का इन्तज़ाम किया है। तुझे मालूम नहीं, चारों तरफ़ अपने नौकर-चाकर गये हैं?

महमूद बिगड़ कर बोला—अब तो मैं सोनपरी के साथ ही शादी करूँगा। अगर वह न मिली तो अपनी जान खो दूँगा।

अब सौदागर क्या करता? एक ही लाड़ला बेटा था, उसके लिए वह सब कुछ करने को तैयार था। उसने फिर बहुत से आदमी बुलाये और उनसे कहा—जाओ भाई, सोनपरी की तलाश करो। मिल जाय तो अच्छा है। लड़के की ज़िद ही तो ठहरी।

यह देख कर मालिन बहुत ख़ुश हुई। मन में सोचने लगी—अगर महमूद के साथ मेरी बेटी की शादी हो गई तो क्या कहना। फिर तो यह करोड़ों की दौलत, ये ख़ूबसूरत बाग़-बग़ीचे, ये आसमान को चूमने वाले महल, सब-कुछ अपना ही है। मगर उसकी बेटी का हाल कुछ और ही था। वह हृदय से महमूद को चाहती और उसे किसी

तरह के भुलावे में नहीं डालना चाहती थी। इसलिए उसे माँ की यह चालबाजी पसन्द न आई। मगर बेचारी माँ के सामने लाचार थी। उसे माँ के इशारों पर चलना ही पड़ता था।

उन्हीं दिनों की बात है। कोहकाफ़ में परियों का एक प्रतापी बादशाह रहता था। उसके सात बेटियाँ थीं। छः बेटियों की शादियाँ तो हो चुकी थीं, मगर छोटी बेटी अब तक बिना ब्याही थी। यही छोटी बेटी सोनपरी थी। सोनपरी ने यह इरादा कर लिया था कि शादी करूँगी तो उसी मर्द के साथ, जो सबसे ज़्यादा ख़ूबसूरत और गुणी होगा, नहीं तो कुमारी ही रह जाऊँगी। बीसों जगह से सँदेशे आ चुके थे, मगर सोनपरी का मन न भरता था। बेचारे बादशाह को बड़ी फ़िक्र थी।

एक दिन सोनपरी ने सवेरे जागते ही बादशाह से कहा—अब्बा, मैं जिसकी तलाश में थी, वह मिल गया। उसका नाम महमूद है। वह एक सौदागर का बेटा है। सपने में इतना ही मालूम हुआ। अगर नींद न खुलती तो उसका पता भी पूछ लेती।

बादशाह ने फ़ौरन् बहुत से परीज़ाद बुलाये और उनसे कहा—जाओ भई, जल्दी महमूद का पता लगाओ। उसी के साथ सोनपरी की शादी होगी। देखो, ख़ाली हाथ न लौट आना।

परीज़ाद महमूद की तलाश में चल पड़े।

अजब परेशानी थी। सौदागर के आदमी सोनपरी की खोज में भटक रहे थे, और परीज़ाद महमूद की तलाश में मुल्कों-मुल्कों की ख़ाक छान रहे थे। आख़िर एक पहाड़ पर एक परीज़ाद और सौदागर के एक आदमी की मुलाक़ात हो गई।

सौदागर के आदमी ने पूछा—कहो भाई, क्या हाल है?

परीज़ाद ने जवाब दिया—हाल क्या बतलाऊँ साहब, हमारे बादशाह के सोनपरी नाम की बेटी है। वह महमूद से शादी करना चाहती है। महमूद किसी सौदागर का बेटा है। बहुत दिन से उसे ही ढूँढ़ रहा हूँ, मगर उसका पता ही नहीं चलता।

सौदागर का आदमी हँस कर बोला—यह तो बड़े मज़े की मुलाक़ात हुई। मैं सोनपरी की तलाश में मारा-मारा फिर रहा हूँ। मैं ही सौदागर का आदमी हूँ। महमूद की क्या बात कहूँ साहब, लाखों में वैसा लड़का न मिलेगा।

अब क्या था, दोनों बहुत ख़ुश हुए। दोनों ने शादी की बातचीत पक्की की और वहीं लगन लिख कर एक-दूसरे को दे दी। इसके बाद दोनों हँसते-हँसते अपने-अपने घर लौटे। सौदागर का आदमी परीज़ाद से सोनपरी की एक तसवीर भी लेता आया।

सौदागर और महमूद की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। तमाम महल में धूम मच गई। बड़े ठाठ-बाट से शादी की तैयारियाँ होने लगीं। मालिन ने यह ख़बर सुनी, तो वह दौड़ी-दौड़ी महमूद के पास पहुँची, और घबराई हुई आवाज़ में बोली—यह क्या सुन रही हूँ सरकार?

महमूद ने जवाब दिया—ठीक तो है मौसी! बहुत जल्दी सोनपरी के साथ मेरी शादी होगी!

मालिन ने पूछा—आपने उसकी तसवीर भी देखी है?

महमूद—"हाँ, क्यों नहीं! ख़ूबसूरत लड़की है। लो तुम भी देखो। क्यों, है न यही?" यह कह कर महमूद ने तस्वीर मालिन के हाथ में दे दी।

मालिन ग़ौर से तस्वीर देख कर बोली—अजी तोबा करो! यही सोनपरी है? हरगिज़ नहीं—यह तो जादू की तस्वीर है। हुज़ूर, दुनिया में मेरे सिवा कोई सोनपरी को नहीं जानता! बुरा न मानिए, साफ़ कहे देती हूँ, आपको धोखा दिया जा रहा है।

महमूद हँस कर बोला—मौसी, यह चकमा किसी और को देना। मैं ख़ूब जानता हूँ, यही सोनपरी है। मैं इसे सपने में अच्छी तरह देख चुका हूँ।

मालिन अछता-पछता कर घर लौट आई। वह बड़ी देर तक यही सोचती रही कि अब क्या करूँ—महमूद के साथ कैसे अपनी बेटी की शादी करूँ! अन्त में एक

तरकीब उसके ध्यान में आई। वह मौक़ा पाकर फिर महमूद के पास पहुँची। उस समय महमूद गहरी नींद में पड़ा था। सोनपरी की तस्वीर उसकी छाती पर रक्खी हुई थी। मालिन ने धीरे से तस्वीर खींच ली और उसकी जगह पर फूलों की माला रख दी। इसके बाद वह लम्बे-लम्बे क़दम बढ़ा कर घर पहुँची और अपनी बेटी को सोनपरी की तस्वीर दिखला कर बोली—देख, यही सोनपरी है! कितनी ख़ूबसूरत है! इसके सामने भला महमूद तुझे क्यों पूछने लगा? मगर हर्ज नहीं, अगर मैंने तेरे साथ ही महमूद की शादी न कराई, तो मुझे मालिन न कहना। देख, अभी कैसी हिकमत लड़ाती हूँ।

इसके बाद मालिन सोनपरी की तस्वीर काली करने लगी। यह देख उसकी बेटी ने घबरा कर कहा—अम्मा-अम्मा! यह क्या करती हो! कितनी सुन्दर तस्वीर है! मत बिगाड़ो। अगर मैं सोनपरी के बराबर नहीं हूँ, तो क्या हर्ज है। ऐसी ही बनी रहूँगी। तस्वीर बिगाड़ने से क्या होगा?

इतना सुनना था कि मालिन तमक कर बेटी के पास पहुँची और उसे एक ठूँसा मार कर गरज कर बोली—ख़बरदार कम्बख़्त, जो फिर कभी मेरे बीच में बोली। तेरे लिए ही तो यह नटखट कर रही हूँ, और तू ही ये बातें करती है।

थोड़ी देर में मालिन ने तमाम तस्वीर काली और ख़ौफ़नाक बना डाली। फिर उसे लेकर वह दबे-पाँव महमूद के कोठे में पहुँची। महमूद अब भी गहरी नींद में था। मालिन ने चुपके-चुपके माला हटा कर तस्वीर महमूद की छाती पर रख दी। इसके बाद वह घर लौट आई।

जब सवेरा हुआ तो तस्वीर का यह हाल देख कर महमूद को बड़ा ताज्जुब हुआ। वह मन ही मन सोचने लगा—क्या मालिन का कहना सच है। फिर उसने मालिन को बुलवाया, और तस्वीर उसके हाथ में देकर कहा—मौसी, देखो तो, रात भर में ही यह तस्वीर क्या से क्या हो गई है?

मालिन मुस्करा कर बोली—हुज़ूर, मैंने तो कल ही कह दिया था कि यह जादू की तस्वीर है। आपको धोखा दिया जा रहा है। मेरे सिवा सोनपरी को कोई नहीं जानता।

महमूद ने रञ्जीदा होकर कहा—अब क्या करूँ मौसी, शादी की बात पक्की हो गई है।

मालिन दिलासा देकर बोली—कोई हर्ज नहीं। आप शादी करने जाइए। मगर उस जादूगरनी को भूल कर भी न देखिए, नहीं तो मैं नहीं जानती, आप फ़ौरन अन्धे हो जायँगे। इसके बाद जैसा होगा, देखा जायगा।

अब महमूद के रञ्ज का क्या कहना। बारात चलते

ही उसने अपनी आँखों पर पट्टी बाँध ली। वह जब तक ससुराल में रहा आँखों पर पट्टी बाँधे रहा। उसने सोनपरी से बात तक न की। इसी हालत में सोनपरी को लेकर वह घर लौटा और सब से पहले मालिन के पास पहुँचा। मालिन ने पूछा—क्यों सरकार, शादी हो गई?

महमूद ने जवाब दिया—हाँ मौसी, शादी तो हो गई। मगर मैं बराबर आँखों पर पट्टी बाँधे रहा। यहीं आकर खोली है।

मालिन ख़ुश होकर बोली—बहुत अच्छा किया सरकार। मैंने सब पता लगा लिया है। आपकी दुल्हिन डाइन है। मुझे डर है कि किसी दिन वह आपको चट न कर जाय। आप ख़ूब होशियार रहिए। आँखों की पट्टी भर न खुलने पावे।

अब महमूद और भी घबराया। बोला—मौसी, क्या मेरी जान नहीं बच सकती?

मालिन ने जवाब दिया—आप बेखटके रहिए। डाइन आपका बाल भी बाँका नहीं कर सकती। मगर मैं जैसा कहूँ, वैसा ही करते जाइए।

महमूद ने आँखों से पट्टी न खोलने की क़सम खा ली। वह सोनपरी से दूर ही दूर रहता था। यह देख बेचारी सोनपरी हाय-साँसें भरती और अपनी क़िस्मत को कोसती थी। महमूद के माँ-बाप भी बहुत परेशान

थे। बेटे से बहुत कुछ पूछते थे कि हीरे सी दुल्हिन पाकर भी तेरा यह क्या हाल है? मगर वह हमेशा गुमसुम ही रहता था।

एक दिन मालिन ने महमूद से कहा—सरकार, किसी से कहने की बात नहीं है। मुझे मालूम हुआ है कि डाइन आपको खाने की फ़िक्र में है। अगर आप अपनी खैरियत चाहते हैं, तो उसे फ़ौरन कहीं बन्द कर दीजिए।

महमूद तो मालिन का ग़ुलाम हो ही रहा था। उसकी बात मानने में उसे क्या उज़्र था। उसने सोनपरी को उसी समय एक अँधेरी कोठरी में बन्द करवा दिया। नौकरों को सख्त ताकीद कर दी कि वे कोठरी पर मुस्तैदी से पहरा दें और डाइन को एक मिनट के लिए भी बाहर न निकलने दें। बेचारी सोनपरी दिन-रात उसी कोठरी में पड़ी रहती और अपने ख़ुदा को याद किया करती थी। एक बाँदी सुबह-शाम आती और उसे खाना-पानी दे जाती थी।

इस तरह रहते-रहते महमूद की तबियत ऊब गई। एक दिन उसने मालिन से कहा—मौसी! सोनपरी के लोभ ने मुझे बरबाद कर दिया! यह भी कोई ज़िन्दगी है! ख़ुदा ने आँखें दी हैं, मगर मैं अन्धा बना फिरता हूँ। अब तो जी में आता है कि ज़हर खाकर सो रहूँ। अगर हो सके तो मुझे इस मुसीबत से बचाओ। जो कहोगी, इनाम दूँगा।

मालिन बोली—सरकार! आपने सोनपरी से दग़ा किया है, यह उसी की सज़ा है। मैंने जो लड़की दिखलाई थी, वही सोनपरी है, कितनी ख़ूबसूरत है, मानों सोने की पुतली है। अगर उससे शादी कर लो, तो पलक मारते यह मुसीबत काफ़ूर हो जाय।

महमूद ने कहा—शादी तो मौसी, मैं आज कर लूँ, मगर कहीं डाइन और भी नाराज़ हो गई तो?

मालिन फीके मन से बोली—अब यह तुम जानो। मुझे क्या, मैं तो तुम्हारे ही भले की कहती हूँ।

यह कह कर मालिन ने रास्ता लिया।

दूसरे दिन सौदागर ने महमूद से कहा—बेटा, बसरे की दूकान बैठी जा रही है। सुना है, वहाँ का मुनीम अपना हाथ कर रहा है। मैं अकेला आदमी क्या-क्या करूँ? तुम हाथ पर हाथ धरे बैठे हो।

यह सुनते ही महमूद बहुत ख़ुश हुआ। बोला—अब्बा, आप फ़िक्र न करें। मैं कल ही बसरे चला जाऊँगा। आज मेरे जाने की तैयारी करा दीजिए।

महमूद की यात्रा की तैयारी होने लगी। यह ख़बर सोनपरी ने सुनी, तो वह बहुत घबराई। सोचने लगी—अब मैं क्या करूँ, जो पति का साथ न छूटे। रात को वह पहरेदारों को कुछ दे-दिला कर महमूद के कमरे में पहुँची

और उसके पैर पकड़ कर बोली—मैंने सुना है कि आप बसरा तशरीफ़ लिए जा रहे हैं ?

महमूद चुपचाप आँखें बन्द किये लेटा था और न जाने क्या-क्या सोच रहा था। ज्योंही उसने सोनपरी की आवाज़ सुनी, त्योंही वह चौंक कर उठ बैठा और चीख़ कर बोला—अरे! मुझे न खाओ। तुम्हारे पैर पड़ता हूँ। मैं ख़ुद ही कल परदेश चला जाऊँगा।

सोनपरी क्या जानती थी कि उसका पति उससे इस क़दर डरता है। पति की आवाज़ सुनते ही मानों उस पर वज्र गिर पड़ा! बेचारी रोती हुई कमरे से बाहर निकल गई।

दूसरे दिन सवेरा होते ही महमूद अपनी गठरी-मुठरी सँभाल घर से बाहर निकला और जहाज़ पर जा बैठा। अब मल्लाह लाख कोशिशें करते हैं, मगर जहाज़ टस से मस नहीं होता। तब उन्होंने घबरा कर महमूद से पूछा—सरकार, आप अच्छी साइत देखकर चले हैं या नहीं ?

महमूद ने जवाब दिया—चला तो साइत देखकर ही हूँ।

मल्लाह—तब जहाज़ क्यों नहीं चलता ? अच्छा, माँ-बाप की आज्ञा ले ली है ?

महमूद—उनके हुक्म से तो जा ही रहा हूँ।

मल्लाह—ताज्जुब है ! अच्छा, बीवी से भी पूछ लिया है ?

महमूद—उससे तो नहीं पूछा !

मल्लाह—तभी ! अच्छा, अब उनसे भी पूछ आइए।

अब महमूद पर वज्र गिरा। मगर लाचारी थी। वह डरते-डरते सोनपरी के सामने पहुँचा और दूर से ही बोला—शाहज़ादी, मैं परदेश जा रहा हूँ। तुमसे इजाज़त लेने आया हूँ।

सोनपरी ने जवाब दिया—इजाज़त कैसी ? मैं आपके साथ चलूँगी।

महमूद ने घबरा कर कहा—तुम साथ चलकर क्या करोगी ? परदेश में बड़ी-बड़ी तकलीफ़ें होती हैं।

सोनपरी—मुझे तकलीफ़ों की परवा नहीं, आपका साथ भर होना चाहिए।

महमूद—मैं तुम्हें नौलखा हार लाऊँगा।

सोनपरी—मुझे नौलखा हार न चाहिए, फ़क़त आपका साथ चाहिए।

अब महमूद क्या करता, उसे मजबूर हो सोनपरी को अपने साथ चलने की आज्ञा देनी पड़ी। नौकर-चाकर सोनपरी का सामान ठीक-ठाक करने लगे।

मालिन ने यह ख़बर सुनी, तो वह घबराई हुई महमूद के पास दौड़ी आई और बोली—सुना है, डाइन आपके साथ जा रही है ?

महमूद—जा तो रही है।

मालिन—ग़ज़ब हो गया। अब आपकी ख़ैरियत नहीं। रास्ते में वह बिना बदला लिए न रहेगी।

महमूद—क्या करूँ मौसी, मैंने शादी क्या की, अपने गले में फाँसी लगा ली। अब तो तुम्हारा ही भरोसा है। किसी तरह मेरी जान बचाओ।

मालिन—कोई हर्ज नहीं सरकार, इस मौक़े से भी आप फ़ायदा उठा सकते हैं। रास्ते में होशियारी से रहिए। जब जहाज़ कुछ दूर निकल जाय, डाइन को हाथ-पैर बँधवा कर नदी में डुबा दीजिए। चलिए झगड़ा खतम हुआ।

महमूद—अच्छी बात है। ऐसा ही करूँगा।

मालिन ख़ुश होकर चली गई।

यहाँ महमूद सोनपरी के साथ जहाज़ में बैठ कर बसरे की तरफ़ चला। थोड़ी दूर जाने पर उसने अपने पाँच-छः मुँहलगे नौकर बुलाये, उन्हें बहुत सा धन दिया और उनसे कहा—जिसे तुम मेरी बीबी समझते हो, असल में वह डाइन है। क्या जाने, रास्ते में वह हम तुम सबको खा जाय। बस, अब तुम देर न करो, चटपट उसे एक रस्से से बाँध कर नदी में फेंक दो।

नौकरों ने ऐसा ही किया। सोनपरी कितना ही चिल्लाई, उसने कितने ही बार महमूद को पुकारा, पर वहाँ उसको सुनने वाला कौन था? नौकरों ने उसे नदी में फेंक ही दिया। धमाके की आवाज़ सुनते ही महमूद ने मारे

ख़ुशी के आँखों की पट्टी खोल डाली। वह उसी तरफ़ देखने लगा, जहाँ सोनपरी पानी में छोड़ी गई थी। इतने में जहाज़ एक झटके के साथ रुक गया, और जहाँ सोनपरी गिरी थी, वहाँ कमल का एक ख़ूबसूरत फूल निकल आया। महमूद उस फूल को देख कर बहुत डरा और बोला—अरे! यह फूल कैसा? अभी तो यहाँ कुछ नहीं था।

नौकरों ने कहा—जाने भी दीजिए सरकार! यह उसी डाइन की करामात है।

सोनपरी के छः बहिनें और थीं, जो उमर में उससे बड़ी थीं। उस दिन वे परियों और जिन्नों के बादशाह सुलेमान की मजलिस में नाच रही थीं। एकाएक उनके पैरों के घुँघरू खिसक गये। बस, उन्होंने नाचना गाना बन्द कर दिया। वे आपस में बातें करने लगीं—यह तो बड़े ताज्जुब की बात है। ऐसा तो कभी नहीं हुआ। आज घुँघरूँ क्यों गिरे? जान पड़ता है, छोटी बहिन सोनपरी किसी बड़ी मुसीबत में फँस गई है। महमूद ने उसके साथ दग़ा किया है। अच्छा, चल कर पता तो लगाना चाहिए।

यह कह कर छहों परियाँ अपने सोने के रथ पर जा बैठीं। रथ बड़े ज़ोरों से आसमान में चक्कर काटने लगा। थोड़ी ही देर में परियों की नज़र कमल के उस फूल पर जा पड़ी। उनका रथ घर-घर करता हुआ नदी पर उतर आया। परियाँ ग़ोता मार कर बेहोश सोनपरी को बाहर

निकाल लाईं। उन्होंने सोनपरी को रथ में लिटाया और महमूद को श्राप दिया—आँख के अन्धे, गाँठ के पूरे! तेरी यह करतूत! हमारी बेक़ुसूर बहिन के साथ यह बेदर्दी! जा, तू कोढ़ी हो जा!

महमूद की आँखें खुल गईं। मगर अब क्या होता था। उधर परियों ने सोनपरी को लेकर अपनी राह ली, इधर महमूद कोढ़ी हो गया, उसके तमाम बदन में घाव हो गये और उनसे ख़ून तथा पीब की धारें बहने लगीं। बेचारा रोता हुआ घर लौट आया।

सौदागर ने महमूद की बहुत दवा-दारू की। जादू-टोने में भी बेशुमार ख़र्च किया, मगर महमूद को रत्ती भर लाभ न पहुँचा। अन्त में ज्योतिषियों ने उसे बतलाया—जनाब, यह परियों की बद दुआ है। आप लाख कोशिश कीजिए, कोई फ़ायदा न होगा। हाँ, अगर कोई महमूद के घाव चूस ले, तो अलबत्ता फ़ायदा हो सकता है। मगर चूसने वाला न बचेगा।

भला किसी को क्या पड़ी थी, जो महमूद के लिए अपनी जान गँवाता? माँ-बाप, भाई-बहिन और नेही-नातेदार में से कोई भी महमूद के घाव चूसने को तैयार न हुआ। मालिन की बेटी ने यह ख़बर सुनी, तो वह बेचैन हो उठी। उसने माँ से कहा—तूने मेरे लिए नाहक़ ही महमूद और सोनपरी को सताया। तू ही इस ख़राबी की

जड़ है। अब मैं महमूद के घाव चूसूँगी और उसे मौत के मुँह से बचाऊँगी।

मालिन यह सुनते ही जल मरी। गरज कर बोली—कम्बख़्त, तेरा सत्यानाश हो! तेरे लिए ही मैंने इतनी कोशिश की, और तू ही ऐसी बातें करती है। ख़बरदार! अब महमूद का नाम न लेना, नहीं तो मुझसे बुरा कोई न होगा। मरने दे अभागे को! मैं तेरे लिए और कोई अच्छा-सा दूल्हा तलाश दूँगी।

मगर मालिन की बेटी न मानी। वह दौड़ी-दौड़ी महमूद के पास पहुँची और उससे बोली—"मेरी माँ ने यह पाप किया है। मैं इस पाप पर अपनी जान दूँगी। कोई आपके घाव नहीं चूसता, न चूसे। मैं चूसूँगी और आपको बचाऊँगी।"—यह कह कर वह महमूद के घाव चूसने लगी।

सचमुच महमूद अच्छा हो गया। उसके शरीर में पहले की वही रौनक़ आगई। मगर बेचारी मालिन की बेटी चल बसी। लोगों ने उसे एक तालाब के किनारे दफ़ना दिया।

जहाँ मालिन की बेटी दफ़नाई गई थी वहाँ कुछ दिनों में एक नारियल का पेड़ निकल आया। तालाब सौदागर के घर के पास ही था, इसलिए महमूद की नज़र रोज़ ही उस पेड़ पर पड़ती थी। उसे देख वह एक ठण्ढी साँस खींचकर रह जाता था। मन ही मन सोचने लगता था—

हाय ! मैं कितना बदनसीब हूँ ! न सोनपरी मिली, न मालिन की बेटी ! मिला क्या ? ज़िन्दगी भर रोना और पछताना ।

एक दिन की बात है। रात आधी से ज्यादा बीत चुकी थी। एकाएक महमूद की नींद खुल गई। वह कोठे से बाहर निकल पड़ा और टहलते-टहलते उसी नारियल के पेड़ के नीचे जा पहुँचा। अभी वह खड़ा ही हुआ था कि उस पर पानी की तीन-चार बूँदें गिर पड़ीं। उसने चौंक कर सिर ऊपर उठाया, तो खिली हुई चाँदनी में क्या देखा कि पेड़ पर एक निहायत ही ख़ूबसूरत औरत बैठी है, और उसकी आँखों से आँसू बह रहे हैं। उसकी ओढ़नी नीचे तक लटक रही थी। महमूद ने फ़ौरन उसका एक सिरा पकड़ लिया। स्त्री चौंक कर बोली—कौन ? महमूद ! मेरे मालिक ! तुमने बेफ़ायदे मुझे छू लिया।

महमूद ने कहा—हाँ, मैं महमूद ही हूँ ! मगर तुम कौन हो ? परी या देवी ? और इस झाड़ पर बैठी-बैठी क्यों रो रही हो ?

स्त्री ने जवाब दिया—हाय ! तुम मुझे क्यों नहीं पहचानते ! मैं तुम्हारी वही पत्नी हूँ, जिसे तुमने उस दिन नदी में फेंकवा दिया था। यह मालिन की बेटी तुम पर प्यार करती थी। बेचारी ने तुम्हारे लिए जान दे दी। मुझे इस पर दया आती है। मैं इसे उसी दिन से ज़िन्दा करने

की कोशिश में हूँ। आज यह ज़िन्दा होने वाली थी। यहाँ मेरी छहों बहिनें आ रही थीं। मगर तुमने मुझे छूकर सब गुड़ गोबर कर दिया। अब वे न आवेंगी।

महमूद ओढ़नी खींचते हुए बोला—मेरी रानी, मुझे माफ़ करो। मेरी वह बेवक़ूफ़ी भुला दो। नीचे उतर आओ, अब मैं तुम्हें अपनी आँखों की पुतली बना कर रखूँगा।

सोनपरी नीचे उतर आई। महमूद उसे बड़े प्रेम से अपने महल में ले गया। अब दोनों के दिन आनन्द से कटने लगे।

एक दिन रात को अचानक महमूद की नींद खुल गई, तो उसने देखा कि सोनपरी अपने पलङ्ग पर नहीं है। महमूद को बड़ी फ़िक्र हुई। चार बजते-बजते सोनपरी लौट आई और चुपचाप लेट रही। महमूद ने उससे कहा तो कुछ नहीं, मगर वह बड़ी देर तक यही सोचता रहा कि आख़िर ऐसी रात में यह गई कहाँ थी। क्या जाने रोज़ ही जाती हो। अच्छा कल जाँच करूँगा।

दूसरे दिन महमूद सोने का बहाना करके चुपचाप लेट रहा। आधी रात बीतते ही सोनपरी धीरे से उठी। उसने महमूद की जाँच की कि कहीं वह जाग तो नहीं रहा है। जब उसे भरोसा हो गया कि यह गहरी नींद में है, तो वह हलके पैरों बाहर निकल गई। अब महमूद भी उठा और चुपके-चुपके उसके पीछे-पीछे चला। बाहर

पहुँचने पर क्या देखता है कि सोने के रथ पर सोनपरी की वही छै बहिनें बैठी हैं, सोनपरी भी उनके पास जा बैठी है, और रथ धीरे-धीरे ऊपर उठ रहा है। महमूद लपक कर रथ के नीचे पहुँचा, और उसके एक पाये से चिपक गया।

रथ हवा से बातें करने लगा। थोड़ी ही देर में वह बादशाह सुलेमान के दरबार में जा पहुँचा। सातों बहिनें नीचे उतरीं, और मजलिस में नाचने-गाने लगीं। महमूद भी एक खम्भे की ओट में छिपकर तमाशा देखने लगा। नाच-गान में और सब बातें तो ठीक थीं, मगर तबला ठीक नहीं बज रहा था, बजाने वाला काना था, और बीच-बीच में ताल गड़बड़ कर देता था। महमूद तबला बजाने में बहुत होशियार था। उसे तबलची की बेवक़ूफ़ी बर्दाश्त न हुई। वह धीरे से आगे बढ़ा, और काने से तबला छीन कर बजाने लगा। महमूद ने यह काम इतनी सावधानी से किया कि किसी को कुछ पता न चला। उसने इतनी चतुराई से बाजा बजाया कि नाच-गान में जान आगई। सुलेमान तो उसका बाजा सुनकर इतने ख़ुश हुए कि उन्होंने उसे अपने गले का हार ही दे डाला। इसके बाद जल्सा खतम हो गया, और महमूद उसी हिकमत से घर लौट आया। वह सोनपरी के पहुँचने के पहले ही पलङ्ग पर जा लेटा और इस तरह बन गया, मानों बड़ी देर से गहरी नींद में सो रहा है। सोनपरी कुछ न

समझ सकी। उसने यही ख़याल किया कि हज़रत उसी तरह नींद में ग़ाफ़िल हैं।

दूसरे दिन फिर ठीक वक़्त पर रथ आया, और महमूद पहले दिन की नाईं ही उसके पाये से जा चिपटा। आज एक परी को कुछ शक हो गया। उसने कहा—"आज रथ भारी जान पड़ता है। ऐसा तो पहले कभी नहीं हुआ।" यह सुनते ही सोनपरी ने घबरा कर नीचे की तरफ़ नज़र डाली, तो देखा कि महमूद लटका चला आ रहा है। सोनपरी की जान सूख गई। उसने महमूद से कहा—"तोबा-तोबा! तुमने भी क्या ग़ज़ब किया! अगर साथ ही चलना था, तो कहा क्यों नहीं? यह क्या चोर की तरह चले आये?" इसके बाद सब परियों ने उसे खींच-खाँच कर ऊपर बिठा लिया।

सातों बहिनें महमूद को रथ में ही छोड़कर दरबार में पहुँचीं। सोनपरी ने हाथ जोड़ कर सुलेमान से कहा—हुज़ूर, मेरा क़ुसूर माफ़ हो! मैंने एक इन्सान के साथ शादी कर ली है।

सुलेमान ताज्जुब से बोले—इन्सान के साथ! क्या परीज़ाद नहीं थे? मगर कोई हर्ज नहीं। मैं तुम्हारे पति को देखना चाहता हूँ।

सोनपरी फ़ौरन बाहर आई और महमूद को सुलेमान के सामने ले गई। महमूद को देख कर सुलेमान बहुत

ख़ुश हुए और बोले—यह तो तुमने बहुत अच्छा किया सोना। अच्छा, आज से तुम्हारा नाचना-गाना खतम हुआ। तुम अपने घर जाओ और मज़े से पति के साथ रहो। मैं तुमसे बहुत ख़ुश हूँ और तुम्हें वह रथ इनाम देता हूँ। अगर और कुछ चाहती हो तो कहो।

सोनपरी हाथ जोड़ कर बोली—हुज़ूर ! मालिन की बेटी ज़िन्दा हो जाती तो× × ×

सुलेमान ने हँस कर कहा—तुम बहुत ख़ुश होतीं। क्यों, यही न ? अच्छा जाओ, जब तुम वहाँ पहुँचोगी, तो उसे ज़िन्दा पाओगी।

सोनपरी ख़ुशी-ख़ुशी महमूद के साथ रथ पर सवार हुई और तालाब के किनारे पहुँची। वहाँ नारियल का पेड़ ग़ायब हो चुका था और मालिन की बेटी एक तरफ़ बैठी रो रही थी। सोनपरी ने दौड़ कर उसे गले लगा लिया। फिर दोनों उसे बड़े आदर के साथ अपने महल में लिवा ले गये।

एक दिन सोनपरी ने महमूद से कहा—यह मालिन की बेटी है तो क्या हुआ, इसने देवी का दिल पाया है। तुम्हें कितना चाहती है। यह इसी का काम था, जो तुम्हारे लिए अपनी जान दे बैठी। मेरी राय है, तुम इसके साथ भी शादी कर लो।

बस, मालिन की बेटी के साथ भी महमूद का विवाह हो गया और सब लोग सुख से रहने लगे।

अशरफ़ सौदागर

हिन्दुस्तान के उत्तर में तातार नाम का एक देश है। वहाँ की राजधानी का नाम है—ताशकन्द। बहुत बरस पहले वहाँ अशरफ़ नाम का एक सौदागर रहता था। वह बहुत धनवान आदमी था। कहते हैं कि उसके समान मालदार आदमी उस देश में दूसरा न था। वह बड़ा दयालु, दानी, परोपकारी और धर्मात्मा था। उसके दरवाज़े पर जो पहुँच जाता, वह ज़रूर सहायता पाता। यहाँ तक कि उसके दिन ही फिर जाते। इन गुणों से दूर-दूर तक अशरफ़ का नाम फैल गया था। बड़े-बड़े रईस, सरदार और बादशाह तक मौक़े-मौक़े पर अशरफ़ से सहायता माँगा करते थे।

एक दिन शाम के समय एक भिखमङ्गा ताशकन्द में आया। वह भीख माँगता-माँगता अशरफ़ की हवेली के सामने जा पहुँचा। उस वक़्त अँधेरा हो गया था, घर-घर दिये जल चुके थे। अशरफ़ की हवेली तो मारे रोशनी के

दया की है ! दुखिया चन्दा मामा की मौसी के पास से यह सब ले आई है । कैसी-कैसी चीज़ें हैं, बहिन ! तू भी कुछ ले, और मेरी सुखिया को दे दे । अच्छा, बेटी सुखिया, तू ही बता, तू क्या-क्या लेगी ?"

इतना सुनना था कि सुखिया की माँ जल उठी; मुँह मटका कर और अँगुलियाँ चटका कर बोली—"भगवान् ने तुम पर दया की है, तो मेरी बला से ! आग लगे तेरी दौलत में ! क्या हम भूखों मरती हैं, जो हमें अपना धन दिखलाने आई है ! चार चीज़ें मिल गईं, तो इतराती फिरने लगी, चोट्टी कहीं की । यह ग़रूर किसी और को दिखलाना, मुझसे बात की तो हाँ, कलमुँही का मुँह ही मसल डालूँगी । तेरा सत्यानाश हो, तेरी दौलत का सत्यानाश हो ! राँड ! पापिन ! मर भी नहीं जाती !"

दुखिया की माँ ने कहा—बहिन ! बिगड़ती क्यों हो । मैं तो अपनी समझ कर आई थी । मैं भला क्यों ग़रूर करूँगी !

सुखिया की माँ गरज कर बोली—अरी लुच्ची ! अब जाती है कि नहीं ! सुखिया, अरी सुखिया ! कहाँ मर गई राँड ! ज़रा झाड़ू तो लेती आ !"

दुखिया की माँ गई थी प्रेम जतलाने, ये गालियाँ सुनीं तो बेचारी को बड़ा दुःख हुआ । बेचारी मन मार कर घर लौट आई ।

जीती रह ! भगवान् तुझे सुखी रक्खे। अब मैं तुझे क्या दूँ ! अच्छा ले, यह बछिया लेती जा।"

दुखिया बछिया लेकर चली, तो परदार बछेड़ा बोला—"बेटी, तू थक गई होगी, कहाँ तक चलेगी ! मुझ पर बैठ जा, यह सामान भी मुझ पर लाद दे। मैं दिन भर में तुझे घर पहुँचा दूँगा।" यह सुनते ही दुखिया बछेड़े पर जा बैठी और वह हवा से बातें करने लगा।

यहाँ दुखिया की माँ का बुरा हाल था। वह गाँव भर में उसे ढूँढ़ती फिरती थी। जो मिलता था, उसी से पूछती थी—"तुमने मेरी दुखिया को तो नहीं देखा ! अभागिनी न जाने कहाँ चली गई। अब मैं उसे कहाँ ढूँढ़ूँ ! भगवान् जाने कहाँ भूलती-भटकती फिर रही होगी।" इतने में क्या देखती है कि दुखिया रूप और गहनों के उजेले से जगमगाती हुई परदार घोड़े पर उड़ी चली आ रही है। उसे देखते ही उसकी माँ खिल उठी, ताज्जुब से बोली—अरी ! तू कहाँ गई थी ? मैं तुझे कब से ढूँढ़ रही हूँ। यह सब कहाँ से उठा लाई ?

दुखिया ज्योंही घोड़े से नीचे उतरी, त्योंही माँ ने उसे गले लगा लिया। दुखिया ने माँ को सब हाल सुना दिया। वह मारे ख़ुशी के फूली न समाई और दुखिया को साथ ले दौड़ी-दौड़ी सुखिया की माँ के पास पहुँची। बोली—"बहिन ! बहिन ! सुखिया कहाँ है ? भगवान् ने हम पर

जगर-मगर हो रही थी। भिखमङ्गा हवेली की ख़ूबसूरती देखकर दङ्ग रह गया। वह आप ही आप कहने लगा—"ओफ़! मुल्कों-मुल्कों घूम फिरा, मगर आज तक ऐसा महल देखने में न आया। इस मकान का मालिक ज़रूर बड़ा भाग्यवान् है। ख़ुदा की मेहरबानी ही तो है, किसी को उसने ऐसे-ऐसे महल मकान दिये हैं, और किसी को रात में आराम करने के लिए दो हाथ की झोपड़ी तक नहीं दी। कोई दूध-मलाई खाता है, तो कोई दिन भर भीख माँगने पर भी पेट भर खाना नहीं पाता। वाहरे ख़ुदा।

अशरफ़ का पहरेदार दरवाज़े पर खड़ा था और भिखमङ्गे की बातें सुन रहा था। अशरफ़ जैसा दयालु और धर्मात्मा था, उसके नौकर-चाकर भी वैसे ही थे। भिखमङ्गे की बातें सुनकर पहरेदार को दया आगई। वह फ़ौरन भिखमङ्गे को अपने मालिक के सामने ले गया।

अशरफ़ अपने बैठकख़ाने में मौजूद था। उसके आस-पास और भी कई आदमी बैठे हुए थे। यहाँ-वहाँ की गपशप हो रही थी। बैठकख़ाना ख़ूब सजा हुआ था। दीवालों पर अच्छी-अच्छी तस्वीरें लगी हुई थीं। छत की चाँदनी में बड़े-बड़े चमकदार हाँडी-फ़ानूस लटक रहे थे। उनमें जो मोमबत्तियाँ जल रही थीं, उनके उजेले से तमाम बैठकख़ाना झिलर-मिलर हो रहा था। जगह-

जगह सोने-चाँदी की कुर्सियाँ रक्खी थीं, जिनमें हीरे-मोती जड़ रहे थे। यह ठाट-बाट देखकर भिखमङ्गा भौंचक सा रह गया। वह मारे डर के थर-थर काँपने लगा। पहरेदार के मुँह से भिखमङ्गे की बातें सुनकर अशरफ़ ने उससे कहा—"मेरे भाई, डरो मत! मैं किसी की बुराई नहीं करता—किसी को नुक़सान नहीं पहुँचाता। जब तुम्हारी क़िस्मत तुम्हें यहाँ तक ले आई है, तो फ़ायदे में ही रहोगे। ख़ुशी से बैठो।"

इसके बाद अशरफ़ ने अपने दोस्तों से कहा—मेरी क़िस्मत देखकर भिखमङ्गे को ताज्जुब हुआ है। शायद आप लोगों को भी होता होगा। मैं कैसे इतना मालदार हो गया हूँ, यह मेरे सिवा कोई नहीं जानता। मैं आज आप लोगों को अपने धनवान् होने की कहानी सुनाना चाहता हूँ। इसलिए आप लोग यहीं खाना खाइए और मेरी कहानी सुनिए।

थोड़ी देर में नौकर ने भोजन तैयार हो जाने की ख़बर दी। सब लोग भोजन करने को तैयार हुए। अशरफ़ दया कर भिखमङ्गे को भी साथ लेता गया। उसने कई दिन से पेट भर भोजन न पाया था। आज खाने की मज़ेदार चीज़ें सामने देख उससे न रहा गया। उसने ख़ूब डटकर खाना खाया। पान-तमाखू खाने-पीने के बाद सब लोग फिर उसी बैठकख़ाने में आ जमे। अशरफ़ ने कहा—"मैं

इतना मालदार हूँ—यह देख लोगों को बड़ा ताज्जुब होता है, और है भी यह ताज्जुब की बात। यह भेद-भरी कहानी मेरे सिवा कोई नहीं जानता। आप उसे सुनेंगे तो ताज्जुब करेंगे। सच तो यह है कि ख़ुदा बड़ा मिहरबान है। उसी की मिहरबानी है, जो आप मुझे इस हालत में देख रहे हैं। उसकी मिहरबानी से पलक मारते क्या से क्या हो सकता है—यह सुनने लायक़ है। अच्छा, तो सुनिए—

"मैं तिब्बत का रहने वाला हूँ। शहर लासा में मेरा घर था। अब्बा का इन्तक़ाल पहले ही हो चुका था। माँ ने ही मेरा लालन-पालन किया था। मेरा एक भाई भी था, उसका नाम था महबूब! घर में बड़ी ग़रीबी थी। माँ मेहनत-मजूरी करके जो कुछ लातीं, उसी से हम लोगों की गुज़र होती थी। हमारे दिन बड़े मुश्किल से क़टते थे। अगर किसी दिन माँ को मजूरी न मिलती, तो हम लोगों को मुट्ठी भर चने और दो घूँट पानी पर ही दिन बिताना पड़ता था। माँ उस दिन अब्बा की याद करती और फूट-फूट कर रोने लगती थी। ऊपर से महबूब उसे और भी तङ्ग करता था। वह बड़ा ही खाऊ और मतलबी था। दिन भर इधर-उधर की चुग़लियाँ खाना और पुरा-पड़ौस के लड़कों से लड़ना-झगड़ना यही उसका काम था। मतलब यह कि महबूब का स्वभाव बहुत खोटा था, और माँ उससे हमेशा हैरान रहती थी।

धीरे-धीरे हम लोग बड़े हुए। एक दिन माँ ने हम दोनों से कहा—'बेटा, अब मेरा बुढ़ापा आ गया। हाथ-पैर काम नहीं देते। मैंने तुम लोगों को पाल-पोस कर बड़ा कर दिया। अब तुम भी कमाने-खाने लायक़ हो गये। इसलिए चार पैसे पैदा करो, तो मुझे भी कुछ सुख मिले।' मैंने उसे जवाब दिया—'तू बहुत ठीक कहती है। हम लोग कल सवेरे ही किसी दूसरे शहर को नौकरी की तलाश में जायँगे। तू हमारे जाने की तैयारी कर दे।'

सवेरा हुआ। माँ ने हम दोनों भाइयों को चार-चार रोटियाँ और थोड़े-थोड़े आलू देकर कहा—'बेटा होशियारी से जाना। रास्ते में लड़-झगड़ न बैठना। बेटा, मुझ बुढ़िया को न भूल जाना।' हम लोग माँ को सलाम कर चल पड़े। रास्ता चलते-चलते शाम हो गई। अब बड़े ज़ोरों से भूख लगी। हम लोग एक पेड़ के नीचे बैठ कर पेट-पूजा करने की सोचने लगे। महबूब ने मुझसे कहा—भाई, अभी मुझे आप अपनी रोटियाँ खिलाइए। कल मेरे हिस्से में से खाइए। नहीं तो दोनों बचा-खुचा जूठन कहाँ बाँधे फिरेंगे।

मैंने जवाब दिया—खाओ न! मना कौन करता है?

हम दोनों भाई खाना खाने लगे। महबूब बढ़-बढ़ कर हाथ फटकारने लगा। जब तक मैंने एक रोटी खाई, तब

तक वह तीनों गटक बैठा और पानी पीकर डकराने लगा। मैं भूखा ही रह गया।

अब दूसरे दिन महबूब का नम्बर आया। मगर वह मुँह बना कर एक तरफ़ जा बैठा और चुपचाप रोटियाँ खाने लगा। मैंने उससे कहा—'भाई, मैं भी भूखा हूँ। कुछ मुझे भी दो।' यह सुन महबूब बिगड़ कर बोला—'तेरे बाप का मुझे क्या देना है? तूने मुझे अपना हिस्सा क्यों खिलाया? मैं तुझे मनाने थोड़े ही गया था। अब अपनी बेवक़ूफ़ी पर रो-रोकर पछता। महबूब तेरे माफ़िक़ गधा नहीं है।'

मैंने उससे कहा—अच्छा भई, मत खिला। मगर गालियाँ क्यों बकता है? मैं तो पहले ही जानता हूँ कि तू अव्वल दर्जे का बेहूदा, धोखेबाज़ और बेईमान है। अगर मेरी बात मान तो ये ऐब छोड़ दे। नहीं तो जहाँ जायगा वहीं तकलीफ़ उठायेगा।

इतना सुनना था कि महबूब ने उछल कर मेरा गला पकड़ लिया। मैं गिर पड़ा। तब उस पापी ने पास ही से काँटे उठा कर मेरी आँखों में छेद दिये। इसके बाद वह न जाने कहाँ चला गया।

मेरी आँखें जाती रहीं। मेरे चारों तरफ़ अँधेरा छा गया, मानो मैं अँधेरे के गहरे समुद्र में डूब गया। मारे दर्द के मैं छटपटाने लगा। कहाँ जाऊँ, क्या करूँ—यह

मुझे सूझ ही न पड़ता था। टटोलता-टटोलता मैं जङ्गल में भटकने लगा। आँखों में तो दर्द था ही, पेट में अलग उछल-कूद मच रही थी। ऐसा जान पड़ता था कि अब न बचूँगा। पर ख़ुदा की मिहरबानी कौन जानता है? मैं बच गया और आज इस तरह आप लोगों के बीच में बैठा हूँ।

मैं ग़रीब माँ-बाप का बेटा उस जङ्गल में आँखें खोकर सच पूछो तो मर ही चुका था। पर कैसे ताज्जुब की बात है कि आज मैं आप जैसे अमीर दोस्तों के बीच में बैठा हूँ, अटूट धन का मालिक हूँ और सब तरह का सुख भोगता हूँ। इसे ख़ुदा की मेहरबानी न कहूँ तो क्या कहूँ? हाँ, तो उस जङ्गल में मैं बड़ी देर तक भटकता फिरता रहा। इतने में चिड़ियों की फरफराहट सुन पड़ने लगी। ऐसा मालूम होने लगा कि शाम हो रही है। कहाँ तो मैं दिन भर ख़ुदा से यह दुआ माँग रहा था कि इस दुःख से मेरा पीछा छूटे—मौत मुझे उठा ले, और कहाँ अब रात की याद आते ही मैं जान बचाने के लिए घबरा उठा। जान कितनी प्यारी होती है। जङ्गली जानवरों के डर से मैं एक पेड़ पर चढ़ गया। बड़ी देर तक अपनी क़िस्मत पर रोता रहा। मैंने ख़ुदा से अर्ज़ की—'या इलाही! महबूब बहुत बेवक़ूफ़ है। उसका स्वभाव बहुत ही खोटा है। उसे ऐसी अक़्ल दे कि वह बुरे कामों से बाज़ आये। अच्छे काम करे और सुख पावे।'

धीरे-धीरे बहुत रात चली गई। इतने में वहाँ कुछ लोगों के आने-जाने की आवाज़ सुनाई देने लगी। जिस पेड़ पर मैं चढ़ा था, वे लोग उसी के नीचे आकर रुक गये। धीरे-धीरे उन लोगों की संख्या बढ़ती गई। मैंने सोचा, कहीं ये लोग ख़ूनी, डाकू या लुटेरे न हों। मारे डर के मैं थर-थर काँपने लगा। मेरी घिग्घी बँध गई। मगर उनकी बातें सुन कर थोड़ी देर में मेरा डर जाता रहा। अब उनका खाना-पीना होने लगा। 'थोड़ा पुलाव इधर भी, ज़रा ज़र्दा देना', 'कुछ और लीजिये', 'पानी लाना' वग़ैरह आवाज़ें सुनाई पड़ने लगीं। खाने-पीने के बाद सब लोग गपशप करने लगे। मैं भी साँस रोक कर ग़ौर से उनकी बातें सुनने लगा। बातों ही बातों में एक साहब बोले—भई, इस पेड़ के पत्तों में बड़ा गुण है। अगर उनका रङ्ग अन्धे की आँखों में डाल दिया जाय, तो वह भी फ़ौरन् देखने लगे।

आप सोच सकते हैं, यह बात सुनने से मुझे कितनी ख़ुशी हुई होगी। मैं अपने मन को न रोक सका—फ़ौरन दो पत्ते तोड़ कर उनका रङ्ग आँखों में डाल लिया। मैं पत्तों के गुण की क्या तारीफ़ करूँ, मुझे तो ऐसा मालूम पड़ा, जैसे सोते से जाग उठा। मेरी आँखें आम की फाँक के समान साफ़ निकल आईं। मुझे दूर-दूर तक़ की चीज़ें बख़ूबी दिखाई देने लगीं।

मैंने जो नीचे को नज़र की तो मेरे अचरज का ठिकाना न रहा। मैंने जो देखा उसके देखने की कोई बात भी न सोचेगा। मैंने देखा कि शेर, रीछ, तेंदुवा, हिरन, लोमड़ी, सियार, ख़रगोश वग़ैरह जङ्गली जानवर जुड़े बैठे हैं और हँस-हँस कर गप्पें हाँक रहे हैं। थोड़ी देर पहले इन्हीं का खाना-पीना हो रहा था। किसी-किसी ने तो यहाँ तक खाना खा लिया था कि बेचारे को बैठना मुश्किल हो रहा था। रीछ बाबा लेटे ही लेटे सबकी हाँ में हाँ मिला रहे थे। मैं ताज्जुब से सोचने लगा—या ख़ुदा, तेरी भी अजब क़ुदरत है। जानवर और आदमी की बोली! तब असल में ये लोग जानवर नहीं हैं। या तो ये देवता हैं या जादूगर। मैं ये बातें सोच ही रहा था कि रीछ बाबा अपना लम्बा थूथर फाड़ कर बोले—मियाँ ख़रगोश, आपने पत्तों की जो तारीफ़ की, वह ठीक है। अब इससे भी बढ़कर बात मुझसे सुनिए। चीन देश में पानी की बड़ी तकलीफ़ है। गरमी के दिनों में तो वहाँ के आदमी एक-एक बूँद के लिए तरसने लगते हैं। वहाँ के राजा ने बेहद कोशिश की, मगर कुछ न हुआ। अगर राजा वहाँ की भारी चट्टान तुड़वा डाले तो ऐसी नदी निकले, जो कभी न सूखे और लोगों का दुःख दूर हो जावे।

यह सुन शेर बोला—आपने अच्छी याद दिलाई। चीन के राजा को एक दुःख और है। वहाँ एक सौ कोस

लम्बी-चौड़ी ज़मीन है। वह हरी-भरी तो खूब है, मगर उसमें खेती के नाम एक दाना भी नहीं होता। लोग हमेशा भूखों मरते हैं। यह क्या कम दुःख की बात है ? बात तो यह है कि उस ज़मीन के बीचो-बीच हीरे-मोतियों का एक बड़ा खज़ाना है, और उसकी रक्षा के लिए सौ कोस के गिर्द में एक भारी सोने की ज़ञ्जीर गड़ी है। इसी से वहाँ खेती नहीं होती। अगर वह खज़ाना और ज़ञ्जीर निकाल ली जावे, तो उस ज़मीन में इतनी पैदावार हो सकती है कि तमाम चीन खाए, तो भी खतम न हो।

अब तो लोमड़ी भी मुँह लटका कर बोली—जनाब, आप चीन के राजा का सबसे बड़ा दुःख तो भूल ही गये। क्या आपको उसकी लड़की का हाल नहीं मालूम ? बड़ी खूबसूरत लड़की , मगर है गूँगी। कोई बेचारी के साथ शादी नहीं करता। राजा ने उसकी दवा तो बहुत की, मगर फ़ायदा ज़रा भी न हुआ। और मज़ा यह कि इस मर्ज की दवा शाहज़ादी के पास ही है। उसने जो हंस पाल रक्खा है, अगर वह उसका कलेजा भून कर खा ले, तो पट-पट बातें करने लगे।

यह सुन खरगोश बड़े ताव से बोला—मगर राजा के सबसे बड़े दुःख की बात मैं ही जानता हूँ। क्या आपको मालूम नहीं कि उस बेचारे को आँखों से कम दिखता है। अगर वह इस पेड़ के× × ×

अब तो हिरन से न रहा गया। वह बिगड़ कर बोला—छोड़ो भी ये वाहियात बातें! बेमतलब की चख़-चख़ लगा रक्खी है। चीन का राजा मरे या जिये, हमें क्या ग़रज़? ज़रा पूरब की तरफ़ देखो, उजेला हो रहा है। अब यहाँ से हटोगे या नहीं?

यह सुनते ही सब जानवरों ने अपनी-अपनी राह ली। थोड़ी देर में सूरज निकल आया। मैं भी ख़ुशी-ख़ुशी नीचे उतरा और चीन की तरफ़ चल पड़ा। कुछ दिन चलते-चलते चीन की राजधानी में जा पहुँचा। मैंने राजा के यहाँ नौकरी कर ली। एक दिन की बात सुनिए। राजा साहब अपने प्यारे तोते को गोद में लिये बैठे थे। इतने में एक चील झपट्टा मार कर आई और तोते को लेकर उड़ गई। राजा साहब को बहुत अफ़सोस हुआ। कहने लगे—इन आँखों में आग लगे, कितनी दवा की, मगर ये अच्छी न हुईं। आह! मुझे दीखता होता तो चील मेरे प्यारे तोते को न ले जाती!

मैंने फ़ौरन हाथ जोड़कर राजा साहब से कहा—'अगर हुज़ूर का हुक्म हो, तो मैं बातें करते आँखें अच्छी कर दूँ!' मैं उस पेड़ के कुछ पत्ते साथ ही लेता गया था। मैंने उसी समय दो पत्ते पीसे और उनका रङ्ग राजा साहब की आँखों में डाल दिया। पाँच ही मिनट में उनकी आँखें चमकने लगीं। अब तो राजा साहब बहुत ख़ुश हुए।

उन्होंने मेरी तनख़्वाह बढ़ा दी और वे मुझे ख़ूब चाहने लगे।

थोड़े दिन बाद गरमी का मौसम आ गया। शहर के सब कुएँ-बावली और तालाब सूख गये। लोग बिना पानी के मरने लगे। मैंने राजा साहब से बिनती की कि हुज़ूर मुझे हुक्म दीजिए, मैं भी कुछ कोशिश करूँ, शायद काम बन जाय'। राजा साहब बोले—'नेकी और पूछ-पूछ! तुम्हें मना कौन करता है!' उनका हुक्म पाते ही मैंने सुरङ्गों से वह चट्टान तुड़वा डाली। उसके टूटते ही अर्राटे से ठण्डे और मीठे पानी की धारा बहने लगी। बात की बात में लोगों का दुःख दूर हो गया। अब तो सब लोग भी मुझे बहुत चाहने लगे। राजा ने भी बहुत सा इनाम देकर मुझे ख़ुश किया।

इतने में बरसात के दिन आ गये। राजा ने मुझसे कहा—'अशरफ़, तुम चतुर आदमी हो। मैंने इस ज़मीन में खेती करने की बहुत कोशिश की, पर मेरे किये कुछ न हुआ। भई, तुम्हीं कुछ उपाय करो, शायद काम बन जाय।' मैंने जवाब दिया—'ग़ुलाम को कब इनकार है!' फिर मैंने चुपचाप वह बेहिसाब ख़ज़ाना और सोने की ज़ञ्जीर खुदवा कर घर के हवाले की। उस साल उस ज़मीन में बेहिसाब उपज हुई। अब तो लोगों में मेरी बहुत इज़्ज़त बढ़ गई। मैं बहुत ही अक़्लमन्द समझा जाने लगा।

बड़े-बड़े रईस और अमीर मेरा आदर करने लगे। राजा ने ख़ुश होकर मुझे अपना वज़ीर बना लिया।

एक दिन राजा ने मुझे बुलाया और कहा—प्यारे अशरफ़, तुम्हारे कामों से मैं बहुत ख़ुश हूँ। तुम्हारे ज़रिये मुझे और मेरे मुल्क को बहुत फ़ायदा पहुँचा है। अब मुझे एक ही दुःख रह गया है। मेरी लड़की बोलती नहीं—गूँगी है। अगर तुम उसे अच्छी कर सको तो क्या कहना! मैं तुम्हारे साथ ही उसकी शादी कर दूँगा। फिर तो मेरे बाद तुम्हीं इस मुल्क के बादशाह बनोगे।

मैंने जवाब दिया—हुज़ूर, यह तो ज़रा सी बात है। आपने अब तक कहा क्यों नहीं?

इसके बाद मैंने हंस की गरदन पकड़ी। शाहज़ादी ने कितना ही मना किया, मगर मैं न माना। मैंने हंस की गरदन मरोड़ दी और उसका कलेजा निकाल कर शाहज़ादी को खिला दिया। कलेजा खाने की देर थी कि शाहज़ादी पट-पट बोलने लगी। अब तो राजा साहब की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। उन्होंने बड़ी धूमधाम से मेरे साथ शाहज़ादी की शादी कर दी। राजा का जमाई बन कर मैं बड़े सुख से रहने लगा।

यह तो सब हुआ, पर मुझे दिन-रात माँ और महबूब की चिन्ता लगी रहती। यद्यपि महबूब ने मेरे साथ पूरी दुष्टता की थी, मगर मैं उसे भूल न सका—उस पर मेरी

मुहब्बत बराबर बनी रही। मैं उन्हें देखने के लिए ख़ुद लासा तक गया। मगर वहाँ पहुँचने पर देखा, तो मेरी झोपड़ी सूनी पड़ी थी। लोगों से पूछने पर मालूम हुआ कि महबूब माँ को लेकर कभी का यहाँ से चला गया है। मैं रञ्ज करता हुआ फिर चीन लौट आया। मैंने न जाने दोनों की कितनी खोज कराई, पर आज तक उनका पता न चला। ख़ैर।

चीन में मेरी ऐसी बढ़ती देख कई बड़े-बड़े सरदार मुझसे जलने लगे। वे झूठ-मूठ ही राजा साहब से मेरी चुग़लियाँ खाने लगे। राजा साहब भी उनकी बातों में आ गये। एक दिन वे मुझसे बिना मतलब ही नाराज़ हो पड़े। यह रङ्ग-ढङ्ग देख मुझे वहाँ रहना ठीक न जान पड़ा। अब मुझे वहाँ के राज-पाट की उतनी परवा भी न थी, क्योंकि मेरे पास अटूट धन था। बस, मैं चुपचाप बोरिया-बँधना बाँध यहाँ चला आया और यह महल बनवा कर रोज़गार करने लगा। फिर तो मेरे धन की और भी बढ़ती हुई। अब मुझे किसी बात की भूख नहीं है। अगर किसी बात की फ़िक्र है, तो माँ और भाई के न मिलने की। बस साहबो, मेरी यही कहानी है। अब आप ही कहिए, ख़ुदा कैसा मेहरबान है। उसकी मेहरबानी से क्या नहीं हो सकता ? अगर उसकी मेहरबानी न होती, तो उस दिन वे जङ्गली जानवर क्यों इस तरह इन्सान की बोली में बात-

चीत करते ? आप ही कहिए, मेरा धनी हो जाना ताज्जुब की बात है या नहीं ?"

इतने ही में सब लोगों ने देखा कि वह भिखमङ्गा एकदम अशरफ़ के पैरों पर गिर पड़ा, और रोते-रोते बोला—भाई, मैं ही तुम्हारा वह पापी भाई महबूब हूँ। मैंने जैसा किया वैसा पाया, अब तक भिखमङ्गा बना फिरता हूँ। माँ मेरे साथ ही है। वह सराय में ठहरी हुई है। अब मेरा क़ुसूर माफ़ करो!

अशरफ़ ने रोते-रोते भाई को गले लगा लिया। वह ख़ुद सराय में गया और बड़े प्रेम और आदर से माँ को घर ले आया। माँ अपने खोये हुए बेटे को पाकर निहाल हो गई। अशरफ़ ने माँ और भाई को अच्छे-अच्छे कपड़े पहिनाये और अच्छे-अच्छे खाने खिलवाये। उस दिन अशरफ़ की हवेली में ख़ूब चहल-पहल रही।

रात को महबूब की बुद्धि फिर पलट गई। वह मन ही मन सोचने लगा कि अशरफ़ इतना धन पाने पर ज़रूर घमण्डी हो गया होगा। शायद यह कल ही मुझे ताने देने लगे। भई, इसके पास रहना ठीक नहीं। चलो, मैं भी उसी पेड़ पर जाकर बैठूँ। क्या जाने, मेरी क़िस्मत भी खुल जाय।

बस, महबूब चुपचाप घर से निकल पड़ा और चलते-चलते कुछ दिन बाद उसी पेड़ के पास जा पहुँचा। वह

पेड़ पर बैठ कर रात होने की बाट देखने लगा। आधी रात को सब जानवरों का जमावड़ा हुआ। बातों ही बातों में लोमड़ी बोली—भई, यहाँ बातें करना ठीक नहीं। क्या उस दिन की याद भूल गये? उस दिन जरूर किसी बदमाश ने हमारी बातें सुन ली थीं। जरा झाड़ पर भी तो देख लो कि कोई है तो नहीं?"

यह सुन ज्योंही शेर ने ऊपर को नजर की, त्योंही महबूब उसे दिख गया। अब तो शेर को बहुत गुस्सा आया। उसने उछल कर महबूब को नीचे गिरा दिया और कहा—देखो-देखो! यही वह बदमाश है। आज फिर हमारी बातें सुनने आया था। अब इसे जिन्दा छोड़ना ठीक नहीं।

फिर तो सबने मार-मार कर महबूब को वहीं ढेर कर दिया। सच है, जो जैसा करता है, वह वैसा ही फल पाता है।

बन्दरी बेगम

पुराने जमाने की बात है, तातार के मुल्क में एक नामी बादशाह रहता था। उसके सात बेटे थे। सब शाहजादे बहुत ही बहादुर, खूबसूरत और खूब पढ़े-लिखे थे। बादशाह उन्हें बहुत चाहता था। उन पर मुहब्बत की एक सी नजर रखता था। बादशाह बहुत अक़्लमन्द था, और उसकी हमेशा यही नीयत रहती थी कि सातों भाइयों में खूब मुहब्बत रहे, कभी जरा भी मन-मुटाव न होने पावे। इसके लिए वह कोशिश भी बहुत करता था। सातों भाई एक से कपड़े-लत्ते पहिनते, एक से घोड़ों पर सवारी करते, और खर्च के लिए एक बराबर रुपया-पैसा पाते थे। जब सातों शाहजादे सयाने हुए, तब बादशाह ने उनके रहने के लिए एक ही नमूने के सात महल बनवाये। उनकी एक-सी सजावट करवाई। सब महल एकसाँ थे, न कोई घट, न कोई बढ़। अपने बाप के ऐसे बर्त्ताव से सब शाहजादे बहुत सुखी थे, और आपस खूब हिल-मिल कर रहते थे।

जब शाहज़ादों की उम्र शादी के लायक़ हुई, तब बादशाह ने अपने कुछ आदमियों से कहा—अब शाहज़ादों की शादी कर देनी चाहिए। तुम लोग जैसे हो, वैसे सात शाहज़ादियाँ तलाश कर लाओ, जो एक बराबर ख़ूबसूरत हों, एक ही से ऊँचे ख़ान्दान की हों और लियाक़त में भी घट-बढ़ न हों।

यह शाही हुक्म पाते ही वे लोग चारों तरफ़ चल पड़े, मगर बहुत दिन बाद छूँछे हाथ लौट आये और हाथ जोड़कर बादशाह से बोले—जहाँपनाह, हमने सातों टापुओं की धूल छान डाली, बड़े-बड़े समुन्दर और पहाड़ तलाश कर डाले, मगर एक से रङ्ग-रूप की सात शाहज़ादियाँ कहीं न मिलीं। मिलने की उम्मीद भी नहीं है।

यह सुनकर बादशाह बहुत नाराज़ हुआ। वह उसी दिन से उदास रहने लगा। उसका वज़ीर बहुत होशियार और अक़्लमन्द था। बादशाह की उदासी देख उसे बड़ी फ़िक्र हुई और वह सोच-विचार में रहने लगा। एक दिन उसने बादशाह से कहा—हुज़ूर, यह ऐसा मामला है, जिस पर किसी तरह की फ़िक्र या सोच-विचार करना बेकार है। सच तो यह है कि शाहज़ादों को एक सी बीवियाँ मिलना मुश्किल है। अगर हम दुनिया की तमाम बादशाहतें देख डालें, बड़े-बड़े राजमहलों से लेकर छोटी-छोटी झोपड़ियाँ तक ढूँढ़ मारें, तब भी एक-सी सात लड़-

कियाँ न मिलेंगी। हमारा काम कोशिश करने का था, वह हो चुका। बेहतर है कि अब यह मामला क़िस्मत पर छोड़ दिया जाय, क्योंकि जो काम तदबीर से नहीं होता, अक़्लमन्द लोग उसे तक़दीर के भरोसे छोड़ देते हैं। मेरी समझ में तो यही आता है कि आप शाहज़ादों को बुलवाइए और उनसे पूछिए कि वे अपनी-अपनी क़िस्मत आज़माने को तैयार हैं या नहीं? अगर वे इस बात पर राज़ी हो गये, तो अभी फ़ैसला हो जायगा।

वज़ीर की यह बात सुनकर बादशाह बहुत ख़ुश हुआ। उसने उसी वक़्त सब शाहज़ादों को बुलवा भेजा। शाहज़ादे फ़ौरन क़िस्मत-आज़माई करने को तैयार हो गये। तब सब लोग क़िले के सब से ऊँचे बुर्ज पर पहुँचे, जहाँ से मीलों तक नज़र जाती थी। वज़ीर ने हर एक शाहज़ादे को एक-एक तीर-कमान दिया, फिर उनसे कहा—जहाँ आपकी तबीयत चाहे, तीर छोड़ दीजिए। मगर शर्त यह है कि जिस शाहज़ादे का तीर जिस मकान पर गिरेगा, उसे उसी मकान की लड़की के साथ शादी करनी पड़ेगी, फिर चाहे उस घर के लोग अमीर हों या ग़रीब, चाहे किसान हों या मज़दूर।

इस शर्त के मुताबिक़ सब शाहज़ादों ने, जिधर जी चाहा उधर अपने-अपने तीर छोड़ दिये। छोटे शाहज़ादे के सिवा सब शाहज़ादों के तीर भले आदमियों के घरों पर

जाकर गिरे। मगर छोटे शाहज़ादे का तीर बहुत दूर चला गया—वह शहर से बाहर निकल कर गायब हो गया। नौकर-चाकर फ़ौरन उसकी तलाश में दौड़े। बड़ी मुश्किल के बाद वह बरगद के एक ऐसे पेड़ में छिदा पाया गया, जिस पर एक बन्दरी बैठी हुई थी।

छोटे शाहज़ादे की क़िस्मत का यह फ़ैसला देख बादशाह को बहुत अफ़सोस हुआ। सब लोग बोले—"इसमें रञ्ज की कोई बात नहीं। कुछ यह शर्त तो थी नहीं कि अगर तीर जानवर पर जा गिरेगा, तो शाहज़ादे को उसी के साथ शादी करनी पड़ेगी। अगर तीर चूक गया है, तो शाहज़ादे को दूसरा तीर छोड़ना चाहिए—छोड़ना क्या चाहिए, शर्त के मुताबिक़ जब तक तीर घर पर न गिरे, तब तक वे जितने चाहें, उतने तीर छोड़ सकते हैं।" मगर शाहज़ादा राज़ी न हुआ। तब बादशाह, वज़ीर और भाई सब उसे समझाने लगे कि भला कहीं बन्दरी के साथ भी इन्सान की शादी होती है! तुम्हें तीर ज़रूर चलाना चाहिए। फिर भी शाहज़ादा टस से मस न हुआ। उसने बादशाह से कहा—"अब्बाजान! भाइयों के साथ मैंने भी अपनी क़िस्मत आज़माई थी। क़िस्मत के लिखे को कौन मेट सकता है? जो बदा था, वही मुझे मिला। अगर मेरे भाइयों को अच्छी अच्छी बीवियाँ मिली हैं, तो मुझे उनसे डाह नहीं, अलबत्ता अपनी बद-क़िस्मती पर ही

अफ़सोस है। मैंने तीर चलाने के पहले जो शर्त मञ्जूर की थी, वह मुझे याद है। आख़िर दरख़्त भी तो एक तरह का मकान ही है। इसलिए मैं शर्त के ख़िलाफ़ कोई काम नहीं कर सकता। यह ज़िन्दगी क्या है, पानी का एक बुलबुला है, जो अभी है, अभी नहीं। मगर शर्त एक बड़ी चीज़ है। इसलिए शर्त तोड़ कर मैं अपना नाम बदनाम न करूँगा। मैं यह जानता हूँ कि इन्सान और हैवान का जोड़ा नहीं हो सकता, मगर उनमें मुहब्बत तो हो सकती है। बस, मैं अभी जाकर उस बन्दरी को घर ले आऊँगा, और ता-ज़िन्दगी उस पर प्यार करूँगा। रही शादी की बात, सो आप यह याद रखिए कि अब मैं शादी का नाम भी न लूँगा!"

इतना कह कर शाहज़ादा बाहर चला गया और उसी पेड़ के पास पहुँचा। उसने ज्योंही बन्दरी को बुलाया, त्योंही वह नीचे उतर आई, मानों शाहज़ादे के आने की राह ही ताक रही थी। शाहज़ादा बन्दरी को अपने महल में ले आया, और उसने बन्दरी की देख-भाल के लिए दो दासियाँ मुक़र्रर कर दीं। शाहज़ादे ने दासियों को सख़्त ताकीद कर दी—इसे मामूली बन्दर न समझना। यह मेरी बेगम और तुम सबकी मालकिन है। ख़बरदार! इसे किसी तरह की तकलीफ़ न पहुँचे। नहीं तो तुम जानना।

धीरे-धीरे छहों शाहज़ादों की शादी का वक्त आ गया। उस दिन खूब धूमधाम रही। तमाम शहर में रोशनी की गई। बेहिसाब आतिशबाज़ी हुई। जहाँ देखो, वहीं नाच और रङ्ग की धूम रही। लोगों ने अपने-अपने घर आम और केले के पत्तों से सजाये। दूकानदारों ने अपनी-अपनी दूकानें इस तरह सजाईं कि देखनेवालों की तबीयत खुश हो गई। ग़रज़ यह कि शहर में खुशी ही खुशी नज़र आती थी, लोग फूले नहीं समाते थे। एक छोटा शाहज़ादा ही ऐसा था, जो अपने महल में उदास बैठा था। किसी ने बेचारे की बात भी न पूछी। जब बैठे-बैठे उसकी तबीयत ऊब गई, तब वह अपनी बन्दरी के पास पहुँचा। उसने बन्दरी के गले में हीरों की माला पहना दी, फिर उसे एक क़ीमती कुर्सी पर, जो मखमली गद्दे से मढ़ी हुई थी, बिठा दिया और कहा—"मेरी बन्दरी बेगम! आज इस शहर में खुशी की धारा उमड़ रही है। मगर न कोई मुझे पूछता है न तुझे। आज हम दोनों की एक-सी हालत है। यह सच है कि तू मेरी क़ैद में है, लेकिन हर्ज नहीं, तुझे किसी तरह की तकलीफ़ न होगी। मैं तुझे सुखी करने की पूरी कोशिश करूँगा। अरे! तू अपनी सोने की जञ्जीर क्यों खींचती है? ऐसा करने से तो भई, तुझे ही तकलीफ़ पहुँचेगी। ज़रा ख़ामोशी से बैठ! अच्छा-अच्छा! मैं समझ गया, तू भूखी है।

ठेहर, मैं तेरे लिए खाना लाता हूँ।"—यह कह कर वह सोने की कुछ थालियों में तरह-तरह के मज़ेदार खाने ले आया और बन्दरी से बोला—"मेरी प्यारी! ले खा! अरी ज़रा चख कर तो देख! कैसी बढ़िया चीज़ें हैं। खा-खा! देर मत कर।"

इस तरह शाहज़ादा रोज़ बन्दरी पर प्यार करता, घण्टों उसके साथ गपशप करने में बिता देता। बन्दरी पर उसका यह प्यार देख, लोग उससे बात भी न करते। बात करना तो दूर रहा, उल्टा बेचारे को कोई बेवक़ूफ़, कोई सिड़ी, कोई शेख़चिल्ली और कोई पागल बतलाता। इस तरह जिसे देखो वही शाहज़ादे की दिल्लगी उड़ाया करता। मगर वह किसी की परवा न करता—बन्दरी पर प्यार किये बिना उसका जी न मानता।

शाहज़ादे की यह हालत देख बादशाह को बहुत अफ़सोस होता था। वह रोज़ाना अपने वज़ीरों और सरदारों से कहता था—"भई इस ज़िद्दी छोकरे की क्या दवा की जाय? बन्दरी को लिए बैठा है। मेरी बड़ी इच्छा है कि यह किसी अच्छी सी लड़की के साथ शादी कर लेता। क्या आप लोग कोई तदबीर नहीं कर सकते?" वज़ीरों, सरदारों, भाइयों, दोस्तों और ख़ुद माँ-बाप ने कई मर्तबा शाहज़ादे को समझाया, मगर वह सबको यही जवाब देता था—"मर्दों का क़ौल एक होता है। मेरा क़ौल वह पहाड़

है, जो हिलना-डुलना नहीं जानता। और इस क़ौल के सामने मेरी नज़र में क्या बीबी, क्या राज-पाट और क्या दुनिया का सुख, किसी चीज़ की कोई क़ीमत नहीं है।"

धीरे-धीरे कई महीने बीत गये, मगर शाहज़ादे का इरादा तब्दील न हुआ। तब्दील होना तो दूर रहा, ज्यों-ज्यों दिन निकलते जाते थे, त्यों-त्यों बन्दरी पर उसकी मुहब्बत बढ़ती जाती थी। बन्दरी भी बहुत ख़ुश थी। देखने से साफ़ मालूम देता था कि वह शाहज़ादे की हर एक बात अच्छी तरह समझती और उसे दिल से चाहती है।

अब तो बादशाह को और भी फ़िक्र हुई। एक दिन उसने वज़ीर की सलाह से सब शाहज़ादों को अपने सामने बुलवाया और उनसे कहा—प्यारे बच्चो! तुम लोगों की शादियाँ हो गईं और तुम सुख से रहते हो, यह देख कर मुझे बड़ी ख़ुशी होती है। और मेरे छोटे बच्चे, जान पड़ता है, तुम भी अपनी अजीब साथिन के साथ बहुत सुखी हो। बच्चो, शायद तुम नहीं जानते कि माँ-बाप का तमाम सुख अपने बच्चों के सुख में ही रहता है। अब मेरी तबियत चाहती है कि तुम्हारी बहुओं को देखूँ और उन्हें कुछ इनाम देकर अपना जी ख़ुश करूँ।

यह सुनते ही बड़े शाहज़ादे ने हाथ बाँध कर कहा—अब्बा, यह तो आपने बड़ी ख़ुशख़बरी सुनाई। कल मेरे

यहाँ आपकी दावत होगी। मिहरबानी कर मञ्जूर फ़र-माइए।

बादशाह ने बड़ी ख़ुशी से न्योता मञ्जूर कर लिया।

अब बड़े शाहज़ादे ने न्योते की बड़ी-बड़ी तैयारियाँ कीं। तरह-तरह के खाने पकवाये और महल की सजावट भी बहुत उम्दा की। बाँदियों ने उसकी बीबी का ऐसा शृङ्गार किया कि उसे गुड़िया बना दिया। ठीक वक़्त पर बादशाह आया तो बेटे बहू ने बड़ी मुहब्बत से—बड़ी धूम से उसकी आवभगत की। उनका वह ठाट-बाट और उनका वह प्रेम देख कर बादशाह की तबीयत बाग़-बाग़ हो गई। उसने बेटे-बहू पर बहुत प्यार किया, उनके सिर पर हाथ फेर कर उन्हें आशीर्वाद दिया। बहू को बहुत से क़ीमती जवाहिरात और बढ़िया-बढ़िया गहने दिये। फिर दोनों को ऐसी-ऐसी नसीहतें दीं कि वे हमेशा आराम की ज़िन्दगी बसर कर सकें। इसके बाद वहाँ कुछ देर ठहर कर वह हँसी-ख़ुशी से अपने महल में लौट आया।

दूसरे दिन दूसरे शाहज़ादे ने बादशाह का न्योता किया। वहाँ भी बड़े ठाट-बाट से उसका स्वागत हुआ, और उसकी तबीयत बहुत ख़ुश हुई। बादशाह इसी तरह एक-एक करके छहों शाहज़ादों के यहाँ गया और सबने दिल खोल कर उसका आदर-सत्कार किया। अपनी छहों बहुओं को देख कर बादशाह फूला न समाया। उसने उन्हें

बेशुमार जवाहिरात और गहने दे डाले। मगर उसका असली मतलब तो कुछ और ही था।

अब छोटे शाहज़ादे की बारी आई। बेचारा बड़ी उलझन में फँसा। सोचने लगा—बन्दरी जिस घर की मालकिन हो, वहाँ बादशाह का न्योता कौन करेगा? जब सोचते-सोचते उसका दिमाग़ थक गया, तो वह बन्दरी के पास पहुँचा और उसे गोद में लेकर बोला—"मेरी बन्दरी! मेरी बेगम! मेरे सुख-दुख की गूँगी साथिन! अब तू ही बता कि मैं क्या करूँ? आह! कहीं ख़ुदा ने तुझे ज़बान दी होती, तो दो मीठी बातें कह कर मुझे तसल्ली तो बँधाती। सब भाई अब्बाजान की दावत कर चुके हैं, उन्हें अपनी-अपनी बीबियाँ दिखा चुके हैं। मगर जब वे यहाँ आयेंगे, तो मैं उन्हें क्या दिखाऊँगा? मुझे तो उन्हें बुलाते भी शरम मालूम देती है। लोग अभी मेरी दिल्लगी उड़ाते हैं, न जाने क्या-क्या ताने मारा करते हैं। मगर जब मैं अब्बा को बुलाऊँगा और तुझे अपनी बीबी कह कर उनके सामने पेश करूँगा, तब तो ग़ज़ब हो जायगा। लोग मेरे नाम पर थूकेंगे और मैं कहीं मुँह दिखाने लायक़ भी न रहूँगा। या ख़ुदा! मेरी हालत पर रहम कर"।

शाहज़ादा बहुत देर तक इसी तरह अफ़सोस करता रहा। उसकी यह आदत-सी पड़ गई थी कि वह बन्दरी

के सामने इस तरह बातें करता था, गोया वह इन्सान हो, सचमुच उसकी बीबी हो। बन्दरी भी बड़ी खामोशी से—बड़े ध्यान से—उसकी बातें सुना करती थी। वह हमेशा इस कोशिश में रहती थी कि शाहज़ादा मेरी किसी हरकत से नाराज़ न हो जावे। उसकी इस आदत से शाहज़ादे को भी बहुत ताज्जुब होता था। वह अक्सर सोचने लगता था—गो यह हैवान है, मगर बर्ताव में बिलकुल इन्सान है। मेरी एक-एक बात ग़ौर से सुनती है, मानों एक-एक अक्षर समझती है।

बन्दरी आज भी शाहज़ादे की बातें चुपचाप सुनती रही। ज्योंही वह चुप हुआ, त्योंही बन्दरी ने उसे ताज्जुब के समुन्दर में डाल दिया। शाहज़ादे ने देखा कि जो बन्दरी हमेशा गुपचुप रहती थी, वही आज उससे आदमी की बोली में कह रही है—"मालिक, न कुछ बात के लिए इतनी फ़िक्र! घबराने की कोई बात नहीं है! जाइए, आप बादशाह सलामत को न्योता दीजिए। और शाहज़ादों ने तो केवल उन्हीं को बुलाया था, मगर आप उनसे कहिए कि वे अपने तमाम वज़ीरों, अमीर-उमरावों, नौकरों-चाकरों और फ़ौज-फाटे समेत तशरीफ़ लावें। मैं जैसा कहूँ, मेहरबानी कर वैसा ही करते जाइए। फिर तमाशा देखिए।"

बन्दरी की यह बातें सुनते ही शाहज़ादा चीख़ उठा—

या ख़ुदा ! यह कैसा ताज्जुब है ! बन्दरी और इन्सान की बोली ! कहीं मैं ख्वाब तो नहीं देख रहा हूँ !

बन्दरी ने हँस कर कहा—अब आप ताज्जुब करते हैं या न्योता देने जाते हैं ! जाइए, जाइए ! देर न कीजिए ! ताज्जुब करने के लिए तो जिन्दगी पड़ी है !

शाहज़ादा बाहर चला गया और बन्दरी के कहे मुताबिक़ बादशाह को न्योता दे आया। जब वज़ीरों और सरदारों ने यह बात सुनी तो उन्हें भी बड़ा ताज्जुब हुआ। वे आपस में कहने लगे—इन हज़रत ने हमें क्यों न्योता दिया ? ये हमें बुलाकर क्या करेंगे ? जान पड़ता है, अब इनका दिमाग़ और भी फिर गया है। ख़ैर, हमें इससे क्या ग़रज़। मगर कल रहेगी पूरी दिल्लगी !

शाहज़ादा न्योता दे तो आया, मगर अब उसका जी धुकड़-पुकड़ होने लगा। वह सोचने लगा—"या ख़ुदा ! अब कल क्या होगा ! मैंने कैसी बेवक़ूफ़ी की, जो बिना सोचे-समझे हज़ारों आदमियों को न्योता दे बैठा !" इतने में एक खटके की आवाज़ हुई। शाहज़ादे का ध्यान उचट गया, उसने सिर उठा कर देखा तो मालूम हुआ कि बन्दरी इशारे से उसे अपने पास बुला रही है। शाहज़ादे ने उससे कहा—"मेरी शाहज़ादी ! मेरी बेगम ! कहो, अब क्या कहती हो ? तुमने मुझे अच्छी आफ़त में फँसा दिया। तुम्हारे कहने से मैंने सबको न्योता दे दिया ! मगर यह

बताओ कि अब इतने आदमियों को खिलाने-पिलाने का इन्तज़ाम कौन करेगा! न मेरे पास इतने नौकर-चाकर हैं, न इतना धन ही है कि हज़ारों आदमियों के आदर-सत्कार का इन्तज़ाम कर सकूँ। अरे भई, कुछ तो कहो! अरे! तुम तो बोलतीं ही नहीं। तुम्हारी ज़बान अब कहाँ गई?" इस तरह शाहज़ादा न जाने क्या-क्या बड़बड़ाता रहा, मगर वह बिलकुल न बोली। शाहज़ादे ने उसे बहुत मनाया। उसने कितनी ही विनती की, मगर उसकी ज़बान न खुली न खुली। तब वह सोचने लगा—"अरे! यह तो बड़ा धोखा हो गया! हो न हो, मैंने शाहज़ादी को सपने में बोलते देखा होगा। नहीं तो भला, बन्दरी आदमी की बोली कैसे बोल सकती है? हाय-हाय! मैंने यह क्या ग़ज़ब कर डाला?"

इतने में शाहज़ादे ने देखा कि बन्दरी अपने हाथ में एक ठीकरी लिये है और उसे इशारा कर रही है कि वह ठीकरी ले ले। शाहज़ादे ने लपक कर ठीकरी ले ली। ठीकरी देख कर उसे और भी ताज्जुब हुआ। क्योंकि उस पर किसी औरत के हाथ की लिखावट में यह लिखा हुआ था—मुझे चुप देख आप किसी तरह का ख़याल न कीजिए। जहाँ से आप मुझे लाये हैं, वहीं जाइए और यह ठीकरी उसी पेड़ के खोखले में डाल दीजिए। जब तक जवाब न मिले वहीं ठहरे रहिए।

अब शाहज़ादा और भी उलझन में पड़ा। वह बड़ी देर तक यही सोचता रहा कि जैसा इस ठीकरी में लिखा है, वैसा करना चाहिए या नहीं। अन्त में उसने यही इरादा किया— जाने में हर्ज ही क्या है! देखना तो चाहिए कि क्या नतीजा निकलता है। बस, वह ठीकरी लेकर चला और थोड़ी देर में बरगद के उस पेड़ के पास जा पहुँचा। पेड़ बहुत पुराना था। मीलों के घेरे में उसकी शाखें और जड़ें फैली हुई थीं। उसका तना सैकड़ों फुट मोटा था और भीतर ही भीतर खोखला हो गया था। शाहज़ादे ने उसी पोले तने में वह ठीकरी छोड़ दी।

थोड़ी देर बाद उस खोखले तने से एक औरत बाहर निकली, जो निहायत ख़ूबसूरत थी और हरी पोशाक में बहुत ही भली मालूम होती थी। उसने शाहज़ादे से कहा— "जनाब, चलिए! आपका सन्देशा पहुँच गया है और हमारी मालकिन आपको याद कर रही हैं!" यह सुनते ही शाहज़ादा पेड़ पर चढ़ गया और उस तने में कूद पड़ा। थोड़ी देर तक तो वह अँधेरे में यहाँ-वहाँ भटकता रहा। इसके बाद उसे बहुत ही तेज़ रोशनी दिखाई दी। वह उसी तरफ़ चला और एक ख़ूबसूरत बग़ीचे में जा पहुँचा। बग़ीचा क्या था, एक अजीब चीज़ थी। वहाँ जितने पेड़ थे, सब सोने के थे और उनके पत्ते ज़मुर्रद के थे। सब पेड़ एक-सी क़तारों में लगे हुए थे और उनके चारों तरफ़

नहरें बह रही थीं, जिनके पानी से मीठी-मीठी ख़ुशबू उड़ रही थी। पानी इतना साफ़ था कि उसकी तली में पड़े हुए जवाहिरात और सोने-चाँदी की तैरती हुई मछलियाँ ज्यों की त्यों दिखाई देती थीं। चारों तरफ़ बुलबुल, कोयल, मैना वग़ैरह चिड़ियाँ मस्ती से अलाप रही थीं। पेड़ों के हिलने-डुलने से जो हवा बहती थी, वह बहुत ही ठण्ढी और ख़ुशबू से भरी हुई थी। वहाँ जो उजेला फैल रहा था, वह भी अजीब तरह का था, घड़ी-घड़ी में उसका रङ्ग बदलता था, और ऐसा जान पड़ता था, जैसे रङ्ग-बिरङ्गी आतिशबाज़ी छूट रही हो। बग़ीचे के बीचो-बीच एक छोटा-सा तालाब था, जिसमें सोनहले रङ्ग का ख़ुशबूदार पानी भरा था। तालाब में बहुत से फ़व्वारे लगे हुए थे, जिनके ज़रिये वह पानी हवा में उड़-उड़ कर कल्लोल करता हुआ चारों तरफ़ ठण्ढक और ख़ुशबू बिखेर रहा था। शाहज़ादा बग़ीचे की एक-एक चीज़ देखता और हैरत खाकर रह जाता था। मन ही मन कहता था—यह बग़ीचा है या स्वर्ग? धन्य है वह भाग्यवान, जो इस बग़ीचे का मालिक है।

बग़ीचे के उत्तरी हिस्से में बारह दरवाज़ों का एक आलीशान महल था, जिसका सोनहला रङ्ग उस अजीब रोशनी में चमचम हो रहा था। शाहज़ादा उस औरत के पीछे-पीछे चलता हुआ, सोने की सीढ़ियों पर चढ़कर

महल में पहुँचा। महल की सजावट देखते ही वह भौंचक्का सा रह गया। उसकी आँखों में चकाचौंधी लग गई। उसने सपने में भी ख़याल न किया था कि दुनिया में ऐसा महल भी हो सकता है। मगर इससे भी ताज्जुब की बात यह थी कि वहाँ हीरों के तख़्त पर एक ऐसी ख़ूबसूरत औरत बैठी थी, जैसी न किसी ने देखी, न किसी ने सुनी। उसके अग़ल-बग़ल में और बहुत-सी ख़ूबसूरत औरतें खड़ी थीं, जो रूप की ज्योति से जगमगा रहीं थीं। शाहज़ादा उस औरत की ख़ूबसूरती देखकर चकरा गया, अपनी सुध-बुध खो बैठा और उसे एकटक देखता रह गया। जब उस औरत ने उससे कहा—'जनाब बैठ जाइए, यों कब तक खड़े रहेंगे ?' तब कहीं उसे होश आया, वह उस औरत का इशारा पाते ही एक चौकी पर बैठ गया।

अब उस औरत ने शाहज़ादे से पूछा—'कहिए, आप क्या चाहते हैं ?' मगर शाहज़ादा कुछ न कह सका, कहने की हिम्मत ही न पड़ी। तब वह सुरीले गले से
ख़ैर ! आप कुछ न कहिए। मगर मैं आपको ... जानती हूँ, और यह भी जानती हूँ कि आप ... मतलब से आये हैं। अब आप किसी बात की चिन्ता न कीजिए। मैंने अपने नौकरों को हुक्म दे दिया है, आपका कुल काम हो जायगा। कल सवेरे आपको दावत के सब सामान तैयार मिलेंगे। अच्छा, अब आप जा सकते हैं।

इसके बाद वही स्त्री शाहज़ादे को पेड़ के बाहर तक भेज गई। घर लौटने पर उसने सब हाल बन्दरी को सुनाया और कहा—"शाहज़ादी, जितनी बातें देखता हूँ, सब ताज्जुब से भरी दिखाई देती हैं। आख़िर तुम कौन हो? यह भी पता न चला कि वह ख़ूबसूरत औरत कौन है? शुरू से आख़ीर तक जादू का खेल सा जान पडता है। अरे भई, ज़रा ख़ुदा के वास्ते कुछ तो बोलो!" मगर बन्दरी चुपचाप सब बातें सुनती रही।

रात भर शाहज़ादे को अच्छी तरह नींद न आई। ज़रा झपकी लगती, और वह सपने में वही बग़ीचा, वही ख़ूबसूरत औरत देखने लगता। इसी तरह पहाड़ सी रात बीत गई और सवेरा हो गया। शाहज़ादा बिस्तर से उठा, तो महल में वही पहले जैसा सन्नाटा था। कहीं किसी तरह की तैयारी नज़र न आती थी। बेचारा घबराकर बाहर की तरफ़ भागा। मगर बाहर आते ही उसने जो कुछ देखा, सब अजीब ही अजीब था। चारों बग़ीचा चहल-पहल मची हुई थी, कल रात तक जहाँ कुछ न था, वहाँ इस वक़्त मन लुभाने वाली सजावट के सामान नज़र आ रहे थे। जहाँ तक निगाह जाती थी, सजावट ही सजावट दिखाई देती थी। शाहज़ादे ने देखा कि सैकड़ों आदमी सजावट करने में लगे हुए हैं और उनका काम एक अजीब ढङ्ग से चल रहा है। इस दुनिया

के आदमी न तो वैसी सजावट करना जानते हैं, न उस तरीक़े से काम ही कर सकते हैं। उनके हाथ इस क़दर फ़ुर्ती से चलते हैं कि उन पर नज़र ही नहीं ठहरती। शाहज़ादे के मकान से लेकर बादशाह के महल तक रास्ते के दोनों तरफ़ हरे-भरे पेड़ लगे हुए हैं, जो रङ्ग-बिरङ्गे फूलों और फलों के बोझ से झुके जा रहे हैं। इसके सिवा दोनों तरफ़ दो नहरें हैं, जिनमें साफ़ पानी कल-कल करता हुआ बह रहा है। तमाम सड़क मख़मली क़ालीनों से ढँकी हुई है, जिन पर रेशम और ज़री का ख़ूबसूरत काम किया गया है। थोड़ी-थोड़ी दूरी पर बड़ी-बड़ी मेहराबें बनाई गई हैं, जो फूलों और पत्तों से सजाई गई हैं और जिन पर हीरे-मोतियों के अक्षरों में नसीहत भरी बातें लिखी हुई हैं। जहाँ देखो वहीं हवा में झण्डियाँ फहरा रही हैं। पेड़ों की छाया में फूलों-फलों, पानों और इत्र वग़ैरह की छोटी-छोटी दूकानें सजी हुई हैं। सड़क के दोनों तरफ़ ज़रदोज़ी के तम्बू तने हुए हैं, जिनमें कहीं गाना-बजाना और कहीं खेल-तमाशा हो रहा है। जहाँ तक नज़र जाती थी, आदमियों के सिर दिखाई पड़ते थे। सभी हँसी-ख़ुशी में मग्न थे। शाहज़ादा ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता गया, त्यों-त्यों उसे नई-नई और अजीब चीज़ें दिखाई देती गईं।

मगर शाहज़ादे का मुँह उतरा हुआ था। वह बार-बार यही ख़्याल करता था कि बाहर तो इतनी धूम-धाम है,

मगर भीतर चूहे दण्ड पेल रहे हैं! मुफ़्त ही आज मेरी हँसी हुई। थोड़ी ही देर में वह वापस लौट आया। मगर भीतर पहुँचते ही उसने जो कुछ देखा, उससे ताज्जुब भी हुआ और .खुशी भी हुई। जो जगह थोड़ी देर पहले सुन-सान थी, वहाँ अब आदमियों की धूम हो रही थी। सैकड़ों नौकर-चाकर भड़कीले कपड़े पहने हुए मौजूद थे। कोई यहाँ आता था, कोई वहाँ जाता था। सभी मुस्तैदी से अपने-अपने काम में जुटे हुए थे। किसी को बात करने की .फ़ुरसत न थी। हज़ारों आदमियों को खिलाने-पिलाने की तैयारियाँ हो रही थीं। सोने की जवाहर-जड़ी रक़ाबियों और प्यालियों में बड़ी सफ़ाई से खाने-पीने का सामान सजाया जा रहा था। मकान की सजावट भी देखने लायक़ कर दी गई थी। जहाँ-तहाँ चमकीले जवाहरों और .खुशबू-दार फूलों के गुच्छे और हार दिखाई पड़ते थे। तमाम महल खाने-पीने की चीज़ों, इत्र और फूलों की मीठी .खुशबू से महक रहा था। झुण्ड के झुण्ड गवैये तरह-तरह के बाजे बजाते मीठे स्वर से यहाँ-वहाँ अलाप रहे थे। मतलब यह कि ख़ातिरदारी का जो सामान था, अनूठा था। शाहज़ादे ने सपने में भी ख़याल न किया था कि मेरे यहाँ मेहमानों के आगत-स्वागत के लिए ऐसा बढ़िया इन्तज़ाम होगा। इस-लिए मारे ख़ुशी के उसकी तबियत खिल गई। वह मन ही मन अपनी बन्दरी शाहज़ादी को धन्यवाद देने लगा।

इतने में एक नौकर दौड़ता हुआ आया और शाहज़ादे से बोला—"हुज़ूर, बादशाह सलामत की सवारी आ रही है।" शाहज़ादा फ़ौरन बाहर गया और बादशाह व दूसरे रईसों को महल के सब से ज़्यादा सजे हुए कमरे में ले आया। अब सब लोग खाना खाने बैठे। शाहज़ादे का यह ठाट-बाट देख सभी दङ्ग हो रहे थे। कुछ लोग तो खाना खाते-खाते आपस में कहने लगे—"भई, हम तो दिल्लगी देखने आये थे, मगर यहाँ तो कुछ और ही रङ्ग है। ऐसी शानो-शौकत बादशाहों को तो क्या देवताओं को भी नसीब न होगी। झूठ क्यों कहें, हमने ज़िन्दगी में न तो कहीं ऐसी सजावट देखी, न ऐसे बर्तन देखे, न ऐसे खाने ही खाये। जो चीज़ है, लाजवाब है।" जब सब लोग खा-पी चुके तो शाहज़ादे ने उनसे कहा—"आप लोगों ने जिन जड़ाऊ रक़ाबियों और प्यालियों में खाना खाया है, वे सब आप ही की हैं, मेहरबानी कर क़बूल कीजिए।" अब तो सब लोग दाँतों उँगली दबाकर रह गये और आपस में बार-बार शाहज़ादे की तारीफ़ करने लगे।

इतने में बादशाह ने शाहज़ादे से कहा—"प्यारे बेटा! इसमें शक नहीं कि तुमने हम लोगों की ख़ूब ख़ातिर की। तुम्हारा ठाट-बाट भी ख़ूब बढ़ा-चढ़ा है। मगर मुझे यह जानने की इच्छा नहीं कि तुमने यह दौलत और ये अनूठी चीज़ें कैसे हासिल कीं। तुमने हम लोगों को जैसा मज़ेदार

खाना खिलाया है वैसा आदमी तो क्या फ़रिश्तों को भी न मिलता होगा। मगर मैं तुमसे हरगिज़ न पूछूँगा कि यह खाना किसने तैयार किया है। मैं तो केवल तुम्हारी बहू को देखना और आशीर्वाद देना चाहता हूँ।"

यह सुनते ही शाहज़ादे की तमाम ख़ुशी धूल में मिल गई। वह समझ गया कि अब मेरा फ़ज़ीता हुआ। बादशाह का भी यही मतलब था, इसीलिए उसने बहुओं को देखने की यह चाल चली थी। उसने ख़याल किया था कि छोटा शाहज़ादा चार लोगों में अपनी बन्दरी बेगम को लाते हुए शरमाएगा, समझ जायगा कि बन्दरी को बेगम बना कर मैंने कैसी बेवक़ूफ़ी की है और तब वह दूसरी शादी न करने की ज़िद आसानी से छोड़ देगा।

सचमुच इस समय शाहज़ादे को बड़ी शरम मालूम हुई। मगर लाचारी थी, बेचारा 'जो हुक्म' कहकर धीरे-धीरे शाहज़ादी के कमरे की तरफ़ चला। जब वह भीतर पहुँचा, तो एक तेज़ उजेले से उसकी आँखें चौंधिया गईं। उसने देखा कि कमरे में कहीं बन्दरी का पता नहीं है और उसकी जगह एक जड़ाऊ तख्त पर वही ख़ूबसूरत औरत बैठी है, जिसे वह पिछले दिन पेड़ के खोखले वाले महल में देख चुका था। शाहज़ादे को बहुत ताज्जुब हुआ। उसने औरत से कहा—"आप यहाँ कहाँ? मेरी शाहज़ादी कहाँ है?"

औरत मुस्कुराकर बोली—शाहज़ादे साहब, जब से मैंने आपको देखा है, तभी से आपकी सूरत मेरे हृदय में बस गई है। इसीलिए मैंने आपकी शाहज़ादी को यहाँ से हटा दिया है। अब आप उसकी उम्मीद हमेशा के लिए छोड़ दीजिए। उसकी जगह मैं आपकी बेगम बनने को तैयार हूँ।

अपनी शाहज़ादी का यह हाल सुनते ही शाहज़ादे की आँखें भर आईं। मारे ग़ुस्से के उसका मुखड़ा तमतमा उठा। उसने रुँधे हुए गले से कहा—ओ पाजी औरत, तूने यह क्या किया! तू नहीं जानती कि बन्दरी मेरी बीबी है और मैं उसे कितना चाहता हूँ। क्या तेरी ख़ूब-सूरती में भूल कर मैं अपनी बीबी को छोड़ दूँ? नहीं-नहीं, ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता। जब मैंने तुझे देखा था तो ख़याल किया था कि तू एक नेक औरत है। मगर अब मालूम हुआ कि उस वक़्त मैं धोखे में था।

औरत हँस कर बोली—शाहज़ादे साहब, आप जानते हैं कि मैं कौन हूँ? सुनिए, मैं परियों की रानी हूँ। अगर मेरी ख़ूबसूरती आपको मोहित नहीं कर सकती तो न सही, मैंने आपके साथ जो एहसान किया है, उसका ही कुछ ख़याल क़ीजिए। मैंने आपके मेहमानों की ख़ातिरदारी के लिए क्या नहीं किया? कैसे-कैसे खाने तैयार कराये! कहिए तो सही, इन्सान ने कभी और भी ऐसा खाना

खाया था? मेरी बात मानिए, मुझे अपनी बीबी बना लीजिए, फिर आपको दुनिया में किसी तरह के सुख की कमी न रहेगी। अगर आपने मेरी बात नहीं मानी तो याद रखिए, पलक मारते आपका यह राज-पाट और यह मुल्क बरबाद कर दूँगी।

शाहज़ादे ने चीख़ कर कहा—चाहे तू परियों की रानी हो, चाहे डाइन हो—मुझे इससे कोई ग़रज़ नहीं। बन्दरी ही मेरी बेगम है—मेरी शाहज़ादी है। तू हरगिज़ उसकी जगह नहीं पा सकती। मैंने तुझसे कब कहा था—कब विनती की थी कि तू मेरे साथ एहसान कर? तूने मेरी बन्दरी को निकाल दिया, यह कहाँ का भलमनसाहत है? अगर तुझे अपनी भलमनसाहत का ख़याल है, तो मेरी बन्दरी मुझे दे दे। इस एहसान के बदले मैं ताज़िन्दगी तेरा ग़ुलाम बन कर रहूँगा।

यह कह कर शाहज़ादा परी के पैरों पर गिर पड़ा।

परी चमक कर तख़्त से नीचे उतर पड़ी और शाहज़ादे का हाथ पकड़ कर बोली—हैं-हैं! यह क्या ग़ज़ब करते हैं आप। मेरे मालिक! इस क़दर न घबराइए। मैं ही आपकी बन्दरी—आपकी शाहज़ादी हूँ। मैं आपकी मुहब्बत का इम्तिहान लेना चाहती थी, इसीलिए बन्दरी के चोले में रहती थी। अगर आपको यक़ीन न हो तो वह देखिए, कोने में बन्दरी का चमड़ा पड़ा है।

शाहज़ादे ने परी की तरफ़ सन्देह-भरी आँखों से देख कर कहा—अपनी सच्चाई का कुछ सबूत दे सकती हो? क्या जाने, तुमने मेरी बन्दरी को मार कर उसका चमड़ा रख दिया हो।

"हाँ, सबूत लीजिए।" यह कह कर परी फ़ौरन बन्दरी बन गई। अब तो शाहज़ादे को जो खुशी हुई, वह बयान के बाहर है। उसने उछल कर बन्दरी को गोद में उठा लिया और कहा—मेरी शाहज़ादी! अब मुझे तुम पर पूरा यक़ीन हो गया। मेहरबानी कर फ़ौरन अपनी असली शकल में आ जाओ। अब मेरी शरम-आबरू तुम्हारे ही हाथ में है।

यह सुनते ही बन्दरी फिर परी बन गई। उसने बड़े प्रेम से शाहज़ादे को तख़्त पर बिठाया, फिर वह भी उसकी बग़ल में जा बैठी और बोली—'उठ, उठ, उठ!' तख़्त धीरे-धीरे ऊपर उठा और उड़ता हुआ उस कमरे में पहुँचा, जहाँ सब लोग जमा थे। शाहज़ादे ने शाहज़ादी को बादशाह के सामने पेश किया। उसका वह जगमग रूप देखते ही लोगों की आँखें झँप गईं। लोग आये तो थे गूँगी और बहरी बन्दरी को देख कर हँसने के इरादे से, मगर उसकी जगह ख़ूबसूरती की वह आग देख ताज्जुब में डूब गये। बादशाह तो ऐसी बहू पाकर निहाल हो गया। उसने इस बहू को और बहुओं से कहीं बहुत अधिक और क़ीमती जवाहिरात और गहने दिये। अब तो शहर भर में छोटे

शाहज़ादे की सचाई और छोटी बहू के रूप की बड़ाई होने लगी।

छोटे शाहज़ादे की यह बढ़ती देखी तो उसके भाइयों को बड़ी डाह हुई। वे जब-तब आपस में बातें किया करते—भाई, यह तो बड़ा भाग्यवान् निकला। हम तो समझते थे कि यह बन्दरी को लिए बैठा है, मगर इसकी तक़दीर तो देखो, बन्दरी आख़िर में परी निकली। हम लोगों को मामूली औरतें मिलीं और इसके भाग्य में परी बदी थी। यह तो बड़ा ग़ज़ब हुआ। भला इसके सामने हमें अब कौन पूछेगा? और परी के सामने तो हम लोगों की औरतों की पूरी आफ़त है। धीरे-धीरे उनकी जलन बढ़ती ही गई। वे हमेशा छोटे भाई को नुक़सान पहुँचाने की एक न एक हिकमत सोचते रहते। अन्त में एक दिन उन्होंने छोटे शाहज़ादे से कहा—भाई, तुम्हारी बीबी परी है। तुम नहीं जानते कि परियों की तबीयत कितनी चञ्चल होती है। हमने सुना है कि तुमने वह चमड़ा बड़े जतन से रख छोड़ा है, जिसे पहिन कर तुम्हारी बीबी पहले बन्दरी बनी रहती थी। यह तो बड़े ख़तरे की बात है। अगर किसी दिन तुम्हारी बीवी का मिज़ाज बिगड़ गया और वह फिर बन्दरी बन बैठी, तो फिर क्या करोगे? हाथ मल-मल कर पछताओगे या नहीं? हम तो यही बेहतर समझते हैं कि वह चमड़ा जला दिया जाय। बस, न रहेगा

बाँस, न बजेगी बाँसुरी। ख़तरे की चीज़ पास रखना कौन सी अक़्लमन्दी है?

शाहज़ादा झाँसे में आ गया। भाइयों की बातों में उसे अपनी बहुत भलाई जान पड़ी और उसने फ़ौरन वह चमड़ा उठा कर एक जलती हुई भट्टी में फेंक दिया।

मगर चमड़ा फेंकते ही ग़ज़ब हो गया। शाहज़ादी के तमाम बदन से आग की लपटें निकलने लगीं। वह "मैं जली, मैं भुनी, मैं मरी" की चीख़ मचाती हुई यहाँ-वहाँ भागने लगी और थोड़ी ही देर में आँखों से ओझल हो गई। उसी के साथ बग़ीचा, बाज़ार और ठाट-बाट का दीगर सामान, जिसे वह अपने साथ लाई थी, ग़ायब हो गया। यह देखकर शाहज़ादे को अपनी बेवक़ूफ़ी और बदक़िस्मती पर बहुत अफ़सोस हुआ। बेचारा सिर धुन-धुन कर रोने लगा।

यह सुनते ही बादशाह और वज़ीर दौड़े आये। उन्होंने शाहज़ादे को बहुत समझाया—तुम भी बड़े नादान हो! भला परी और इन्सान में कैसे मेल हो सकता है? वह हवा की रहने वाली थी, हवा में ही जा मिली! उसके लिए अफ़सोस करना सरासर बेवक़ूफ़ी है। रञ्ज करने का क्या काम? तुम शाहज़ादे हो—तुम्हें आसानी से एक-से-एक बढ़िया बावन गण्डे औरतें मिल जायँगी।

मगर सब समझाना-बुझाना बेकार हुआ। शाहज़ादे का कलेजा लोट-पोट हो रहा था, उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे, और वह बार-बार यही कहता था—"हाय मेरी शाहज़ादी ! मैंने तुझे मार डाला ! अब तू मुझे कहाँ मिलेगी ?" उसका यह हाल देखा, तो बादशाह को बड़ी फ़िक्र हुई। उसने सोचा कि कहीं शाहज़ादा इस हालत में अपनी जान न खो दे या कहीं भाग कर ही न चला जाय। बस, उसने कड़े पहरे का इन्तज़ाम कर दिया, और पहरे-दारों को सख़्त ताकीद कर दी कि शाहज़ादे पर पूरी-पूरी निगरानी रक्खी जाय। अब तो शाहज़ादा अपने ही मकान में क़ैद हो गया, बेचारा शाहज़ादी की खोज में भी न जा सका।

मगर शाहज़ादे के दिल में जो आग लगी थी, वह दिनोंदिन भड़कती रहती थी। वह हमेशा यही सोचा करता था कि अगर मौक़ा मिले, तो यहाँ से भाग निकलूँ और अपनी शाहज़ादी की तलाश करूँ। आख़िर एक दिन मौक़ा मिल ही गया। पहरेदारों को ग़ाफ़िल देखते ही शाहज़ादा निकल खड़ा हुआ, और सीधा वहीं पहुँचा, जहाँ वह बरगद का पेड़ था। मगर अब कहीं बरगद का नाम भी न था, उसकी जगह थोड़ी सी राख अलबत्ता पड़ी थी। अब तो शाहज़ादे को और भी अफ़सोस हुआ, और वह बड़ी ही नाउम्मेदी की हालत में आगे बढ़ा। जब भूख

लगती, तो पेड़ों के फल तोड़कर खा लेता, प्यास सताती तो झरनों का पानी पीता और जब थक जाता तो आसमान के नीचे नङ्गी धरती पर पड़ रहता और "शाहज़ादी! शाहज़ादी!" चिल्लाया करता।

इसी तरह चलते-चलते उसने कितने ही नदी-नाले और जङ्गल-पहाड़ पार कर डाले। उसके पैरों में छाले पड़ गये और हिम्मत ने जवाब दे दिया। अन्त में वह एक ऐसे आदमी के पास पहुँचा, जो एक ही पैर से खड़ा था और बार-बार एक ही आवाज़ लगा रहा था—"एक बार तुझे देखा है, एक बार और दिखाई दे जा!" उस आदमी का तमाम बदन सूखकर काँटा हो गया था, आँखें गढ़े में धँस गई थीं, और बाल बहुत बढ़ गये थे। देखने में वह बिलकुल हड्डियों का ढाँचा जान पड़ता था।

उस आदमी को देखकर शाहज़ादे को बड़ा ताज्जुब हुआ। उसने सोचा—यह तो मेरे ही समान दुखिया मालूम पड़ता है। इसका हाल मालूम करना चाहिए। यह सोच कर वह उस आदमी के पास पहुँचा, और बोला—"अरे भाई, तुम कौन हो, और इस तरह दुःख-भरी आवाज़ में क्यों चिल्ला रहे हो?"

उस आदमी ने कहा—"मुसाफ़िर, मेरा हाल क्या पूछते हो! मैं एक शाहज़ादा हूँ। अपने दोस्तों के साथ शिकार खेलने आया था। रास्ता भूल कर इस जङ्गल में

आ निकला, तो क्या देखता हूँ कि एक बहुत ही ख़ूब-सूरत औरत, जिसके तमाम बदन में आग लगी हुई थी, उड़ी जा रही है। वह बार-बार चीख़ती थी—'मैं जली, मैं भुनी, मैं मरी।' जब से मैंने उस औरत को देखा है, तभी से मेरी यह हालत हो रही है।" यह कह कर उसने एक ठण्डी साँस ली और फिर ज़ोर से आवाज़ लगाई—"एक बार तुझे देखा है, एक बार और दिखाई दे जा!"

यह सुनते ही शाहज़ादे की आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली। फिर उसने आँखें पोंछते-पोंछते कहा—हाय! उस औरत को जलाने वाला पापी मैं ही हूँ। वह मेरी बीबी है। अब मैं उसी की तलाश में घूम रहा हूँ। बतलाइए, ख़ुदा के वास्ते मेहरबानी कर बतलाइए कि वह किस तरफ़ गई है?

वह आदमी रास्ता बतला कर बोला—मैं ख़ुदा से अर्ज़ करता रहूँगा कि आपकी कोशिश कामयाब हो। अगर वह परी आपको मिल जाय, तो मिहरबानी कर मुझे एक बार उसकी सूरत ज़रूर दिखला दीजिए। मैं इसी जगह आपके लौटने की राह देखूँगा। लीजिए, मेरा यह लोहे का डण्डा भी लेते जाइए। इसमें एक बड़ी सिफ़त है। यह अपने मालिक का हुक्म ख़ूब मानता है। इसे किसी को पीटने का हुक्म दे दो; बस यह उसे—चाहे

वह कोई भी क्यों न हो, कहीं भी क्यों न हो—भुरता बनाकर ही दम लेगा। मुसीबत में यह आपकी बड़ी मदद करेगा।

शाहज़ादे ने डण्डा ले लिया। इस कृपा के लिये उस आदमी को धन्यवाद दिया और आगे की राह ली।

महीनों बीत गये। शाहज़ादा बड़े-बड़े जङ्गलों, पहाड़ों और रेतीले मैदानों की धूल छानता रहा। उसके पैर छलनी हो गये, पर उसने हिम्मत न हारी। वह शाहज़ादी-शाहज़ादी पुकारता हुआ बराबर आगे बढ़ता गया। बड़ी-बड़ी मुसीबतें झेलने के बाद एक दिन वह एक ऐसे बग़ीचे में पहुँचा, जो एक बहुत लम्बे-चौड़े रेतीले मैदान के बीचो-बीच था। आसमान से बरसती हुई आग और धू-धू करके धधकती हुई धरती ने शाहज़ादे को बेदम कर दिया था। मारे प्यास के उसका दम घुट रहा था। वह बेधड़क बग़ीचे में घुस गया। सामने ही एक पतली नहर बह रही थी; शाहज़ादे ने उसके ठण्डे पानी से हाथ-मुँह धोया और अपनी प्यास बुझाई। फिर वह एक घने पेड़ की छाया में बैठकर सुस्ताने लगा। इतने में सितार की मीठी झङ्कार से बग़ीचे का कोना-कोना गूँजने लगा। शाहज़ादा उठ कर खड़ा हो गया, और उसी तरफ़ चला, जहाँ से सितार की आवाज़ आ रही थी। दस-बीस क़दम चलने के बाद वह एक घने कुञ्ज के पास पहुँचा। उसी के भीतर

बैठा हुआ एक .खूबसूरत जवान अपने आपको भूलकर सितार बजा रहा था। उसकी उम्र कोई तीस साल की रही होगी। वह इतना अच्छा बाजा बजा रहा था कि बहुत से पशु-पक्षी भी उसके पास आ बैठे थे, और अपनी सुध-बुध खोकर बाजा सुन रहे थे। शाहज़ादा भी चुपचाप बाजा सुनने लगा।

सितार बड़ी देर तक बजता रहा। जब बजाने वाले की उँगलियाँ दर्द करने लगीं, तो उसने बाजा एक तरफ़ रख दिया, और एक ठण्ढी साँस खींचकर ज़ोर से आवाज़ लगाई—"एक बार तुझे देखा है, एक बार और दिखाई दे जा।"

शाहज़ादे ने चौंक कर उससे पूछा—"तुम कौन हो, और तुम्हारी इस आवाज़ का क्या मतलब है ?"

उस नौजवान ने जवाब दिया—"भई मुसाफ़िर, मैं एक सौदागर का बेटा हूँ। कोई छः महीने की बात है, इसी रास्ते से रोज़गार करने जा रहा था। जब यहाँ आया तो एक बहुत ही .खूबसूरत औरत पर मेरी नज़र पड़ी। वह उड़ती जा रही थी। उसे चारों तरफ़ से आग की लपटें घेरे हुए थीं, और वह बहुत ही दर्द-भरी आवाज़ में चिल्लाती थी—"मैं जली, मैं भुनी, मैं मरी!" बस, जिस दिन से उसे देखा है, यहीं पड़ा-पड़ा हाय-साँसें भर रहा हूँ। तुम शायद मुझे सिड़ी समझोगे, मगर सच कहता हूँ,

अगर एक बार भी वह रूप देख लो, तो तुम्हारी भी यही हालत हो जाय।"

तब तो शाहज़ादे ने उसे अपना सब हाल सुना दिया, फिर उससे कहा—अच्छा भाई, अब तुम यह और बतला दो कि मेरी शाहज़ादी किस रास्ते से गई है? अगर वह मिल सकी, तो लौटती बार मैं तुम्हें उसकी सूरत दिखाता जाऊँगा।

सौदागर-बच्चे ने शाहज़ादे को रास्ता बतला दिया और अपना सितार देकर कहा—यह भी लेते जाइए, शायद आपके कुछ काम आ जाय। इसमें यह करामात है कि जो इसकी आवाज़ सुनता है, वह अपने आपको भूल जाता है।

शाहज़ादा सितार लेकर, और इस मिहरबानी के लिए सौदागर-बच्चे को धन्यवाद देकर आगे बढ़ा। रास्ते में उसे बड़ी-बड़ी मुसीबतों से मुक़ाबला करना पड़ा। ऐसी-ऐसी ख़तरनाक जगहों से गुज़रना पड़ा, जिन्हें देख बड़े-बड़े बहादुरों के पित्ते पानी हो जाते। मगर शाहज़ादे ने हिम्मत का पल्ला न छोड़ा, शाहज़ादी के नाम का सहारा उसे बराबर आगे बढ़ाता रहा। कई महीने बाद वह एक ऐसे पहाड़ के पास पहुँचा, जिसकी चोटियाँ आसमान को चूम रही थीं। उसकी ज़मीन इतनी ढालू थी कि उस पर पैर रखने में भी जान काँप जाती। मगर शाहज़ादे को तो

आशा का बल था। उसने सोच लिया था कि अगर इन मुसीबतों पर फ़तह पा ली, तो मेरी शाहज़ादी मुझे मिल जायगी। और अगर मुसीबतों से लड़ते-लड़ते मर भी गया, तो शाहज़ादी के बिछोह के दुःख से छुट्टी पा जाऊँगा। बस, उसने .खुदा का नाम लेकर पहाड़ पर चढ़ना शुरू किया। एक-एक क़दम ज़मीन आहिस्ता-आहिस्ता पार की। आख़िर वह पहाड़ की चोटी पर जा ही पहुँचा। ऊपर पहुँचते ही उसके कानों में आवाज़ पड़ी, मानों कोई रो-रोकर पुकार रहा है—"एक बार तुझे देखा है, एक बार और दिखाई दे जा।"

शाहज़ादे ने चौंक कर चारों तरफ़ देखा, मगर कोई दिखाई न दिया। हाँ, आवाज़ उसी तरह आती रही। अब तो शाहज़ादे ने वहाँ की चप्पा-चप्पा ज़मीन छान डाली, फिर भी किसी का पता न चला। शाहज़ादे को बड़ा ताज्जुब हुआ। उसने सोचा—.खुदा जाने कौन रो रहा है, अगर इसका पता चल जाता तो कुछ नई बात मालूम होती। जान पड़ता है, यह भी शाहज़ादी को देख चुका है। यह सोचकर उसने ज़ोर से कहा—"भाई, इस बियाबान में कौन रो रहा है? मेहरबानी कर मुझे दर्शन दो। मैं भी एक दुखी आदमी हूँ। तुम चाहे जो हो, यह इतमीनान रक्खो कि मेरे ज़रिये तुम्हारा कोई नुक़सान न होगा।" शाहज़ादे ने यह कहा ही था कि उसे एक दुबला-पतला

नौजवान दिखाई दिया। शाहज़ादे ने उससे पूछा—"भाई, तुम पर ऐसा क्या दुःख आ पड़ा, जो घर-द्वार छोड़ वियाबान में इस तरह रो रहे हो?" उस आदमी ने जवाब दिया—"जनाब, क़रीब एक साल पहले की बात है। मैंने यहाँ एक बहुत ख़ूबसूरत औरत देखी थी। उसके शरीर को आग की लपटें घेरे हुए थीं, और वह बड़ी ही दर्द-भरी आवाज़ में "मैं जली, मैं भुनी, मैं मरी" की पुकार मचाती हुई उड़ी जा रही थी। जब से उसे देखा है, यहाँ इसी हालत में जान दे रहा हूँ। क्या कहूँ, आया था शिकार करने, खुद ही शिकार बन बैठा।

शाहज़ादे ने एक आह मार कर कहा—मैं अभागा ही उस औरत का पति हूँ, और मेरी ही बदौलत उस बेचारी की यह हालत हुई है। अब उसकी तलाश में इस क़दर वन-वन की धूल छानता फिर रहा हूँ।

तब उस आदमी ने शाहज़ादे को एक टोपी देकर कहा—ख़ुदा आपको कामयाबी दे। यह टोपी ले लीजिए। इसमें एक बड़ी अजीब करामात है, वह यह कि जो इसे पहिन ले, वह तो सबको देखे, मगर उसे कोई न देखे। यह इसी टोपी का असर था, जो अभी आप मुझे नहीं देख सके थे। मुझे आशा है कि यह टोपी मौक़ा पड़ने पर आपको बड़ी मदद देगी। मगर कामयाबी होने के

बाद इसी रास्ते से लौटिएगा। जब तक आप न लौटेंगे, मैं इसी मुक़ाम पर आपकी राह देखते पड़ा रहूँगा।

शाहज़ादे ने टोपी लेकर उसे धन्यवाद दिया, और शाहज़ादी के जाने का रास्ता पूछ कर आगे क़दम बढ़ाया। कुछ दिन के बाद वह फिर एक पहाड़ के सामने जा पहुँचा। उसकी ऊँची चोटियाँ बर्फ़ से ढँकी हुई थीं। सूरज की रोशनी में बर्फ़ चाँदी के समान चम-चम हो रही थी, और चारों तरफ़ ठण्ढी-ठण्ढी हवा के झोंके चल रहे थे। मगर शाहज़ादा अपनी धुन में था—कठिनाई को रौंदता हुआ पहाड़ पर चढ़ने लगा। मारे सर्दी के हाथ-पैर ऐंठने लगे, कट-कट दतौरी बजने लगी, साँस लेना मुश्किल हो गया। मगर ज्यों-ज्यों मुश्किलें सामने आती थीं, त्यों-त्यों शाहज़ादे का जोश बढ़ता जाता था। आख़िर वह पहाड़ पर चढ़ ही गया और एक मसजिद में पहुँचा। मसजिद बिलकुल बर्फ़ की इमारत थी, उसकी दीवालें, उसके खम्भे, उसकी छत—सभी चीज़ें बर्फ़ से तैयार की गई थीं। मगर उसके भीतर काफ़ी गर्मी थी। शाहज़ादे को बहुत आराम मिला।

मसजिद में एक फ़क़ीर मौजूद था। वह बिलकुल बुड्ढा था। तमाम शरीर में झुर्रियाँ पड़ गई थीं और सन के समान सफ़ेद दाढ़ी कमर तक लटक रही थी। उस वक़्त उसके हाथ में तस्बीह थी और वह आँखें बन्द किये ख़ुदा की याद कर रहा था। शाहज़ादा हाथ बाँध कर बड़े ही

अदब से उसके सामने खड़ा हो गया। थोड़ी देर में फ़क़ीर ने आँखें खोलीं और शाहज़ादे की तरफ़ देख कर कहा—मुझे तेरा सब हाल मालूम है। तू परियों के बादशाह की बेटी को खोजता फिर रहा है। उसका मकान कोह-काफ़ की चोटी पर है। वह अभी ज़िन्दा तो है, मगर बहुत बुरी हालत में है। अच्छा जा, मैं तुझे एक लेप देता हूँ, इसे ले जा। कोई आदमी कितना ही क्यों न जल गया हो, इस लेप के असर से फ़ौरन अच्छा हो जायगा। ये खड़ाऊँ भी लेता जा। इनमें यह करामात है कि तू जहाँ जाना चाहेगा, ये तुझे फ़ौरन वहीं पहुँचा देंगी।

शाहज़ादे ने लेप और खड़ाऊँ लेकर फ़क़ीर को धन्य-वाद दिया। फिर उसने खड़ाऊँ पर पैर रक्खा और कोह-काफ़ जाने की इच्छा की। उसकी यह इच्छा होते ही खड़ाऊँ धीरे-धीरे हवा में ऊपर उठने लगे, और इसके बाद ही हवा से बातें करने लगे। शाहज़ादा बात करते कोह काफ़ में जा पहुँचा। उसने शहर के बाहर एकान्त जगह में, जहाँ कोई न आता-जाता था, डेरा डाला।

इसके बाद शाहज़ादा टोपी पहिन कर शहर देखने चला। शहर बहुत बड़ा था और उसकी सजावट देखने ही लायक़ थी। वहाँ के रहनेवाले—क्या औरत और क्या मर्द, सभी बहुत सुन्दर थे। शाहज़ादा शहर घूमता-फिरता राजमहल के पास पहुँचा। उसे कोई देख तो सकता ही

नहीं था—वह बेखटके राजमहल में चला गया। एक-एक कमरे को देखता हुआ वह उस कमरे में घुसा, जिसमें शाहज़ादी पलङ्ग पर पड़ी कराह रही थी। उसकी वह हालत देखते ही शाहज़ादे की आँखें भर आईं। उसके जी में आया कि अभी शाहज़ादी के सामने हो जाऊँ और लेप लगाकर उसे अच्छी कर दूँ, मगर कुछ सोचकर वह बाहर निकल आया।

डेरे पर आकर शाहज़ादे ने टोपी उतारी और फ़क़ीर का भेष बनाकर सितार बजाना शुरू किया। धीरे-धीरे चारों तरफ़ सितार की आवाज़ गूँजने लगी। जिसके कान में वह आवाज़ पड़ती, वही शाहज़ादे के पास आ बैठता। देखते-देखते तमाम शहर उमड़ पड़ा, जैसे सब लोगों पर जादू की लकड़ी घुमा दी गई। जिसने सितार की वह झङ्कार सुनी, वही मोहित हो गया। होते-होते बादशाह के कानों तक सितार की तारीफ़ पहुँची। तब वह भी शाहज़ादे के पास आया, और सितार की वह मोहिनी आवाज़ सुनकर बहुत ख़ुश हुआ। उसने ख़याल किया कि यह फ़क़ीर बहुत होशियार है, शायद शाहज़ादी का कुछ इलाज कर सके। बस, वह हाथ बाँधकर बोला—शाह साहब, मेरी भी एक अर्ज़ सुन लीजिए। किसी पाजी आदमी ने मेरी बेटी को जला दिया है। इस वक़्त वह [illegible]त बीमार है। अगर आप उसे अच्छी कर दें, तो [illegible]

मेहरबानी होगी। वही मेरी आँखों की पुतली है—वही मेरे घर का चिराग़ है। अगर आप उसे अच्छी कर देंगे, तो जो माँगेंगे, मैं वही दूँगा।

शाहज़ादे ने कहा—बादशाह, मैं न तो हकीम हूँ, न जादूगर। दवा-दारू या झाड़-फूँक करना क्या जानूँ। फिर हम लोग ख़ुदा के बन्दे हैं, कभी किसी के मकान पर क़दम नहीं रखते। अपनी लड़की को यहीं ले आओ। शायद कोई हिकमत कर सकूँ।

बादशाह गिड़गिड़ा कर बोला—हुज़ूर, उसकी हालत इस क़दर गिर गई है कि उसे यहाँ तक लाना बिलकुल ग़ैर-मुमकिन है। अगर लाऊँ भी तो अन्देशा है कि वह रास्ते में ही दम तोड़ दे। ख़ुदा के वास्ते आप ही तकलीफ़ कीजिए। बड़ा सवाब होगा।

इस तरह बादशाह ने शाहज़ादे को बहुत मनाया तब कहीं वह उसके साथ जाने को तैयार हुआ। परीज़ाद एक तख़्त ले आये और उन्होंने बादशाह और शाहज़ादे को बात की बात में महल में पहुँचा दिया। उस वक़्त शाहज़ादी सो रही थी। शाहज़ादे ने योंही उसकी जाँच की और फिर वह लेप एक दासी को देकर कहा—"यह दवा शाहज़ादी के बदन पर लगा दो, शायद कुछ फ़ायदा हो जाय।" ज्योंही लेप लगाया गया त्योंही शाहज़ादी अच्छी

होकर विस्तर पर बैठ गई। अब क्या था, शहर भर में शाहज़ादे की वाह-वाह होने लगी।

शाहज़ादी शाहज़ादे को देखते ही पहिचान गई। वह उसका नाम लेकर कुछ कहना ही चाहती थी कि शाहज़ादे ने उसे इशारे से मना कर दिया। जब बादशाह ने देखा कि मेरी बेटी सचमुच अच्छी हो गई है, तो उसकी ख़ुशी का ठिकाना न रहा। उसने शाह से हाथ जोड़ कर कहा—शाह साहब, आपने मेरे साथ जो नेकी की है, मैं किसी भी हालत में उसका बदला नहीं चुका सकता। फिर भी आप जो चाहें माँग लीजिए।

शाहज़ादे ने जवाब दिया—अगर आप सचमुच मेरी नेकी मानते और उसका बदला चुकाना चाहते हैं, तो अपनी यही बेटी मुझे दे डालिए।

शाहज़ादे के मुँह से यह बात निकली ही थी कि बादशाह आग-बबूला हो गया और उबल कर अपने नौकरों से बोला—इस भिखमङ्गे की इतनी हिम्मत! इसे अभी पकड़ कर क़ैदख़ाने में डाल दो! इसने मेरे साथ जो नेकी की है, उस पर अपनी बदनीयती से आप ही धूल डाल ली है।

यह सुनते ही शाहज़ादे ने टोपी पहिन ली और अपने डण्डे को हुक्म दिया कि बादशाह और उसके आदमियों को ख़ूब पीटो। हुक्म पाते ही डण्डा दौड़ा और दनादन

सबकी ख़बर लेने लगा। अब तो राजमहल में हाहाकार मच गया। बादशाह ने चीख़ कर कहा—शाह साहब! मेरी बेवक़ूफ़ी माफ़ कीजिए। अब मेरे सामने आ जाइए, आप जो चाहते हैं, वही पावेंगे। ख़ुदा के वास्ते रहम कीजिए—मेहरबानी कर अपने डण्डे को रोक लीजिए।

शाहज़ादे ने टोपी उतार ली और डण्डे को रोक कर उन लोगों के सामने होकर कहा—मेरी ताक़त देख ली? अफ़सोस है कि आप लोगों को रास्ते पर लाने के लिए मुझे डण्डे से काम लेना पड़ा। बादशाह सलामत, अब आप अपनी बेटी को ले आइए और उसी के साथ अपने मुल्क की तीन सब से ज्यादा ख़ूबसूरत परियाँ भी दीजिए। आपने अपने वादे को तोड़ा है, इसलिए अपने ख़ज़ाने के चुने हुए हीरे-जवाहिर लाइए। इसके सिवा मुझे एक उड़न-खटोले की भी ज़रूरत है, जिस पर बैठ कर मैं अपने मुल्क को लौट सकूँ।

बादशाह ने फ़ौरन सब चीज़ें शाहज़ादे के सामने पेश कीं। तब शाहज़ादा उड़न-खटोले पर बैठा। शाहज़ादी और बाक़ी परियाँ भी सब लोगों से मिल-भेंट कर उसके पास आ बैठीं। अब उड़नखटोला धीरे-धीरे ऊपर उठने लगा, और फिर शाहज़ादे के मुल्क की तरफ़ उड़ चला। रास्ते में शाहज़ादे ने फ़क़ीर के दर्शन किये और उससे आशीर्वाद लिया। फिर वह अपने उन तीनों दोस्तों को, जिन्होंने टो[illegible]ी,

सितार और डण्डा देकर उसकी सहायता की थी, साथ लेता हुआ आगे बढ़ा। वे लोग भी शाहज़ादे को शाहज़ादी समेत लौटा हुआ देख कर बहुत खुश हुए। शाहज़ादे ने अपने शहर में पहुँच कर उन तीनों परियों की शादी, अपने उन्हीं दोस्तों के साथ कर दी। इस तरह सब लोगों के दिन फिरे और वे ख़ुशी-ख़ुशी रहने लगे।

बादशाह ने तो अपने खोये और बिछुड़े हुए बेटे को पाकर बड़ी ख़ुशियाँ मनाईं। उसने दिल खोल कर बेटे-बहू पर प्यार किया। मगर जब उसे मालूम हुआ कि यह इतनी बड़ी ख़राबी मेरे छहों बेटों की बदौलत ही हुई थी, तो वह उन पर बहुत नाराज़ हुआ, और उसने हुक्म दिया कि इन पाजियों को मुल्क से बाहर निकाल दो। पर छोटे शाहज़ादे ने बादशाह से कहा—"नहीं अब्बा, इनका क़ुसूर माफ़ कर देना चाहिए। आख़िर ये मेरे बड़े भाई ही हैं। अगर इन्हें परदेश में तकलीफ़ होगी तो हमारा ही नाम बदनाम होगा।" इस पर बादशाह ने उन लोगों को माफ़ कर दिया।

भाग्य

मेरा नाम धर्ममित्र है। मैं जाति का ब्राह्मण हूँ। मेरे पिता चम्पा नगरी में रहते थे। उनके पास धन-सम्पदा की कमी न थी। जब वे मरने लगे, तो अपना सब धन हम दोनों भाइयों को बराबर-बराबर बाँट गये। मैं बड़ा था। मेरे छोटे भाई का नाम था—अग्निमित्र। जैसा उसका नाम था, वैसा ही उसका स्वभाव था। चौबीसों घण्टे उसकी नाक पर रूई जला करती थी। जरा सी बात हुई और उसे ताव आया। कुछ दिन तक तो हम दोनों भाई मिल-जुल कर रहे, मगर अन्त में अग्निमित्र बिगड़ उठा। मैंने लाख समझाया, मगर वह न माना। अपना हिस्सा लेकर अलग हो गया। उसकी इस हरकत से मुझे बहुत रञ्ज हुआ, पर क्या करता, कुछ उपाय भी नहीं था।

अग्निमित्र ने अलग होकर रोजगार में मन लगाया। रोजगार खूब चल निकला। स्वभाव का वह हलका था ही, एक-एक पैसे का हिसाब रखता और खूब सोच-समझ कर

पैसा ख़र्च करता। नतीजा यह हुआ कि उसके घर में कञ्चन बरसने लगा। मगर मेरा हाल कुछ और था। मेरे पास भी धन की कमी न थी, मैंने भी ख़ूब रोज़गार बढ़ाया। अच्छी आमदनी होने लगी। पर मैं ठहरा धर्म-मित्र। जहाँ अग्निमित्र एक-एक पैसा दाँतों पकड़ता—पैसे को ही मुहर समझता—वहाँ मैं मुहर को भी कौड़ी के बराबर न समझता था। अन्धाधुन्ध ख़र्च करता था। धर्म करने और दान देने में मेरी बड़ी रुचि थी। दीन-दुखियों की तो बात ही क्या, सण्डे-मुसण्डे भी मेरे द्वार पर आकर मनमानी मुराद पाते थे। आख़िर वह दिन भी आया, जब इस लापरवाही ने मुझे आठ-आठ आँसू रुलाया।

दिन-रात ख़र्च होने पर भरे कुएँ भी ख़ाली हो जाते हैं। फिर मेरी बिसात ही कितनी थी। धीरे-धीरे मेरा धन घटने लगा। मैं तन तोड़ कर पैसा पैदा करने में जुटा रहता, मगर धन बढ़ना तो दूर रहा, दिनोंदिन घटता ही जाता था। अन्त में मैं पूरा कङ्गाल बन बैठा। एक-एक दाने के लिए मुहताजी आ गई। अब दीन-दुखी तो मेरे द्वार पर कभी आ भी जाते थे, मगर सण्डे-मुसण्डे दिखाई भी न देते थे। मैं अपनी हालत पर मन ही मन रोता और कहता—"हे ईश्वर! मैंने इतना दान-पुण्य किया, फिर भी तू रूठ गया! मैंने ऐसा कौन सा पाप किया है, जिसकी

यह सज़ा पा रहा हूँ? हाय! क्या दान-पुण्य इसीलिए किया जाता है?"

मेरा हाल अग्निमित्र से भी न छिपा रहा। एक दिन उसने मेरे पास सन्देशा भेजा—"इस तरह घर में कहाँ तक पड़े रहोगे? अगर जी चाहे तो मेरे घर का ही कुछ काम-काज किया करो।" मैं बड़ी आशा से उसके पास पहुँचा! उसने कहा—"मुझे एक नौकर की ज़रूरत है। तुम्हारी इच्छा हो, तो मैं तुम्हें वह जगह दे सकता हूँ। मगर काम ईमानदारी से करना पड़ेगा। तनख्वाह दस रुपये माहवार मिलेगी।" छोटे भाई की ऐसी दो टूक बात सुनी, तो मेरी छाती में तीर-सा चुभ गया। मगर लाचारी थी। मैंने पेट के लिए उसकी नौकरी कर ली। अब मुझे नहीं, मेरी स्त्री को भी उसके यहाँ दिन भर मज़दूरों के समान पिसना पड़ता था, तब कहीं शाम को हमें दो रोटियाँ नसीब होती थीं। हाय! पापी पेट के लिए क्या नहीं करना पड़ता? एक दिन वह था, जब हमारे यहाँ भी बीसों नौकर-चाकर लगे रहते थे, न जाने कितने लोग मुँह-माँगी चीजें पाते थे। मगर आज भाग्य के फेर ने हमें कितना ग़रीब बना दिया था। पेट के लिए हम दूसरे का मुँह ताकते थे! छोटे भाई की ग़ुलामी करते मुझे कितनी शरम मालूम होती थी, मन ही मन कैसी तकलीफ़ होती थी। पर इन बातों से अब क्या फ़ायदा? भाग्य जो करावे, वही थोड़ा है।

जब आदमी पर आफत आती है, तो चारों तरफ से आती है। एक दिन की बात है, अग्निमित्र ने मुझे चाँदी के कुछ बर्तन दिये और उन्हे साफ कर लाने का हुक्म दिया। जब मै बर्तन साफ कर नदी से लौटा, तो एक बर्तन घट गया। अग्निमित्र उन्हे गिनते ही बडे ताव से बोला—"एक बर्तन कहाँ गया ?" मुझे काटो तो बदन मे खून नही। मैं अपनी समझ मे बड़ी होशियारी से बर्तन साफ कर लाया था। अब मुझसे जवाब देते न बना। अग्निमित्र ने बिगड कर कहा—"चुप क्यों हो ? बर्तन कहाँ छिपा रक्खा है ?" हाय री गरीबी ! मैने ढेर के ढेर रुपये लुटा दिये थे, ऐसे-ऐसे न जाने कितने बर्तन खैरात कर डाले थे। मगर आज भाग्य के फेर से, न कुछ जरा से बर्तन ने मुझे चोर बना दिया। मैंने अग्निमित्र को जवाब दिया—"भाई, मै गरीब हो गया हूँ, जो जी मे आये कह लो। मगर इतमीनान रक्खो, मैने तुम्हारा बर्तन नहीं चुराया। मेरे हाथों तुम्हारा एक बर्तन घट गया है, यह मेरा दुर्भाग्य है, और क्या कहूँ !"

मेरा यह कहना था कि अग्निमित्र लगा बडबडाने और तरह-तरह की गालियाँ बकने। मैं अभागा चुपचाप अपने भाग्य पर रो रहा था। मगर अग्निमित्र का गुस्सा ठण्ढा न हुआ। उसने अपने नौकरों को हुक्म दिया—"खड़े-खडे क्या देखते हो ? ले जाओ इस चोट्टे को पुलिस

मे। जब वहाँ यमदूत इसकी खबर लेंगे, तो फौरन चोरी का माल बतला देगा।"

यह देख अग्निमित्र के अन्य नोकर उससे बोले—"सरकार, आप यह क्या करते हैं? ये आपके बड़े भाई हैं। अगर आप इन्हे पुलिस मे भेजेंगे, तो आपकी ही बदनामी होगी। लोग क्या कहेंगे? बर्तन की तरफ न देखिए, अपनी इज्जत की तरफ देखिए।" जब उन लोगो ने उसे इस तरह समझाया, तो कही उसका गुस्सा ठण्ढा हुआ। फिर भी उसने मुझे जवाब दिया—"यहाँ चोरों की गुजर नही हो सकती, अब इस दरवाजे पर न झाँकना।"

मैं अपने करम को ठोकता हुआ घर लौट आया। उस दिन की बाते याद आते ही आज भी मेरी आँखे भर आती हैं। मैंने कभी सोचा भी न था कि एक दिन मुझे चोर बनना पड़ेगा और इस तरह मेरी आबरू दो कौड़ी की हो जायगी। आते तो घर आ गया, पर मेरे रोम-रोम मे दु:ख की आग धधक रही थी। मैंने सोचा—लोग मुझे क्या कहते होंगे, धर्ममित्र ने अपने भाई का बर्तन चुरा लिया। यद्यपि मैंने चोरी नहीं की, चोरी का विचार भी मेरे मन मे नही आया। पर ये बाते पूछता कौन है? लोग तो बात का बतङ्गड बनाना जानते हैं। अब तक शहर भर मे यह बात फैल गई होगी। लोग मेरे नाम पर थूकते होंगे। अब मैं लोगों को अपना काला

मुँह कैसे दिखाऊँगा ? ऐसे जीने से तो मर जाना ही बेहतर है।

धीरे-धीरे आधी रात हुई। मैने मरने की ठानी और घर से बाहर क़दम रक्खा। मगर मरना कितना मुश्किल है ! मरने की बात सोचते ही प्राण कॉपने लगे। मन मे आप ही आप खयाल आया—"मैने किसी के बाबा की चोरी तो की नहीं ! अगर लोग मुझे चोर समझने लगे, तो मै क्या करूँ और उनके समझने न समझने से होता ही क्या है ? उनका मन—उनकी बाते, लाख बार मुझे चोर समझा करे !" मगर इज्जत की बात याद आते ही दिल बैठ गया। जिस आदमी की इज्जत नहीं वह आदमी ही क्या ? बेइज्जत होकर जिये भी तो क्या ? लोग कल ही मेरी तरफ उँगली उठावेगे और कहेगे—यही अग्निमित्र का भाई धर्ममित्र है, जो कल किसी को अपने बराबर न समझता था, वही आज जरा-जरा सी चीज़ चुराता फिरता है ! आह ! ऐसी बात सुनने के पहले ही मर जाना अच्छा है।

जैसे-तैसे जी कड़ा करके मैने पैर आगे बढाये। चलते-चलते नदी किनारे पहुँचा। मगर वहाँ पहुँचने पर क्या देखता हूँ कि एक सवार हाथ मे नङ्गी तलवार लिये घाट पर टहल रहा है। मै आया तो था मरने, पर सवार को देखते ही मेरी जान सूख गई। अब यह फिक्र हुई कि कहीं

और किसी मुसीबत में न फँस जाऊँ, नहीं तो मरने से भी हाथ धो बैठूँ। हाय! मैं कैसा बदनसीब हूँ, मरना चाहता हूँ, मगर मर नहीं सकता, मौत भी मेरे पास आते घबराती है। मैं ये बातें सोच ही रहा था कि सवार ने घुड़क कर मुझसे पूछा—तू कौन है? इतनी रात गये यहाँ क्यों आया है?

अब तो मेरी सिट्टी भूल गई। कहाँ का मरना और कहाँ का जीना! मैंने घबरा कर उसे जवाब दिया—महा-राज, मैं अग्निमित्र का बड़ा भाई धर्ममित्र हूँ। आज यहाँ उसके कुछ बर्तन साफ करने आया था। मगर एक कटोरी यहीं भूल गया। उसे ही ढूँढने आया हूँ। आप कौन हैं?"

सवार ने जवाब दिया—मुझे नहीं जानता? मैं अग्निमित्र का भाग्य हूँ। उसी के बर्तन की रखवाली कर रहा हूँ। मैंने कटोरी निकाल कर घाट पर रख दी है। ले जा।

यह सुनते ही मेरे जी में जी आया। अब मैं मरने की बात भूल गया। मैंने गिड़गिड़ाकर अग्निमित्र के भाग्य से कहा—महाराज, मैं एक दुखी आदमी हूँ। दुख सहते-सहते बहुत दिन बीत गये। कहिए, कभी मेरे दिन भी फिरेंगे या नहीं?

सवार ने जवाब दिया—धर्ममित्र, घबराओ नहीं। तुम्हारे दिन जरूर फिरेंगे और खूब फिरेंगे। थोड़े दिन

बाद तुम पहले से भी अधिक सुखी हो जाओगे। बात यह है कि तुमने दान-पुण्य तो बहुत किया था, मगर वह पाप से भरा हुआ था। इसी से तुम्हारा भाग्य तुमसे रूठ गया—वह विन्ध्य पर्वत पर जा सोया है। जब तुमको उस पाप की सजा मिल चुकेगी, तब वह जाग उठेगा। बस, छ महीने की देर और समझो।

इतना कहकर अग्निमित्र का भाग्य तो चला गया, पर मैं सोच मे डूब गया। बडी देर तक यही खयाल करता रहा कि आखिर मैंने कौन सा पाप किया है? पर मेरी समझ मे कुछ न आया। तब मै मरने जीने के सवाल पर विचार करने लगा। लोग मुझे चोर समझते रहे, पर छ. महीने की ही देर है, जब भाग्य जागेगा तो फिर कोई मुझे चोर न समझेगा। जरा-सी बात के पीछे ईश्वर के दिये हुए इन प्राणों को खो देना तो और भी पाप है। अच्छा, अब मुझे अपने भाग्य को जल्दी जगाना चाहिए। अब तो काम-काज मे जुट जाने मे ही सार है। बिना मेहनत किये बिना काम-काज किये तो किसी का भाग्य जागता नही। वह आदमी ही क्या, जो अपने भाग्य को न जगा सके। वैसे कोई आलस्य में पडा रहे, कुछ काम-धाम न करे, और भाग्य को कोसा करे, तो इसमे भाग्य का क्या कुसूर! ऐसे ही विचार करते-करते मैंने वह कटोरी उठा ली, और मन ही मन ख़ुश होते हुए घर की राह पकडी।

मैंने सवेरा होते ही कटोरी अग्निमित्र को सौंप दी, मगर रात का कुछ हाल न सुनाया और सुनाने से फायदा ही क्या था ? भला मेरी बात पर यकीन ही कौन करता ? मगर मैंने अपनी पत्नी को कुल हाल सुना दिया और विन्ध्य की राह ली। कितने ही नदी-नाले और जङ्गल-पहाड़ लाँघता हुआ मैं विन्ध्य पर पहुँचा। पहाड़ की चोटी पर एक खूबसूरत महल बना था। मैं धड़धड़ाता हुआ उसके भीतर जा घुसा। एक कमरे में एक बड़ा ही अच्छा पलङ्ग पड़ा था, जिस पर एक आदमी पड़ा-पड़ा खर्राटे भर रहा था। मैंने सोचा, हो न हो, यही मेरा भाग्य है। बस, मैंने उसे फौरन जगाया। जागते ही उसने पूछा—"धर्म-मित्र, तुम यहाँ कहाँ! तुम्हें मेरा पता किसने बतला दिया ?"

मैं मारे खुशी के उछल पड़ा। मैंने उससे कहा—वाह ! क्या कहना ! मैं वहाँ मर रहा हूँ, और तुम यहाँ चैन की वंशी बजा रहे हो। एक बार तो मेरी खबर ली होती !

भाग्य ने जवाब दिया—भई, तुम्हारा कहना है तो सच, मगर इसमें मेरा क्या कुसूर ? तुमने जैसा किया, वैसा पाया। अभी तो मुझे नींद आ रही है। कुछ दिन और ठहरो, फिर तो जागूँगा ही।

तब मैंने उससे कहा—कहते क्या हो। मैं भूखों मर रहा हूँ और तुम्हें सोने को सूझी है। जब मैं ही न रहूँगा,

तब तुम जाग कर क्या करोगे ? भला बताओ तो, मैंने ऐसा कौन सा खोटा काम किया है, जिससे तुम्हे ऐसी नींद आ रही है ?

वह हँस कर बोला—वाह ! यह खूब कही ! तुमने बीसों आदमियों की जिन्दगी मिट्टी मे मिला दी, फिर भी पूछते हो कि मैंने क्या किया है ?

अपने खयाल से मैंने धर्म-पुण्य के सिवा कभी पाप न किया था। उसकी ऐसी बाते सुन मुझे बडा ताज्जुब हुआ। मैं आँखे फाड-फाड उसकी तरफ देखने लगा। तब भाग्य कहने लगा—"धर्ममित्र, ताज्जुब करने की बात नहीं है। मैं सच कह रहा हूँ। यद्यपि तुमने अपनी समझ मे खूब दान-पुण्य किया है, पर सच पूछो तो वह बडा ही पाप था। अच्छा सुनो, दीन-दुखियों को दान देना—उनकी सहायता करना तो ठीक है, मगर सण्डे-मुसण्डे, हट्टे-कट्टे आदमियों को, जो हाथ-पैर चला कर चार पैसे पैदा कर सकते हैं, दान देने से क्या फायदा हुआ ? उल्टा तुमने उन्हे आलसी और बेकार बना डाला। उनको तुम्हीं ने मुफ़्तखोर बनाया है न ? बताओ उनकी यह मिट्टी किसने बरबाद की ? अब वे निकम्मे बन कर तुम्हारी जान को रोते हैं। तुमने इस तरह पानी में पैसा बहाया—लक्ष्मी का अपमान किया। बोलो, यह पाप है या नहीं ? तुम्हे इस पाप की सजा मिलनी चाहिए या नहीं ?"

अब तो मेरी आँखे खुल गई। मै खूब समझ गया कि किसे दान देने से पुण्य और किसे देने से पाप होता है? मैन सिर झुका कर उससे कहा—भई, तुम्हारा कहना बिलकुल सच है। बेशक मुझसे गलती हुई। पर अब तो तुम्हे मुझ पर दया करनी चाहिए। तुमसे दया का दान पाये विना मैं यहाँ से न हटूँगा।"

तब भाग्य बोला—भई, तुम नाहक जिद करते हो। कुछ ठहरो। तुम्हारे सुख के दिन आ रहे हैं।

परन्तु मैं किसी तरह न माना। तब उसने एक कङ्कड़ दिया। उसे कङ्कड देते देख मुझे बुरा तो बहुत लगा, मगर भाग्य की दी हुई चीज न लेना भी मैने ठीक न समझा। हाथ बढ़ाकर वह कङ्कड़ ले लिया और घर की राह ली। रास्ते भर बडी उदासी रही। इतनी मिहनत की—पचास कोस चलकर विन्ध्य गया, फिर भी भाग्य ने दगा दी। थोडे ही दिन मे मेरे दिन पलटेगे—यही सोच कर किसी तरह मन को समझाया।

घर पहुँचते ही पत्नी ने सवाल किया—"कहो, क्या लाये?" मैंने जवाब दिया—"लाया क्या, अपना सिर! नाहक ही उतनी दूर भटका। क्या करूँ, भाग्य ही टेढ़ा है। बहुत विनती की, मगर वह दुष्ट न पसीजा और दिया भी तो पत्थर का टुकडा दिया। थोडे दिन की बात

और है, तब तक धीरज धरो।" यह कह कर मैने पत्थर का वह टुकडा उसके सामने फेक दिया।

मगर यह क्या! मेरी आँखों मे चकाचौंधी लग गई। देखा तो वह पत्थर नही था, बडा खूबसूरत, पानीदार और कीमती हीरा था। अब मेरी खुशी का क्या कहना? मेरा मन नाच उठा। मै एकदम अपनी स्त्री से बोला—"बस, अब अपना भाग्य जाग उठा, सुख के दिन आ पहुँचे। देखो न, घर आते-आते कङ्कड हीरा बन गया।" उस हीरे को देखकर मेरी पत्नी भी बहुत खुश हुई। सच है, मेहनत का फल मीठा ही होता है।

हीरा बहुत क़ीमती था। मामूली आदमी उसे क्या खरीदेगा—यह सोच मैं राजा के पास पहुँचा। राजा ने मुझे खजाञ्ची के पास भेज दिया। मैंने उसे हीरा दिखलाकर कहा—"मै यह हीरा बेचना चाहता हूँ। रुपयों की सख्त जरूरत है। अगर आप इसे खरीद लेंगे, तो बडी कृपा होगी।" हीरा देख कर खजाञ्ची बहुत खुश हुआ। एक लाख मे सौदा तय हो गया। मै मन ही मन सुख के सपने देखने लगा। इतने मे खजाञ्ची ने एक डिब्बी निकाली। उसमें तीन हीरे रक्खे हुए थे। एकाएक खजाञ्ची ने मुझसे पूछा—"तुम कौन हो, कहाँ से आये?" मैंने उसकी तरफ देखा तो उसका चेहरा तमतमा रहा था। उसके सवाल से मुझे कुछ ताज्जुब सा हुआ। मैने उसे जवाब दिया—

"क्यों ? मेरा नाम धर्ममित्र है। शहर के सब लोग मुझे खूब जानते हैं।" यह सुनते ही खजाञ्ची नाराज होकर बोला—"ओह ! मालूम हो गया। तूने अपने भाई की कटोरी चुराई थी। आज तूने यहाँ तक हाथ साफ कर दिया ! इस डिब्बी मे ऐसे-ऐसे चार हीरे रक्खे थे। अब देखता हूँ, तो तीन ही हैं। एक गायब हो गया। जरूर यह वही हीरा है। तूने यही से माल चुराया और यही आँखों मे धूल झोंकने आया। वाह रे होशियार !"

खजाञ्ची के इशारे पर सिपाहियों ने मुझे फौरन बाँध लिया। मै कितना ही रोया-चिल्लाया, कितनी ही कसमे खाईं, कितनी ही धर्म की दुहाई दी, पर किसी ने मेरी एक भी न सुनी। मुझ पर मुकदमा चलाया गया। मजिस्ट्रेट ने दो साल की सजा सुना दी। मै जेल मे भेज दिया गया। पैरो मे बेडियाँ डाल दी गई। मेरी पूरी दुर्दशा हो गई। मै माथा पीट कर रह गया। दिन-रात भाग्य की दगाबाजी पर रोता और उसे कोसता था। कोई भी मेरी सुध लेने वाला न था। अगर तसल्ली थी तो इसी बात की कि कभी तो मेरे दिन फिरेंगे।

मुझे जेल की हवा खाते अभी पूरे सात दिन भी न हुए थे कि जेल-दारोगा आया। उसने मेरी बेडियाँ खोल दी। मन मे आशा की लहर दौड गई कि कहीं मेरा भाग्य जाग तो नही उठा। थोडी देर बाद ही मै राजा के सामने

पेश किया गया। अब तो मेरी आशा पर ठण्ढा पानी पड़ गया। घिग्घी बँध गई। मैं थर-थर काँपने लगा। मन ही मन सोच रहा था—"हे ईश्वर! अब क्या होने वाला है! बहुत हो चुका, ख़ूब तमाशे देख चुका, अब तो दया कर।"

जान पड़ता है, ईश्वर ने मेरी पुकार सुन ली। मुझे काँपता देख राजा बोला—"धर्ममित्र, डरने की बात नहीं, ईश्वर तुम्हारा भला ही करेगा।" फिर उसने मुझे एक अच्छे आसन पर बिठाया और कहा—"धर्ममित्र, तुम्हारे साथ बड़ा अन्याय हुआ। इसके लिए बहुत रञ्ज है। तुमने चोरी नहीं की—ख़ज़ाञ्ची की भूल से ही तुम्हें इतना कष्ट उठाना पड़ा। अब तुम्हें हीरे की दूनी क़ीमत मिलेगी। आशा है, तुम यह अन्याय भूल जाओगे।" मैं समझ गया कि भाग्यदेव जाग उठे। मेरी आँखों में आँसू आ गये। मैंने हाथ जोड़ कर राजा से कहा—"महाराज, यह न कहिए। इसमें आपका कोई दोष नहीं, सब दोष मेरे भाग्य का ही है। पर कृपा कर यह तो बताइए कि आपको यह मालूम कैसे हुआ कि मैं बेक़ुसूर हूँ!"

तब राजा बोला—"धर्ममित्र, बात उसी दिन की है, जिस दिन तुम्हें सज़ा हुई थी, मैं रात को अपने महल में आराम कर रहा था। कोई ग्यारह बजे होंगे कि महल में एकदम चारों तरफ़ अँधेरा छा गया। एक साथ सब दिये बुझ गये। मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ। ताज्जुब की बात ही

थी। पर महारानी जी की आत्मा काँप उठी। उन्होंने मुझसे कहा—'महाराज, यह तो बड़ा ही कुसगुन है। ऐसा तो कहीं आज तक न हुआ होगा। आपने किसी को बेक़ुसूर सताया तो नहीं—किसी को सज़ा तो नहीं दे डाली?' तब मैंने उन्हें तुम्हारे मुक़दमे का सब हाल सुनाया। वे कुछ सोच कर बोलीं—'ज़रूर इसी मुक़दमे में कुछ गड़बड़ हो गई है। मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि ब्राह्मण बेक़ुसूर है। मैजिस्ट्रेट ने उसे बिना कुछ समझे ही सज़ा दे डाली है। आप खुद इस मुक़दमे की जाँच फिर से कीजिए। किसी को बेमतलब दुःख देने से ईश्वर प्रसन्न नहीं होता। जब तक आप इस मुक़दमे की जाँच न कर डालेंगे, मुझे चैन न पड़ेगी।'

"दूसरे दिन से ही मैंने तुम्हारे मामले की जाँच-पड़ताल शुरू कर दी। ख़ज़ाञ्ची से वे तीनों हीरे मँगवाये। तुम्हारे हीरे की भी जाँच की तो वह उन तीनों से अलग जान पड़ा। क्योंकि उसकी चमक-दमक कुछ तेज़ थी। मैंने सब हीरे रानी को भी दिखलाये। वे उन्हें देखते ही बोलीं—'मैं तो उसी समय जान गई थी कि ब्राह्मण बेक़ुसूर है। उसका हीरा तो अलग ही दिखता है। अपने हीरों के साथ वाला हीरा तो मेरे पास है, उस दिन मैंने ही ख़ज़ाञ्ची से मँगवा लिया था। ख़ज़ाञ्ची भी कैसा भुलक्कड़ है—भले आदमी को अपनी ही दी हुई चीज़ की याद न रही।'

कर रानी वह हीरा उठा लाई । वह तीनों हीरों से
ा। तुम्हारा हीरा उनसे किसी तरह मेल नहीं
बस, मैं समझ गया कि तुम बेक़ुसूर हो। तब तो
त अफ़सोस हुआ। मैंने फ़ौरन् तुम्हें छोड़ देने का
र लिया।"

बीच में मेरा भाई भी, मेरे कई दोस्तों को साथ
के छुड़ाने की ग़रज़ से राजा के पास आ पहुँचा।
ी बातें सुन कर सबको बड़ा ताज्जुब हुआ।
ाक देख मैंने भी सबको अपने भाग्य की लीला
ौर राजा से कहा—"महाराज, यह सब मेरे
ा करतब है। उसने न जाने कैसे-कैसे तमाशे
झे कैसी-कैसी मुसीबतों में डाला। अच्छा, अब
की लीला भी सुन लीजिए।" यह कह कर मैंने
ापनी बीती हुई सुना दी। लोगों ने मेरी बातों
किया और करते क्यों न, अब तो मेरा भाग्य
था।

में राजा ने हीरे के बदले मुझे दो लाख रुपये
ये। मैं दोस्तों से घिरा हुआ हँसता-हँसता अपने
। आज सभी लोग मेरा आदर कर रहे थे। क्यों
ब भाग्य सीधा होता है, तब दुश्मन भी दोस्त हो

अब मेरे दिन चैन से कटते हैं। मैंने लापरवाही के नाम से उसी दिन से कान पकड़ लिये थे। अब लापरवाही तलाश करने पर भी मेरे सामने नहीं आती।

आँखों की दवा

बहुत दिन पहले की बात है; सुवीर देश में जयसिंह नामक एक राजा राज्य करता था। उसकी रानी सुनयना बड़ी सुन्दर और गुणवती थी। वह अपने पति की आज्ञा कभी न टालती थी। राजा उससे जो कुछ कहता, वह वही करती थी। इसलिए राजा भी उसे बहुत चाहता था। जयसिंह के तीन बेटे थे। सुनयना अपने बेटों पर बहुत प्यार करती थी। जब बेटे सुनयना के सामने खेलते और मीठी-मीठी बातें करते, तब वह उन्हें देख, मारे ख़ुशी के फूली न समाती। कुछ दिनों बाद सुनयना के चौथा बेटा पैदा हुआ। राजा जयसिंह को बड़ी ख़ुशी हुई। राजमहल के सामने बाजे बजने लगे। भिखारियों को रुपये-पैसे और कपड़े बाँटे जाने लगे। गान-तान से महल गूँज उठा।

दसवें दिन राजा ने पण्डितों को बुलवाया। वे बग़ल में पोथी-पत्रा दबा-दबा कर दरबार में जा पहुँचे। राजा ने उनसे राजकुमार का नाम वग़ैरह पूछा। पण्डितों ने

जवाब दिया—"महाराज, राजकुमार बड़े भाग्यवान् होंगे। बड़े बहादुर होंगे, सब राजाओं को जीत कर उन पर राज्य करेंगे। आप इनका नाम राजहंस रखिए। और तो सब ठीक है, पर एक बात है, आप बारह बरस तक राजकुमार का मुँह न देख सकेंगे, नहीं तो आपकी आँखें जाती रहने का खटका है।" राजा ने पण्डितों की बात मान ली और उन्हें इनाम देकर छुट्टी दी।

महल में ख़ुशी से राजहंस का पालन होने लगा। वह भी दिन दूना और रात चौगुना बढ़ने लगा। जब राजहंस कुछ बड़ा हुआ, तो राजा ने उसे पढ़ने-लिखने और तीर-तलवार चलाना सीखने के लिए एक गुरु को सौंप दिया। राजहंस मन लगा कर पढ़ना-लिखना और तीर-तलवार चलाना सीखने लगा। कुछ दिनों में वह बहुत होशियार हो गया और तीर-तलवार चलाने में तो हज़ारों में एक निकला। जयसिंह राजहंस की तारीफ़ सुनता, तो मन ही मन बहुत ख़ुश होता।

राजहंस खिलाड़ी भी ख़ूब था। पढ़ने-लिखने से छुट्टी पाते ही गेंद-डण्डा उठाता और अपने साथियों के साथ खेल-कूद में लग जाता था। एक दिन की बात है, राजा महल के एक कोठे में बैठा पूजा-पाठ कर रहा था। बाहर राजहंस खेल-कूद में मग्न था। इतने में उसकी गेंद उछल कर राजा की गोद में जा गिरी। राजहंस गेंद

उठाने के लिए धड़धड़ाता हुआ कोठे में जा पहुँचा। ज्योंही राजहंस पर राजा की नजर पड़ी, त्योंही वह अन्धा हो गया। उसके चारों ओर अँधेरा छा गया। अब तो राजा के क्रोध का ठिकाना न रहा। उसने तुरन्त मन्त्री को बुलाया और उससे कहा—"यह राजकुमार बहुत अभागा है। तुम इसे रानी समेत अभी बियाबान जङ्गल में छोड़ आओ। ऐसे दुःख की जड़ को मैं अब एक मिनट के लिए भी अपने पास नहीं रख सकता।"

मन्त्री ने राजा को बहुत समझाया। पर उसने मन्त्री की एक भी न सुनी। अब मन्त्री बेचारा क्या करता? लाचार हो वह रानी और राजकुमार को रथ में बिठा कर एक घने जङ्गल में छोड़ आया।

२

चारों ओर जङ्गल ही जङ्गल दिखाई देता था। वहाँ आदमी के पैरों के निशान तक दिखाई न देते थे। कोसों तक बस्ती का पता न था। रानी सुनयना अपनी यह हालत देख बिलख-बिलख कर रो रही थी। जङ्गल में चारों ओर उसके रोने की आवाज गूँज रही थी। बेचारे राजहंस की समझ में कुछ न आता था कि वह और उसकी माँ उस भारी राजमहल से निकाल कर क्यों इस जङ्गल में फेंक दिये गये। माँ को रोती देख वह भी बिसूर-बिसूर कर रो रहा था।

परन्तु उन लोगों का भाग्य चोखा था। थोड़ी ही देर में वहाँ घोड़े पर सवार एक सुन्दर पुरुष आ पहुँचा। वह क़ीमती कपड़े पहने हुए था। उसकी बग़ल में तलवार लटक रही थी। पीठ पर ढाल और तरकस बँधा हुआ था। एक ओर एक लम्बा धनुष भी लटक रहा था। देखने में वह राजा सा जान पड़ता था। उसने आते ही सुनयना से कहा—"बहिन, क्यों रो रही हो? तुम्हें किस बात का दुःख है? डरो मत! अपना सब हाल सुनाओ। बन सका तो मैं तुम्हारी सहायता भी करूँगा।"

तब सुनयना ने रोते-रोते उस मनुष्य को अपना सब हाल सुना दिया। सुनयना की कहानी सुन कर वह मनुष्य बोला—"ख़ैर बहिन, कोई हर्ज नहीं। अब तुम चिन्ता छोड़ो, दुःख दूर करो। जयसिंह ने तुम्हें निकाल दिया है, तो निकाल देने दो। मैं तुम्हारी सहायता करूँगा। मैं कामरूप देश का राजा हूँ, वीरसिंह मेरा नाम है। मैं भी दुखी आदमी हूँ, मेरे भी कोई सन्तान नहीं है। आज से राजहंस मेरा पुत्र हुआ, अब यही मेरे राज्य का मालिक होगा। तुम लड़के को लेकर मेरे साथ चलो। आज से तुम मेरी बहिन हुई। मेरे यहाँ तुम्हें कुछ भी कष्ट न होगा।" सुनयना राजहंस को लेकर वीरसिंह के साथ चली गई, और उसी के यहाँ किसी तरह अपने दिन काटने लगी।

राजहंस को वीरसिंह के यहाँ आनन्द ही आनन्द था।

वीरसिंह उस पर पुत्र के समान प्यार करता था। उसकी रानी भी राजहंस को ख़ूब चाहती थी। अब राजहंस को किसी प्रकार का कष्ट न था। वह जो चीज़ चाहता, फ़ौरन पाता था। वीरसिंह ने उसके पढ़ने-लिखने का भी अच्छा प्रबन्ध कर दिया था। सवेरे वह गुरु के पास जाता और लिखने-पढ़ने के सिवा तीर-तलवार चलाने का भी अभ्यास करता था। थोड़े ही दिनों में वह सब तरह से होशियार हो गया। उसमें और भी कितनी ही अच्छी-अच्छी बातें थीं। वह किसी से कड़ी बात न कहता था, सब से मीठा बोलता था। राजा-रानी को माता-पिता के समान समझता और कभी उनकी आज्ञा न टालता था। दीन-दुखियों की सेवा करने में भी उसकी रुचि थी। मतलब यह कि राजहंस ने सबके दिल में घर कर लिया था, और सब लोग उसे ख़ूब चाहने लगे थे।

धीरे-धीरे राजहंस पन्द्रह बरस का हुआ। वीरसिंह ने उसे होशियार हुआ देख अपना युवराज बनाया। उस दिन तमाम शहर में ख़ूब जल्सा मनाया गया। घर-घर रोशनी की गई, ग़रीबों को दान दिया गया। सब लोग वीरसिंह और राजहंस की जय बोलने लगे। आज सुनयना की छाती ठण्ढी हुई। वह पति के विछोह का दुःख भूल गई, राजहंस को युबराज हुआ देख फूले अङ्ग न समाई।

३

अब राजहंस की इच्छा घोड़े पर सवारी करने की हुई। वह चाहता था कि रोज़ाना शाम को घोड़े पर सवार हो हवाख़ोरी किया करूँ। एक दिन उसने वीरसिंह से एक अच्छा सा घोड़ा माँगा। वीरसिंह ने कहा—"बेटा, घोड़ा-शाला में नामी-नामी घोड़े मौजूद हैं। जो तुम्हें पसन्द हो, ले लो।" मगर राजहंस को एक भी घोड़ा पसन्द न आया। उसने राजा से कहा—"पिताजी, ये घोड़े तो किसी काम के नहीं हैं। मुझे इनसे भी अच्छा घोड़ा चाहिए।" तब वीरसिंह ने जवाब दिया—"बेटा इनसे अच्छे घोड़े तुम्हें कहाँ मिलेंगे? राज्य भर के घोड़े छाँट-छाँट कर ये घोड़े इकट्ठे किये गये हैं। अगर तुम्हें ये घोड़े पसन्द नहीं हैं, तो राज्य भर में घूम आओ, और अपने मन का घोड़ा ढूँढ़ लाओ।"

राजहंस को यह राय ठीक जान पड़ी। वह एक दिन कुछ सामान ले अकेला ही घोड़े की तलाश में निकल पड़ा। चलते-चलते वह एक दिन एक घने जङ्गल में जा पहुँचा। वहाँ एक महात्मा की सुन्दर झोपड़ी बनी थी। उसके चारों ओर एक छोटी सी फुलवारी भी थी, जिसमें तरह-तरह के फूल फूल रहे थे। उस समय महात्माजी तपस्या में मग्न थे। राजकुमार ने सोचा, महात्माओं की कृपा से सब कुछ हो सकता है, चलूँ इन्हीं की सेवा करूँ, शायद

इनकी दया से मुझे एकाध बढ़िया घोड़ा मिल जाय। बस, राजकुमार झोपड़ी में पहुँचा और मन लगा कर महात्माजी की धूनी टारने लगा।

थोड़े दिन में महात्माजी का ध्यान टूटा। राजहंस को अपनी सेवा करता देख वे बहुत प्रसन्न हुए। उससे बोले—बेटा, तूने मेरी खूब सेवा की। मैं तुझसे बहुत प्रसन्न हूँ, जो तुझे माँगना हो, माँग ले।

अब तो राजहंस बहुत खुश हुआ और हाथ जोड़कर बोला—प्रभो, यदि आप मुझे कुछ देना ही चाहते हैं, तो एक ऐसा घोड़ा दीजिए, जिसके मुक़ाबले का घोड़ा इस संसार में दूसरा न हो।

राजहंस की बात सुन महात्माजी सोच में पड़ गये! थोड़ी देर बाद बोले—बेटा, तूने चीज़ तो बहुत क़ीमती माँगी। ऐसा घोड़ा मिलना तो मुश्किल है। हाँ, राजा इन्द्र के पास ज़रूर नामी-नामी घोड़े हैं। मगर देवताओं की चीज़ आदमी को कैसे मिल सकती है? ख़ैर, मैं तुझे वचन दे चुका हूँ। राजा इन्द्र का एक घोड़ा बुलाये देता हूँ।

यह कह कर महात्माजी ने आग में घी की आहुति दी, और मन्त्र पढ़ना शुरू किया। मन्त्र ख़तम होते ही एक घोड़ा उड़ता हुआ वहाँ आ पहुँचा। वह आसमानी रङ्ग का था। उसके दोनों बाजुओं पर दो सुन्दर पङ्ख थे, जो उजेले में जगर-मगर हो रहे थे। उसकी ख़ूबसूरती

और सजावट देख कर राजहंस की तबियत खुश हो गई। महात्मा जी ने राजकुमार से कहा—"बेटा, यह घोड़ा ले जा। एकान्त में हमेशा इसकी पूजा करना। इसमें बड़े-बड़े गुण हैं। जहाँ तू जाना चाहेगा, यह तुझे वहीं पहुँचा देगा। हमेशा तेरी रक्षा करेगा। परन्तु एक काम करना, इसे हमेशा गधे के रूप में रखना। जब कभी जरूरत ही पड़ जाय, तो घोड़े के रूप में करना। अगर ऐसा न करेगा, तो तुझ पर आफ़त भी आ सकती है। ज्योंही तू इससे प्रार्थना करेगा, त्योंही यह गधे अथवा घोड़े के रूप में हो जायगा।"

महात्मा जी की बातें सुनकर राजहंस बहुत प्रसन्न हुआ। ज्योंही उसने घोड़े से प्रार्थना की, त्योंही वह गधा बन गया। फिर राजहंस ने महात्मा जी को प्रणाम किया और गधे पर सवार हो, घर की राह पकड़ी। शहर के लोग राजकुमार को गधे पर बैठा देख हँसने लगे। परन्तु उसने किसी की बातों पर ध्यान न दिया। वह सीधा महल में चला आया। उसका यह ठाट देख राजमहल के सब लोग बहुत दुखी हुए। वीरसिंह ने कहा—"बेटा, यह तूने क्या किया? ऐसे सुन्दर-सुन्दर घोड़े छोड़ तुझे गधा पसन्द आया! शहर के लोग क्या कहते होंगे!" राजहंस ने जवाब दिया—"पिताजी, आप चिन्ता न करें! यह गधा ऐसा है, जिस पर लाखों-करोड़ों घोड़े निछावर हो

सकते हैं! मुझे लोगों के हँसने की परवा नहीं, पर आप दुख न कीजिए। समय आने पर आप ही नहीं, तमाम दुनिया मेरे गधे की तारीफ़ करेगी।" यह सुन वीरसिंह ने फिर कुछ न कहा।

कुछ दिन बाद राजहंस ने राजा से कहा—"पिताजी, फ़ौजी सिपाहियों का एक जलसा कीजिए, जिसमें वे अपने करतब दिखलावें। तमाशा देखने के लिए शहर के लोग भी बुलाये जावें। बन सका, तो मैं अपने गधे की करामात भी दिखलाऊँगा।" राजा ने ख़ुशी से राजहंस की बात मान ली। एक दिन जल्सा किया गया। सिपाहियों ने अपने अनूठे कामों से सबको ख़ुश कर दिया। जब सब बहादुर अपने-अपने खेल दिखा चुके, तब राजकुमार अपने प्यारे गधे पर सवार हो मैदान में पहुँचा। मगर गधा मैदान में पहुँचते-पहुँचते घोड़ा बन गया। लोग सोच रहे थे कि हम राजकुमार के गधे की हँसी उड़ावेंगे, अब उसे घोड़े की शकल में देख चकित होकर रह गये। उन्होंने कभी ऐसा घोड़ा देखा ही न था। जब राजकुमार ने अपना काम शुरू किया, तब तो घोड़े की चञ्चलता, तेज़ी और उड़ान देख सभी दाँतों तले उँगली दबाकर रह गये। आपस में कहने लगे—"भई, यह घोड़ा है या बिजली?" जब राजकुमार का खेल ख़तम हुआ, तो सबके मुँह पर एक ही बात थी—"बस! ग़ज़ब है। हमने तो भई, न कभी ऐसा सवार

देखा न कभी ऐसा घोड़ा। दोनों एक दूसरे से बढ़कर हैं।"
मतलब यह कि लोग राजकुमार और उसके घोड़े की तारीफ़ों के पुल बाँधते हुए अपने-अपने घर लौटे।

आज वीरसिंह के चेहरे पर भी ख़ुशी बरस रही थी। उसने ख़याल भी न किया था कि राजहंस इतना होशियार हो गया है, और उसका गधा संसार के नामी से नामी घोड़ों के कान कुतरने वाला है।

४

आँखें चली जाने से जयसिंह के दुःख का ठिकाना न रहा। दो आँखों बिना सब संसार सूना हो जाता है। जयसिंह के पास किसी चीज़ की कमी न थी। मगर आँखों बिना सब सुख फीका था। नामी-नामी वैद्यों और हकीमों ने सिर मारा, मगर किसी के किये कुछ न हुआ। अन्त में एक संन्यासी आया। उसने राजा की आँखें देखकर कहा—"इस संसार में किसी के पास इन आँखों की दवा नहीं है। हाँ, इनमें चमेली के फूलों का रस डाला जाय तो ये अलबत्ता अच्छी हो सकती हैं। मगर चमेली के फूल मिलेंगे कहाँ? सात समुद्र पार उसका पेड़ है, और अप्सराओं के राजा की बेटी उसकी रखवाली करती है। किसकी मजाल है, जो वहाँ से फूल ला सके।"

यह कह कर संन्यासी तो चला गया, मगर जयसिंह को चमेली के फूलों बिना कहाँ चैन? उसने कई लोगों से

कहा, बड़े-बड़े इनामों का लालच दिया, मगर सबने यही जवाब दिया—"सरकार, हमने आपके इनामों से हाथ जोड़े, हमारी जान इतनी भारी नहीं है, जो हम सात समुद्र पार अप्सराओं के हाथों मरने जायँ।" तब जयसिंह ने राज्य भर में डौंड़ी पिटवा दी कि जो आदमी चमेली के फूल लायेगा, उसे हम अपना आधा राज्य देंगे और उसी के साथ अपनी बेटी का विवाह करेंगे। फिर भी सब लोग कानों में तेल डाले पड़े रहे। अन्त में तीनों राजकुमारों ने हिम्मत बाँधी और पिता से आज्ञा माँगी। पहले तो जयसिंह ने उनको रोका, पर जब वे न माने तो आज्ञा दे दी। तीनों भाई धूमधाम से फ़ौज-फाटे के साथ फूल लेने चले।

तीनों भाई कामरूप देश पहुँचे और वीरसिंह के महल के सामने से निकले। उस समय सुनयना महल की छत पर खड़ी थी। उसी के पास राजहंस भी मौजूद था। आज बहुत दिन बाद अपने प्यारे बेटों को देख मारे प्रेम के सुनयना की आँखों से आँसू बरसने लगे। उसे रोती देख राजहंस को बड़ा ताज्जुब हुआ। उसने सुनयना से पूछा—"माँ, यह क्या! तुम एकाएक रोने क्यों लगीं! तुम्हें किस बात से इतना दुःख हुआ?!" सुनयना ने जवाब दिया—"बेटा, फ़ौज के आगे घोड़ों पर तीन जवान जा रहे हैं। वे मेरे बेटे और तुम्हारे भाई हैं। इन्हें बहुत दिनों बाद

देखा है, इसी से मेरी आँखें भर आईं। न जाने ये कहाँ जा रहे हैं।" यह सुन राजहंस बोला—"अच्छा माँ, तुम फ़िक्र न करो। मैं अभी अपने भाइयों के साथ जाता हूँ। ज़रूरत पड़ने पर इनकी सहायता भी करूँगा। मैं बहुत जल्दी लौटूँगा। और तुम्हें भाइयों की यात्रा का कुल हाल सुनाऊँगा।"

माँ ने राजहंस को बहुत रोका, पर वह न माना। उसने कुछ ज़रूरी सामान लिया और अपने गधे पर बैठ भाइयों का पीछा पकड़ा।

५

राजहंस फ़ौज के पीछे-पीछे चला और थोड़ी ही देर में भाइयों के सामने जा पहुँचा। उसे देख कर एक भाई ने कड़ी आवाज़ में पूछा—"तू कौन है और क्या चाहता है।" राजहंस ने सोचा—"भाइयों से जान-पहचान है नहीं, कहीं सच्चा हाल बतलाने से बात न बिगड़ जाय। शायद ये लोग मुझ पर शक कर बैठें तो और भी बुरा होगा। यह भी हो सकता है कि भेद मालूम होने पर ये लोग मेरे साथ कोई बुराई कर बैठें या मुझे साथ ही न चलने दें। इसलिए अभी भेद छिपा रखना ही ठीक है।" बस उसने बड़ी दीनता से जवाब दिया—"सरकार, मैं एक ग़रीब धोबी हूँ। आपकी फ़ौज में नौकरी करना चाहता हूँ। अगर आपका हुक्म पाऊँ तो साथ चलूँ।" फ़ौज में

धोबी की कमी थी, अचानक उसके आ जाने से राजकुमार बहुत खुश हुए। उन्होंने राजहंस को अपने साथ चलने की आज्ञा दे दी।

रास्ते में राजहंस ने सिपाहियों से मिल कर अपने भाइयों की यात्रा का भेद मालूम कर लिया। सब हाल सुन चुकने पर राजहंस ने सोचा—जब ये लोग इस ठाट-बाट से जा रहे हैं, तब तो ये फूल ला चुके। पिताजी मेरे ही कारण यह दुःख झेल रहे हैं, इसलिए बेहतर तो यही है कि मैं ही उनका दुःख दूर करूँ। बस, उसने निश्चय कर लिया कि जैसे बनेगा, फूल लाकर ही रहूँगा।

चलते-चलते सब लोग कुसुमपुर नाम के एक शहर में पहुँचे। शहर क्या था, बग़ीचा था। चारों तरफ़ हरियाली ही हरियाली दिखाई देती थी। फूलों की महक दिल और दिमाग़ को तर कर देती थी। जहाँ देखो, वहीं ऊँचे-ऊँचे ख़ूबसूरत और साफ़-सुथरे मकान दिखाई देते थे। शहर में बड़ी ही सफ़ाई थी, कहीं नाम को भी गन्दापन न था। मतलब यह कि कुसुमपुर में पैर रखते ही आदमी की आँखें ठण्ढी हो जाती थीं, सारी थकावट दूर हो जाती थी। ऐसा नामी नगर देखते ही तीनों राजकुमार बहुत ख़ुश हुए और आपस में कहने लगे—"अगर हम लोगों को यहाँ का राज्य मिल जाय, तो क्या कहना! हमेशा चैन की वंशी बजे। आओ, कोशिश कर देखें, अगर काम

बन गया, तो फूल लाने की परेशानी से ही बचेंगे।" यह सोचते ही उन लोगों ने कुसुमपुर के राजा के पास सन्देशा भिजवा दिया कि या तो नगर खाली कर दो या फिर लड़ने-मरने के लिए तैयार हो जाओ।

राजहंस को भाइयों का यह विचार पसन्द न आया। इसलिए उसने दूर से ही तमाशा देखने का निश्चय किया। कुसुमपुर का राजा बहादुर आदमी था और उसके पास हमेशा बहादुर सिपाहियों की एक अच्छी फ़ौज मौजूद रहती थी। राजकुमारों का सन्देशा सुन उसने दूत से हँस कर कहा—"जाकर उन छोकरों से कह दे कि वे मैदान में आकर ज़रा कुछ बहादुरी तो दिखलावें, फिर तो मैं आप ही नगर छोड़कर भाग जाऊँगा।"

राजा की ख़बर सुनते ही राजकुमार मारे ग़ुस्से के लाल हो गये। उन्होंने फ़ौरन सिपाहियों को तैयार होने की आज्ञा दी। बेचारे क्या करते—रो-गाकर तैयार हुए और लड़ने को चले। उधर से कुसुमपुर की फ़ौज भी मैदान में आ पहुँची। देखते ही देखते गहरी मार-काट होने लगी। थोड़ी ही देर की लड़ाई में राजकुमारों के बहुत से आदमी मारे गये, और जो बचे वे मैदान छोड़कर भाग निकले। राजा ने राजकुमारों को पकड़ लिया और उनके सिर पर एक-एक चपत जमा कर कहा—"कहो बेटे!

बहुत शेख़ी बघार रहे थे! यही है तुम्हारी बहादुरी? ख़बरदार! अब लड़ने का नाम न लेना।"

राजा ने तीनों राजकुमारों को क़ैदख़ाने में बन्द कर दिया और कहा—"जब तक मुझे लड़ाई का कुल ख़र्च न मिलेगा, तब तक तुम लोग इसी तरह क़ैदख़ाने में पड़े रहोगे।" बेचारे राजकुमार मारे शरम के पिता के पास ख़बर भी न भेज सके और हाथ मल-मल कर पछताने लगे! पर अब पछताने से क्या होता था।

६

भाइयों की इस बेवक़ूफ़ी से राजहंस को बहुत रञ्ज हुआ। पर उसने उस समय चुप रहना ही ठीक समझा। वह भाइयों को क़ैद में ही छोड़ कर चमेली के फूलों की खोज में चल पड़ा। चलते-चलते कुछ दिनों में समुद्र के किनारे पहुँचा। सामने लहराता हुआ समुद्र देख उसे बड़ी ख़ुशी हुई। उसने घोड़े की पूजा की और उससे प्रार्थना की कि मुझे उस बग़ीचे में ले चल, जहाँ चमेली खिलती है, और अप्सराओं के राजा की बेटी जिसकी रखवाली करती है। यह सुनते ही घोड़ा अपने असली रूप में आ गया, और राजहंस को अपनी पीठ पर बिठा कर उड़ चला। समुद्र हज़ारों मील की लम्बाई में लहरा रहा था, उसमें पहाड़ के समान ऊँची लहरें उठ रही थीं, उसकी छाती पर मगर मच्छ कलोलें कर रहे थे। परन्तु घोड़ा

हवा हो रहा था और राजहंस मजे से समुद्र की बहार देखता जाता था।

अन्त में घोड़ा सात समुद्र पार कर अप्सरा के बग़ीचे में जा पहुँचा। राजहंस का भाग्य चोखा था। उस समय बाग़ में चारों तरफ़ सन्नाटा छा रहा था। अप्सराओं की राजकुमारी और उसकी सहेलियाँ तथा दासियाँ गहरी नींद में थीं। राजहंस की बन पड़ी। वह धड़धड़ाता हुआ बग़ीचे में चला गया। चमेली ख़ूब खिल रही थी। फूलों की ख़ुशबू से बाग़ का कोना-कोना महक रहा था। राजहंस की तबियत ख़ुश हो गई। उसने चटपट ढेर भर फूल बटोर लिए। इसके बाद बाग़ में घूमना शुरू किया। घूमते-घूमते वह राजकुमारी के महल में जा पहुँचा। राजकुमारी मक्खन से मुलायम और दूध से उजले बिछौने पर पड़ी ख़र्राटे भर रही थी। वह इतनी ख़ूबसूरत थी कि उसके रोम-रोम से रूप फूट रहा था। राजहंस फ़ौरन उस पर मोहित हो गया। उसने अपनी अँगूठी राजकुमारी की उँगली में पहिना दी और उसकी अँगूठी अपनी उँगली में पहन ली। इसी तरह उसने गले के हार की अदला-बदली भी की और फिर राजकुमारी को एक चिट्ठी लिखी, जिसका मतलब इस तरह था—"मेरा नाम राजहंस है। मैं सुवीर और कामरूप का राजकुमार हूँ। आपके बाग़ से चमेली के फूल लिए जा रहा हूँ। मैंने ही आपके हार और

अँगूठी की तब्दीली की है। खेद है कि आप से भेंट न हो सकी, क्योंकि जिस समय मैं यहाँ आया, आप नींद की गोद में थीं। आशा है, आप मुझे क्षमा करेंगी।"

इस प्रकार अपना काम पूरा कर राजहंस कुसुमपुर में लौट आया। उसने फिर धोबी का भेस बना लिया, और घोड़ा भी गधे के रूप में हो गया। अब राजहंस ने सोचा कि भाइयों की भी ख़बर लेनी चाहिए। ऐसा सोच वह कुसुमपुर के राजा के पास पहुँचा। उसने राजा को बहुत-सा धन दिया, और तीनों भाइयों को क़ैदख़ाने से छुड़वा लिया।

अब चारों भाई साथ-साथ कुसुमपुर से रवाना हुए। राजहंस के पास फूलों की गठरी थी, इसलिए वह बड़ी सावधानी से भाइयों के पीछे-पीछे चलता था। मगर पीछे चलने से फूलों की वास कैसे छिप सकती थी? वे अप्सरा के बग़ीचे के फूल थे, हमेशा ताज़े बने रहते थे, और उनकी वास इतनी तेज़ थी कि दूर-दूर तक की हवा महक उठती थी। फूलों की बास और राजहंस की साव-धानी से तीनों राजकुमारों को शक हो गया। एक दिन उन्होंने आपस में सलाह की—"यह धोबी बहुत होशियार जान पड़ता है, और यह तो पक्की बात है कि इसके पास चमेली के फूल हैं। अगर यह फूल लेकर पिताजी के पास पहुँच गया, तब तो बहुत बुरा होगा। इसे आधा राज्य तो

मिलेगा ही, अपनी बहिन भी व्याही जायगी, और ऊपर से हम लोगों का नाम बदनाम होगा सो अलग। अब तो जैसे बने, इससे फूल छीन लेने में ही अपनी भलाई है।"

एक दिन राजहंस दोपहरी में सो गया। फूलों की गठरी उसने सिरहाने रख ली। गधा भी चरते-चरते कुछ दूर निकल गया। बस, राजकुमारों को मौक़ा मिल गया। उन्होंने राजहंस को उठाकर कुएँ में फेंका और फूलों की गठरी लेकर घर की राह पकड़ी। राजहंस ज्योंही कुएँ में गिरा और चभाके की आवाज़ हुई, त्योंही घोड़ा दौड़कर वहाँ आ पहुँचा। उसने राजहंस को बाहर निकालने की बहुत कोशिश की, मगर बेचारा कुछ न कर सका। दो दिन तक कुएँ के चारों तरफ़ चक्कर काटता रहा। तीसरे दिन वहाँ कुछ बञ्जारे आ पहुँचे और उन्होंने राजहंस को कुएँ से बाहर निकाला। उसने सोचा—"भाई तो पिताजी के पास पहुँचने वाले हुए, अब वहाँ चलना बेकार है। अब तो घर जाना ही ठीक है।" ऐसा सोच वह कामरूप की ओर चल पड़ा।

७

यहाँ तीनों राजकुमार ख़ुशी-ख़ुशी सुवीर पहुँचे। राजा जयसिंह बेटों को पाकर बहुत प्रसन्न हुआ। तीनों राजकुमारों ने उसे अपनी बहादुरी की ऐसी-ऐसी कहानियाँ सुनाईं कि जिनका नाम! अन्त में जब उन्होंने फूलों का अर्क़ उसकी

आँखों में निचोड़ा तो आँखें ऐसी निकल आईं, जैसे आम की फाँकें। उनमें पहले से चौगुनी चमक आ गई। जयसिंह की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। उसने बेटों पर बहुत प्यार किया, उनको बेशुमार इनाम दिये, और उसी समय अपना आधा राज्य भी दे दिया। अब तो सब लोग राजकुमारों की तारीफ़ करने लगे। अब तीनों भाई मारे अभिमान के किसी से सीधे बात भी न करते थे, मूँछों पर ताव देते और ऐंठे-ऐंठे फिरते थे; वे समझते थे कि दुनिया में हमारे समान अब कोई है ही नहीं।

उधर जब बाग़ में अप्सराओं की राजकुमारी की नींद खुली, तो उसे अपना हार और अँगूठी बदली देख बड़ा ताज्जुब हुआ। वह मन ही मन कहने लगी, यहाँ आदमी की ये चीज़ें कैसे आ पहुँचीं? इतने में उसकी नज़र राजहंस की चिट्ठी पर पड़ी। अब तो उसे और भी ताज्जुब हुआ। उसकी समझ में यह बात ही न आती थी कि मामूली आदमी यहाँ कैसे आ पहुँचा। उसने फ़ौरन अपनी सब सहेलियों और दासियों को बुलाया, उन्हें राजहंस की सब कार्रवाई दिखलाई और डाँट कर उनसे पूछा—"जिसे यह भेद मालूम हो, तुरन्त बतला दे, नहीं तो नतीजा बुरा होगा।"

बेचारी अप्सराएँ अचरज में डूबी चुपचाप खड़ी थीं। मारे डर के उनके प्राण सूखे जा रहे थे। बड़ी देर तक

किसी ने कुछ जवाब न दिया। तब राजकुमारी ने फिर डाँट कर वही सवाल किया। अब की बार कुछ अप्सराओं ने हिम्मत बाँध कर जवाब दिया—"सरकार, हम लोग बेक़सूर हैं। हमें रत्ती भर भी हाल मालूम नहीं, चाहे आप मारें चाहे पालें।" तब राजकुमारी ने सोचा—"सुवीर चल कर ही इस भेद का पता लगाना चाहिए। देखें तो, राजहंस कैसा हिम्मतवर राजकुमार है।" बस, उसने सब अप्सराओं को यात्रा की तैयारी करने की आज्ञा दी।

थोड़ी ही देर में तैयारी हो गई। अप्सराएँ उड़न-खटोलों पर जा बैठीं, और वे धन-धन करते हुए आसमान में उड़ने लगे। अप्सराओं का वह दल उसी दिन सुवीर देश में जा पहुँचा और नगर के बाहर एक बग़ीचे में ठहर गया। राजकुमारी ने जयसिंह के पास ख़बर भेजी—"आपके राजकुमार मेरे बाग़ से चमेली के फूल चुरा लाये हैं। मैं उन्हें एक बार देखना चाहती हूँ। उन्हें फ़ौरन मेरे पास भेज दीजिए, नहीं तो मैं बात करते आपके देश को मिट्टी में मिला दूँगी।"

राजकुमारी. का सँदेसा मिलते ही राजमहल में हलचल मच गई। राजकुमारों के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। वे एक दूसरे का मुँह ताकने और आपस में कहने लगे—"यह कहाँ की बला आई! हमने उस धोबी के साथ दग़ा-बाज़ी क्या की, बैठे-ठाले अपने लिए आफ़त बुला ली।"

मगर अप्सराओं का मामला था। घर में छिप कर बैठ रहना आसान नहीं था। जयसिंह तीनों राजकुमारों को साथ ले डरते-डरते राजकुमारी के सामने पहुँचा। राजकुमारी एक के बदले तीन-तीन राजकुमार देख और भी चकित हुई। वह उनकी सूरतें देखते ही समझ गई कि ये बेचारे क्या चोरी करेंगे। फिर उसने उनको डाँट कर पूछा—"क्या तुम्हीं लोग मेरे बाग़ से चमेली के फूल लाये हो ?"

राजकुमार डरते-डरते बोले—"जी हाँ।"

राजकुमारी ने पूछा—"किस तरह ? मेरे बग़ीचे में तुमने और भी कोई काम किया था ?"

अब तो राजकुमारों की बोलती बन्द हो गई। उन्हें चुप देख राजकुमारी ने समझ लिया कि ये लोग बदमाश हैं, और मुझे धोखा देना चाहते हैं। उसने अप्सराओं को हुक्म दिया कि अभी इनकी मरम्मत करो। उसके हुक्म देने की देर थी कि राजकुमारों पर बेभाव की पड़ने लगी। उनकी चीख़-पुकार से बग़ीचा गूँज उठा। अपने प्यारे बेटों की यह हालत देख जयसिंह को बहुत दुःख हुआ। उसने हाथ जोड़ कर राजकुमारी से कहा—"इन लोगों का क़ुसूर माफ़ कीजिए। मेरा दुःख दूर करने के लिए ही इन्होंने यह पाप किया है।" राजकुमारी बोली—"नहीं जी, ये लोग बेईमान, धोखेबाज़ और चोर हैं। मैं ख़ूब जानती हूँ कि

ये चमेली के फूल नहीं लाये। क्या तुम्हारे राजहंस नाम का भी कोई लड़का है? वही फूल लाया है। यह देखो उसका पत्र।"

अब जयसिंह को राजहंस की याद आई। उसने फ़ौरन अपना दूत कामरूप को भेजा और बड़े आदर से रानी और राजकुमार को बुलवाया। यद्यपि राजहंस को घर से बाहर हुए बरसें हो चुकी थीं, पर जयसिंह उसे देखते ही पहिचान गया। उसने बेटे को गले लगा लिया। फिर वह उसे लेकर राजकुमारी के डेरे में पहुँचा। राजहंस बड़ी शान से आसन पर जा बैठा। राजकुमारी ने उससे पूछा—"मेरे बग़ीचे से फूल चुराने वाले तुम्हीं हो?"

राजहंस ने नम्रता-पूर्वक जवाब दिया—"जी हाँ! देखिए, यह आपका चन्द्रहार और यह आपकी अँगूठी है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि चोरी करना पाप है; पर यह पाप मैंने केवल पिता जी का दुःख दूर करने के इरादे से किया है और इसके लिए आपसे माफ़ी चाहता हूँ।" इसके बाद राजहंस ने आप-बीती कुल कहानी कह सुनाई।

अप्सराओं की राजकुमारी राजहंस की कहानी सुन कर बोली—"मैं तुम्हारी बहादुरी और चतुराई से प्रसन्न हूँ, और तुम्हें क्षमा करती हूँ।" फिर वह उसे बहुत कुछ इनाम देकर अपने देश को लौट गई।

जब जयसिंह को अपने बेटों की करतूत मालूम हुई,

तो वह उन पर बहुत नाराज़ हुआ। उसने उसी समय उनका मुँह काला करवाया और उन्हें गधों पर बिठा देश से बाहर निकलवा दिया। फिर उसने राजहंस पर बहुत प्यार किया और उसे अपना युवराज बनाया। अब राज-हंस को किसी प्रकार का दुःख न रहा। वह कभी सुवीर में रहता था और कभी कामरूप में, और घर-घर उसकी बड़ाई होती थी।

हीरा और लाल

किसी शहर में एक राजा था। उसके सन्तान के नाम एक कानी बेटी भी न थी। इससे राजा हमेशा दुःखी रहता था, और उसकी रानी तो जब देखो तब रञ्जीदा बनी रहती थी। शहर के तमाम लोग राजा-रानी की निन्दा करते थे, उन्हें मनहूस और अभागा समझते तथा उनका मुँह देखना भी पाप समझते थे। एक दिन की बात है, मिहतरानी बड़े सवेरे राजमहल के सामने वाली सड़क पर झाड़ू दे रही थी। इतने में राजा छत पर आ पहुँचा और शहर की तरफ़ देखने लगा। मिहतरानी ने सड़क बुहारते-बुहारते जो सिर ऊपर उठाया, तो उसकी नज़र राजा पर जा पड़ी। वह फ़ौरन मुँह फेर कर खड़ी हो गई और बोली—"हाय! आज सवेरे-सवेरे किस अभागे की सूरत दिखाई दी। न जाने आज क्या होने वाला है! हे भगवान्! मुझ ग़रीब पर दया कर!"

यद्यपि मिहतरानी ने यह बात बहुत धीरे कही थी, पर इसकी भनक राजा के कानों में पड़ ही गई। बेचारे को बड़ा दुःख हुआ। उसने सोचा—"जब एक मिहतरानी की नज़रों में भी मैं इतना गया-बीता हूँ, तब यह राज-पाट बेकार है। इससे तो जङ्गल ही भला; न कोई मेरा मुँह देखेगा, न दुःखी होगा। वहीं लोगों की आँखों से छिपकर रहूँगा, भगवान् का भजन करूँगा, और नहीं तो परलोक ही सुधरेगा।" बस, वह उसी दिन साधु का भेष बना जङ्गल की तरफ़ चल पड़ा। रानी भी हाय-साँसें भरती हुई राजा के पीछे-पीछे चली।

रास्ते में राजा-रानी को एक संन्यासी मिला। वह उनको देखते ही पहिचान गया और बोला—"महाराज, यह क्या हाल है? आप पर ऐसी क्या मुसीबत आ पड़ी, जो आप राज-पाट छोड़कर जङ्गल जा रहे हैं?" राजा ने आँखों में आँसू भर कर जवाब दिया—"संन्यासी जी, मैं अपनी मुसीबत का क्या हाल सुनाऊँ! मुझ पर भगवान् की नज़र ही टेढ़ी है! एक बच्चे बिना मेरा यह हाल हो रहा है! यद्यपि मैं अपनी तमाम प्रजा को सन्तान के समान मानता हूँ, फिर भी उसकी नज़रों में मैं अभागा हूँ—यहाँ तक कि वह मेरा मुँह देखना भी पाप समझती है। अब आप ही बतलाइए, मैं ऐसा राज-पाट लेकर क्या करूँ?" संन्यासी ने हँसकर कहा—"आप भी क्या बातें

करते हैं ! अभागे हों आपके दुश्मन ! जाइए, लौट जाइए ! राज-काज सँभालिए। चिन्ता छोड़ ईश्वर की दया पर भरोसा रखिए। आप शीघ्र ही एक सुन्दर और गुणवान बालक के पिता होने वाले हैं।"

संन्यासी की बात सुनते ही राजा-रानी की उदासी दूर हो गई, मानों मुरझाये हुए धान पर पानी पड़ गया। दोनों मन ही मन .खुश होते हुए महल में लौट आये।

❀ ❀ ❀

उसी नगर में एक ग़रीब घसियारा रहता था। वह दिन भर जङ्गल में घास काटा करता और शाम को नगर में लाकर बेच देता था। इस तरह चार-छः पैसे की जो आमदनी होती थी, उसीसे वह अपनी गुज़र-बसर चलाता था। एक दिन घसियारा बड़े सवेरे जङ्गल में पहुँचा और जल्दी-जल्दी घास काटने लगा। जब काफ़ी घास काट चुका, तो उसे खयाल आया कि आज मैं गट्ठे बाँधने की रस्सी तो घर ही भूल आया हूँ। अब तो बेचारे को बड़ा अफ़सोस हुआ। बेचारा माथा पकड़ कर एक तरफ़ बैठ गया और सोचने लगा कि अब क्या करूँ ! मुश्किल से चार-छः पैसे पैदा कर पाता हूँ, सो आज उनसे भी हाथ धोना पड़ा। जब शाम को घर पहुँचूँगा तो क्या मैं खाऊँगा और क्या बाल-बच्चों को खिलाऊँगा ?

घसियारा इस तरह सोच-विचार कर ही रहा था कि

इतने में उसकी नज़र कुछ दूरी पर पड़ी हुई रस्सी के समान एक चीज़ पर पड़ी। वह लपक कर उसके पास पहुँचा तो क्या देखता है कि एक मरा हुआ साँप पड़ा है। उसने सोचा—लाओ, इसी साँप से रस्सी का काम लूँ, गट्ठा बाँध कर घर चलूँ और फिर घर पर तो रस्सी है ही। मन में यह विचार आते ही घसियारे ने साँप उठा लिया। मगर यह क्या! ज्योंही घसियारे ने साँप को हाथ में लिया, त्योंही वह ग़ायब हो गया और उसके बदले घसियारे के हाथ में एक बहुत ही ख़ूबसूरत सुर्ख़ रङ्ग का पत्थर चमकने लगा। यह अनोखी लीला देख कर घसियारे को बहुत ताज्जुब हुआ—बेचारा बहुत घबराया। जब थोड़ी देर बाद उसका जी ठिकाने आया, तो उसने कुछ सोच-समझ कर वह पत्थर अपनी पगड़ी के छोर में बाँध लिया। फिर शाम होते-होते वह घर लौट आया।

घसियारे ने वह पत्थर अपनी बीवी को दिखलाया। उसने इसके पहले न तो कभी ऐसा पत्थर देखा था, न वह यही जानता था कि यह क्या है और इसकी क़ीमत कितनी हो सकती है। मगर उसकी बीवी कुछ समझदार थी। वह पत्थर देख कर बोली—"भई, यह तो कोई क़ीमती पत्थर जान पड़ता है। ज़रा इसकी चमक तो देखो! अगर मेरी बात मानो तो कहूँ। इसे राजा के पास ले जाओ। क्या जाने, इसके बदले वे हमें कुछ

दे दें।" घसियारे को वीवी की सलाह पसन्द आई! वह सवेरा होते ही राजमहल में पहुँचा। राजा उस पत्थर को देखते ही बहुत खुश हुआ और बोला—"अरे! यह तो लाल है। तूने कहाँ पाया?" तब घसियारे ने उसे पिछले दिन का कुल हाल सुना दिया। राजा ने लाल अपने पास रख लिया और घसियारे को इतना धन दिया कि उसके सब दुःख दूर हो गये और फिर उसे कभी घास काटने की ज़रूरत न पड़ी।

राजा लाल लेकर रनिवास में पहुँचा और रानी से बोला—"ज़रा देखो तो सही, कितना बढ़िया लाल है। अगर मोल लेना चाहूँ तो अपने खज़ाने में इसकी क़ीमत भी न निकले।" रानी ने झपट कर लाल अपने हाथ में ले लिया। मगर उसके हाथ में पहुँचते ही वह एक खूबसूरत बच्चे की शकल में बदल गया और लगा 'कहाँ-कहाँ' की आवाज़ में रोने! यह देखते ही राजा की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। उसने रानी से कहा—"रानी साहिबा, ख़ुशियाँ मनाओ। संन्यासी जी की बात सच निकली। भगवान् की दया ने तुम्हारी गोद भरी-पूरी कर दी। अपना अँधेरा महल उजेले से किस तरह जगमगा उठा! अहा! कितना सुन्दर बच्चा है! लाओ, ज़रा इसका मुँह तो चूम लूँ!"

राजा-रानी ने बच्चे का नाम 'लाल' रक्खा, और वे

बड़े प्रेम से उसका पालन-पोषण करने लगे। धीरे-धीरे लाल आठ वर्ष का हो गया। उसमें सभी बातें अच्छी दिखाई देती थीं। साफ़ जान पड़ता था कि यह बालक बड़ा होने पर एक नामी आदमी होगा। मगर राजा-रानी के दिल में हमेशा खटका लगा रहता था। उनको लाल के पैदा होने का सब हाल मालूम था ही, इसलिए वे सोचा करते थे कि यह बालक जिस अनोखे ढङ्ग से पैदा हुआ है, कहीं उसी तरह किसी दिन ग़ायब न हो जाय! बस, वे उस पर पूरी चौकसी रखते थे। उसे आँखों से भी ओझल न होने देते थे, यहाँ तक कि बेचारे को पाठशाला भी न भेजते थे। मगर इस देख-भाल का नतीजा बुरा हुआ। आठ पहर चौंसठ घड़ी की क़ैद से लाल का जी ऊबने लगा। धीरे-धीरे वह यहाँ तक उकता गया कि एक दिन रात को मौक़ा पाते ही भाग निकला। जो आदमी लाल के साथ गया था, उसने लौट कर राजा-रानी से कहा—"कुँवर जी विद्या पढ़ने विदेश चले गये हैं! उन्होंने कहा है कि मैं ज्योंही पढ़ना-लिखना सीख लूँगा, त्योंही लौट आऊँगा। आप किसी बात की चिन्ता न कीजिए।" राजा-रानी को बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने लाल की तलाश में चारों तरफ़ आदमी भेजे, मगर कहीं उसका पता न चला। आख़िर राजा-रानी मन मसोस कर रह गये।

लाल चलते-चलते एक शहर में पहुँचा। अभी वह

आगे बढ़ ही रहा था कि उसकी नज़र एक पाठशाला पर पड़ी। वह धड़धड़ाता हुआ भीतर चला गया। गुरुजी के चारों तरफ़ लड़के-लड़कियों का जमघट था। जो लड़की सब से ज्यादा ख़ूबसूरत थी, लाल उसी के पास जा बैठा। अब लड़की पट्टी पर जो कुछ लिखती थी, लाल उसे फ़ौरन मिटा देता था। यह देख लड़की ने आँखें तरेर कर लाल की तरफ़ देखा और कहा—"तुम्हारी इतनी मजाल कि मैं लिखूँ और तुम मिटा डालो ! तुम मुझे नहीं जानते ?"

लाल ने हँस कर जवाब दिया—यह धौंस और किसी को देना ! भला तुम हो कौन, जो मैं तुम्हें डरूँ ?

लड़की तमक कर बोली—तुम नहीं जानते, मैं इस शहर के राजा की बेटी हूँ, और मेरा नाम हीरा है !

लाल ने कहा—तो मैं भी तो राजा का बेटा हूँ। लाल मेरा नाम है। तुम्हारे शहर में विद्या पढ़ने चला आया हूँ।

यह सुनकर हीरा बहुत ख़ुश हुई। उसने लाल का बड़ा आदर किया। फिर वह उसे अपने पिता के पास ले गई और उससे बोली—"पिता जी, ये भी राजकुमार हैं। इन्हें अपने पास रख लीजिए। मैं इनके साथ पढ़ना-लिखना सीखूँगी।" राजा ने लाल को अपने पास रख लिया।

अब तो हीरा और लाल हमेशा एक साथ रहने लगे। एक साथ ही खेलते-कूदते और एक साथ ही पढ़ने-लिखने

जाते। धीरे-धीरे उनमें ख़ूब प्रेम हो गया। जब दोनों पढ़-लिख कर सयाने हुए, तो राजा ने उनका ब्याह कर दिया। हीरा और लाल के दिन बड़े आनन्द से कटने लगे। अब लाल ने सोचा कि चल कर माता-पिता के दर्शन करना चाहिए। मगर जब वह राजा के सामने इस बात की चर्चा करता तो वह टालमटूल कर देता। एक दिन तो उसने लाल से साफ़-साफ़ कह दिया—"बेटा, तुम्हें यहाँ किस बात का दुःख है, जो तुम चाहे जब माता-पिता का नाम रटा करते हो। मैं तुम्हें किसी भी हालत में यहाँ से न जाने दूँगा।"

उस दिन से लाल उदास रहने लगा। उसकी यह दशा देख हीरा बोली—"इतना रञ्ज करने की क्या ज़रूरत? मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ। चलो, किसी दिन निकल चलें।" यह सुनते ही लाल का चेहरा खिल उठा और वह भागने की तैयारियाँ करने लगा। एक रात उसने हीरा से कहा—"सब तैयारी हो चुकी है। बाहर दो घोड़े कसे-कसाये खड़े हैं। लो, झटपट ये मरदाने कपड़े पहिन लो। भागने का यही मौक़ा है।"

हीरा ने फ़ौरन मरदाने कपड़े पहिन लिये। अब उसका रूप ऐसा मालूम होने लगा, जैसे वह सचमुच मर्द ही हो। यह देख लाल ने कहा—"तुम तो ऐसी मालूम होती हो, जैसे जन्म से ही पुरुष हो। तुम्हें देख कर कोई

यह ख़याल भी न करेगा कि तुम असल में स्त्री हो। सभी हमें-तुम्हें भाई-भाई समझेंगे। अब भागने में कोई दिक़्क़त न रहेगी।" इस पर हीरा मुसकुरा दी। फिर दोनों ने कुछ अशर्फ़ियाँ और जवाहिरात लेकर घर के बाहर क़दम रक्खे। पहर भर रात बाक़ी रहते-रहते दोनों घोड़ों पर सवार हुए और घोड़े सरपट भाग चले। सवेरा हो गया, सवेरे से दोपहर हुआ और दोपहर से शाम हो गई, मगर घोड़े उसी तरह भागे जा रहे थे। उनकी टापों से सुनसान जङ्गल रह-रह कर गूँज उठता था, पर हीरा और लाल को एक ही चिन्ता थी—जितनी दूर भाग सकें; भाग जायँ। शाम होते-होते वे शहर से इतनी दूर जा पहुँचे कि अब उनका पता लगाना मुश्किल था।

इस समय हीरा और लाल की हालत बहुत बुरी हो रही थी। मारे थकावट के उनके शरीर चूर-चूर हुए जा रहे थे। जी में बार-बार यही विचार आता था कि कोई अच्छी जगह मिल जाती तो ठहर जाते। इतने में वे एक झोपड़ी के सामने पहुँचे। उन्होंने उसी में ठहरने का इरादा किया। उनकी आवाज़ सुनते ही झोपड़ी में से एक बुढ़िया बाहर निकल आई और उसने उनका ख़ूब स्वागत किया। फिर वह उन्हें बड़े प्रेम से झोपड़ी में ले गई। दोनों हारे-थके तो थे ही, झटपट कुछ खा-पीकर बिस्तरों पर जा लेटे।

बुढ़िया की दासी हीरा के पैर दाबने लगी। अभी हीरा की आँख लगती ही जाती थी कि वह पैर पर पानी की एक बूँद गिरने से चौंक कर उठ बैठी, तो क्या देखती है कि दासी रो रही है। जब हीरा ने उससे रोने का कारण पूछा, तो वह बोली—"मुझे तुम्हारे रूप पर दया आती है। इस बुढ़िया का पति बड़ा ही ज़ालिम डाकू है। इसके सात बेटे भी हैं, जो अपने बाप की तरह ही हत्यारे हैं। इस समय वे डाका मारने निकल गये हैं। जब लौटेंगे, तो तुम दोनों की हत्या किये बिना न रहेंगे। इसी से मुझे रुलाई आ रही है।"

यह सुनते ही हीरा के होश हिरन हो गये। वह घबरा-कर लाल के पास पहुँची, और उसे जगा कर बोली—"जल्दी करो। हम लोग डाकुओं के अड्डे में आ फँसे हैं। अब एक मिनट भी बरबाद करना, मानों अपनी जान खोना है।" बस, दोनों अपना सामान सँभाल घोड़ों पर जा बैठे। बुढ़िया ने उन्हें बहुत रोका, समझाया और यहाँ तक फुसलाया—"क्यों लड़कपन करते हो, अँधेरी रात है, कहीं रास्ते में चोर-डाकू मिल गये, तो मुसीबत में फँस जाओगे। आराम से रात बिताओ, सवेरे जहाँ जाना हो, चले जाना।" मगर उन्होंने बुढ़िया की एक न सुनी और झटपट अपनी राह ली। तब बुढ़िया भी "दो सोनहली चिड़ियाँ उड़ी जाती हैं, दो सोनहली चिड़ियाँ उड़ी जाती

हैं" की आवाज़ लगाती हुई उनके पीछे-पीछे दौड़ने लगी।

इसी समय बुढ़िया का पति अपने बेटों के साथ लौटा आ रहा था। बुढ़िया की आवाज़ सुनते ही कुल मतलब उनकी समझ में आ गया। उन्होंने फौरन हीरा-लाल का पीछा पकड़ा। थोड़ी ही देर में वे उनके पास जा पहुँचे। आफ़त सिर पर देख हीरा और लाल बदल पड़े। उन्होंने यही विचार बाँधा कि बहादुरी से लड़ कर मर जाना अच्छा, पर प्राणों के लालच से डाकुओं के सामने झुकना अच्छा नहीं। बस, दोनों ने अपनी-अपनी कमानें सँभालीं और डाकुओं पर तीर बरसाना शुरू कर दिया। बात की बात में सातों जवान डाकू ढेर हो गये। केवल बुड्ढा बच रहा। बेटों को गिरते देख वह प्राण लेकर भागा, पर लाल ने दौड़कर उसे पकड़ लिया। अब तो बुड्ढा गिड़गिड़ाकर बोला—"सरकार, मुझे बचने दीजिए। बेटों के लिए ही यह पाप करता था। जब वे ही न रहे, तो अब मुझे इस पाप से क्या वास्ता? मुझे अपने साथ रख लीजिए, आपकी सेवा करूँगा। आप दो रोटियाँ दे देंगे तो ख़ुश रहूँगा।" हीरा को बुड्ढे पर दया आ गई। उसके कहने से लाल ने उसे छोड़ दिया और अपने साथ रख लिया।

सवेरा होते-होते तीनों आदमी एक तालाब के किनारे पहुँचे। हीरा और लाल ने वहीं ठहरने का विचार कर डेरा

डाल दिया। हीरा तालाब में नहाने चली गई। यहाँ लाल सुस्ता ही रहा था कि मारे थकावट के उसकी आँखें झँपने लगीं। बुड्ढे के दिल में आग तो लग ही रही थी, यह मौक़ा पाते ही उसने तलवार खींची। वह लाल पर वार करना ही चाहता था कि उस पर हीरा की नज़र पड़ गई। हीरा ने लपक कर एक बड़ा-सा पत्थर उठाया और निशाना साध कर इस ज़ोर से फेंका कि बूढ़े का सिर फट गया। वह चीख़ मार कर धरती पर गिर पड़ा। उसकी आवाज़ सुनते ही लाल सावधान हो गया और कुल हाल मालूम होते ही उसने बूढ़े का सिर काट लिया। फिर दिन भर आराम करने के बाद दोनों वहाँ से आगे बढ़े।

कुछ दिन बाद हीरा और लाल एक बड़े शहर में पहुँचे। उन्होंने सराय में डेरा डाला। फिर लाल हीरा को सराय में ही छोड़ कुछ सौदा ख़रीदने बाज़ार गया। बाज़ार ख़ूब गुलज़ार था—सड़क के दोनों ओर बड़ी-बड़ी और सजी हुई दुकानें थीं, जिनकी शोभा देखते ही बनती थी। लाल ने प्रत्येक दूकान से कुछ न कुछ सौदा ख़रीदा। दूकानदारों को दाम चुकाये, मगर सामान उन्हीं के यहाँ रहने दिया। वह सब से यही कहता हुआ आगे बढ़ता गया कि लौटते समय अपना माल लेता जाऊँगा। इसी तरह सामान की ख़रीद करता हुआ एक पान वाली की दूकान पर पहुँचा। लाल की इच्छा पान लेने की हुई। उसने पानवाली से

ानों का भाव पूछा। पानवाली ने जवाब दिया—
"महाशय, दूकान में आकर बैठिए, और जितने चाहे पान
लीजिए।" लाल बेखटके दूकान में चला गया। मगर पान
वाली जादू जानती थी। ज्योंही लाल दूकान के भीतर
पहुँचा, त्योंही पानवाली ने उस पर जादू की लकड़ी घुमा
दी। बेचारा लाल फ़ौरन बकरा बन गया और जादूगरनी
ने उसे खूँटे से बाँध दिया।

इधर हीरा लाल की राह देखती-देखती थक गई।
अन्त में वह खुद उसका पता लगाने बाज़ार की तरफ़
चली। वह मरदाने भेष में थी ही, उसे देख दूकानदार
धोखा खा गये और लाल समझ लगे पुकारने—"महाशय
जी, अपना सामान तो लेते जाइए।" मगर हीरा "ऐसी
क्या जल्दी है, थोड़ी देर बाद ले जाऊँगा" कहती हुई
आगे बढ़ती गई और पानवाली की दूकान पर जा पहुँची।
पानवाली हीरा को देख कुछ न बोली—चुपचाप बैठी
रही। मगर बकरा बने हुए लाल को कहाँ चैन—हीरा को
देखते ही वह बार-बार चीखने और खूँटे के चारों तरफ़
उछल-कूद मचाने लगा। बकरे की वह हालत देख हीरा
का कलेजा मुँह को आने लगा। उसके मन में बार-बार यही
सवाल उठने लगा कि यह बकरा मुझे देखते ही क्यों इस
तरह व्याकुल हो रहा है? जब उसका जी न माना तो वह
पानवाली से पूछ ही बैठी—"क्यों जी, यह बकरा इतना

दुखी क्यों है ?" पानवाली बोली—"यह जान कर आप क्या करेंगे ? दूकान में आकर बैठिए—दो-चार बीड़े खाइए।" हीरा को पानवाली पर शक हो गया। वह "रहने दे, मुझे पान खाने का शौक़ नहीं है" कहती हुई आगे बढ़ गई। जब उसने आस-पास रहने वालों से पान-वाली के विषय में पूछ-ताछ की तो उन्होंने बतलाया—"उससे ज़रा होशियार रहिए, वह जादूगरनी है जादूगरनी! बात करते-करते आदमी को बकरा बना देती है।" अब तो हीरा को सोलह आने भरोसा हो गया कि लाल जादूगरनी के चक्कर में पड़ गया है और वह बकरा हो न हो लाल ही है।

हीरा को बड़ी चिन्ता हुई। अब लाल को किस तरह पाऊँ—वह यह सोचती हुई चली ही जा रही थी तो एक गली में क्या देखती है कि एक बुढ़िया तरह-तरह की मिठा-इयाँ बना रही है और साथ ही फूट-फूट कर रोती जाती है। यह देख हीरा को बड़ा ताज्जुब हुआ। उसने बुढ़िया से पूछा—"माँ, यह कैसी बात है, जो तुम मिठाइयाँ बनाती हुई रो रही हो ?" बुढ़िया ने उत्तर दिया—"बेटा, मैं अपना दुखड़ा क्या सुनाऊँ! इस नगर की राजकुमारी क्या है, पूरी राक्षसी है। उसके पास हर रोज़ एक पुरुष भेजा जाता है, जो सवेरा होते ही मरा पाया जाता है। आज मेरे लड़के की बारी है। मैं उसी के लिए ये मिठाइयाँ बना रही हूँ। हाय! सवेरा होते-होते मेरा बच्चा ख़तम हो जायगा!"

हीरा बोली—"माँ, तुम रोओ मत! आज तुम्हारे बेटे के बदले मैं राजकुमारी के पास जाऊँगा। लाओ ये मिठाइयाँ मुझे दो, मैं खा-पीकर अभी राजमहल में जाऊँगा।" यह सुनते ही बुढ़िया बहुत ख़ुश हुई। उसने कुल सामान हीरा के सामने रख दिया। वह मिठाइयाँ खा-पीकर उठी और सीधी राजमहल की तरफ़ चल पड़ी। उसका सुन्दर रूप देखते ही राजा के नौकरों ने एक ठण्डी साँस ली और कहा—"आप किस देश के राजकुमार हैं? क्या आपको अपने प्राणों पर ज़रा भी प्रेम नहीं है, जो आप इस तरह मौत के मुँह में जा रहे हैं?" हीरा ने जवाब दिया—"वाहियात बातें मत करो। तुम्हें मेरी इतनी चिन्ता न करनी चाहिए। तुम तो मुझे राजकुमारी के पास पहुँचा दो।"

"अच्छी बात है। चलो, मरो।" यह कह कर नौकरों ने हीरा को राजकुमारी के महल में भेज दिया। राजकुमारी ने हीरा का खूब आदर किया। थोड़ी ही देर में दोनों में मित्रता हो गई और घुल-घुल कर बातें होने लगीं। इतने में राजा के पुरोहित जी वहाँ आ पहुँचे और उन्होंने उन दोनों की शादी कर दी।

अब राजकुमारी हीरा को लेकर एक दूसरे कोठे में गई। मगर वहाँ पहुँचते ही वह एकबारगी पागल-सी हो उठी। उसकी आँखें अङ्गारों के समान चमकने लगीं। चेहरे से मानों क्रोध बरसने लगा। वह दोनों हाथों से

अपने सिर के बाल नोचने और मुँह से न जाने क्या-क्या बकने लगी। बक-झक करती-करती वह ज़मीन पर लोटने लगी और उसके मुँह से झाग निकलने लगा। धीरे-धीरे वह बेहोश हो गई। इसके बाद उसकी बाईं जाँघ फटी और उससे एक बड़ा भारी काला साँप निकला, जो फुफ-कार मारता और जीभ लपलपाता हुआ हीरा पर झपटा।

राजकुमारी की हालत बिगड़ते ही हीरा होशियार हो गई थी। उसने अपनी तलवार सँभाल ली थी और वह राजकुमारी की एक-एक हरकत बड़े ध्यान से देख रही थी। ज्योंही साँप उस पर झपटा, त्योंही उसने तलवार से उसका काम तमाम कर दिया। राजकुमारी थोड़ी देर बाद होश में आ गई और बड़े ताज्जुब से हीरा की तरफ़ देखने लगी। मगर जब उसे सब हाल मालूम हुआ, तो वह मारे ख़ुशी के हीरा के गले से लिपट गई और बोली—"यह साँप हाथ धोकर मेरे पीछे पड़ा था। इसे मारकर आपने मुझे नई ज़िन्दगी दी है। मैं आपका उपकार नहीं भूल सकती। अब आप मुझे अपनी दासी समझिए। आज से आप मेरे स्वामी हुए। अब आपकी सेवा करना ही मेरा धर्म है।"

सवेरे राजा ने यह हाल सुना, तो वह भी बहुत प्रसन्न हुआ। उसने हीरा को अपने पास बुलाया और उससे कहा—"राजकुमार, तुमने मेरी बेटी को एक बड़ी मुसीबत

से बचाया है। मैं तो उसकी तरफ़ से निराश ही हो चुका था। जितने आदमी आये, सभी उस साँप का कलेवा हुए। तुमने उसे मारकर न जाने कितनी वीरता का, कितने पुण्य का कार्य किया है। मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ। जो तुम्हारा जी चाहे, माँग लो।" यह सुनकर हीरा ने कहा—"यदि श्रीमान् मुझ पर प्रसन्न हैं, तो मुझे छः घण्टे तक इस नगर पर राज्य कर लेने दीजिए। बस, मैं और कुछ नहीं चाहता।" राजा ने बड़ी ख़ुशी से हीरा की प्रार्थना स्वीकार कर ली।

हीरा राजा के रूप में राजसिंहासन पर बैठा। उसने फ़ौरन नगर भर में डौंड़ी पिटवा दी कि सब लोग अपने-अपने पशु-पक्षी लेकर महल के सामने हाज़िर हों, जो पशु-पक्षी महाराज पसन्द करेंगे, उनके पालने वालों को इनाम दिया जायगा। थोड़ी ही देर में महल के सामने झुण्ड के झुण्ड स्त्री-पुरुष और पशु-पक्षी जमा हो गये। मगर पानवाली का कहीं पता न था। तब हीरा के इशारे पर कितने ही सिपाही दौड़े और बात की बात में पानवाली को बाँध लाये। उसके साथ बहुत से बकरे भी थे। हीरा ने कितने ही पशुओं और पक्षियों पर प्रसन्नता प्रकट की और उनके पालने वालों को इनाम दिया। फिर वह ऊँची आवाज़ से बोली—"क्या तुम लोगों में कोई ऐसा भी है, जो पशुओं को आदमी बना सके? अगर हो, तो सामने आवे। मैं उसे मालामाल कर दूँगा।"

पानवाली बड़ी ख़ुशी से आगे बढ़ी और हाथ बाँध कर बोली—अगर महाराज का हुक्म पाऊँ, तो मैं अभी अपने सब बकरों को आदमी बना दूँ।

हीरा ने ताज्जुब प्रकट करते हुए कहा—अच्छा! तुम इतनी होशियार हो! ज़रा दिखाओ तो अपनी विद्या।

पानवाली ने एक लोटे में पानी लेकर मन्त्र पढ़ना शुरू किया और ज्योंही वह पानी बकरों पर छिड़का, त्योंही वे सब आदमी बन गये। उन्हीं में लाल भी था। अपने लाल को देखते ही हीरा निहाल हो गई और मारे ख़ुशी के पानवाली से बोली—"ओहो! तुम इतनी होशियार हो पानवाली! अच्छा आओ, इनाम लो।" पानवाली इठलाती हुई इनाम लेने आगे बढ़ी। मगर ज्योंही वह हीरा के निकट पहुँची, त्योंही हीरा ने इतनी सफ़ाई से तलवार चलाई कि पानवाली का सिर धड़ से जुदा हो गया। फिर उसने सब लोगों से कहा—"पान-वाली की इस हत्या से किसी को ताज्जुब न करना चाहिए। यह एक नीच जादूगरनी थी, जो परदेशी मुसाफ़िरों को बकरे बनाकर अपने वश में किया करती थी। सबूत के लिए तुम्हारे सामने इतने आदमी मौजूद हैं, जो अभी-अभी बकरों से आदमी बनाये गये हैं। इन्हें इस दुर्दशा से बचाने के लिए ही मैंने यह सब काम किया है। अब सब लोग अपने-अपने घर जा सकते हैं।" इसके बाद

हीरा ने उन लोगों को राह-खर्च के लिए थोड़ा-थोड़ा धन दिया, जो अभी तक बकरों के चोले में थे, और उनको अपने-अपने घर जाने की आज्ञा दी। सबने हीरा की बड़ाई करते हुए अपनी-अपनी राह ली।

अब हीरा लाल को साथ लेकर राजा के पास पहुँची। उसने राजा को अपनी सब कहानी सुना दी, जिससे वह बहुत ख़ुश हुआ और बार-बार हीरा की बड़ाई करने लगा। मगर राजकुमारी यह हाल सुनकर बहुत रञ्जीदा हुई। वह हीरा को अभी तक पुरुष समझे हुए थी। उसने हीरा से कहा—"बहिन! तुमने तो मुझे पूरा चरका दिया। मैं तुम्हें अपना पति मान चुकी थी। अब तुम्हीं बताओ, मेरा क्या होगा?" हीरा ने उसके गाल पर एक हलकी चपत जमाकर जवाब दिया—"पगली! होगा क्या? लाल जैसे मेरे पति हैं, वैसे तेरे भी हुए। मैं उनके साथ तेरी शादी कर दूँगी।" हीरा ने सचमुच लाल के साथ राजकुमारी का ब्याह करा दिया और अब सब के दिन बड़े मज़े से बीतने लगे।

धीरे-धीरे राजकुमारी को लाल के विषय में कितनी ही बातें मालूम हो गईं। एक दिन उसने हीरा से कहा—"हमारे लाल किस जाति के हैं, यह हमें आज तक मालूम न हुआ। मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि उनकी जाति के विषय में जरूर कोई भेद है। वे तुम पर बहुत भरोसा

करते हैं। न हो, एकाध दिन उनकी जाति के विषय में पूछताछ तो करो।" हीरा बोली—"बहिन, लाल हमारे पति हैं। वे हमें चाहते भी बहुत हैं। हमें उनके प्रेम से मतलब है या जाति-पाँति से ?" राजकुमारी ने कहा—"मगर हर्ज ही क्या है ? जो हमारा पति हो, हमें उसकी जाति-पाँति भी तो मालूम होनी चाहिए।"

हीरा राजकुमारी की बातों में आ गई और एक दिन लाल से, उसकी जाति पूछ बैठी। लाल ने रञ्जीदा होकर जवाब दिया—"प्यारी हीरा ! मैं तो समझता था कि तुम मेरे प्रेम की भूखी हो। मगर अब मालूम हुआ कि तुम जाति-पाँति को प्रेम से भी बढ़कर समझती हो। मेरी बात मानो, यह सवाल रहने ही दो, इससे तुम्हें सुख न होगा।"

पर हीरा न मानी। वह लाल से बार-बार उसकी जाति पूछने लगी। तब लाल उसे नदी किनारे ले गया और बोला—हाँ, तो तुम मेरी जाति जानना चाहती हो ?

हीरा ने कहा—हाँ !

लाल पानी में घुसा और पानी उसके घुटनों तक पहुँच गया। उसने कहा—हीरा, तुम मेरी जाति जानना ही चाहती हो ?

हीरा बोली—हाँ !

लाल और आगे बढ़ा, पानी उसकी गर्दन तक पहुँच

गया। उसने कहा—हीरा, तुम मेरी जाति जाने बिना नहीं मान सकतीं ?

हीरा बोली—हाँ !

लाल और आगे बढ़ा। उसका सारा शरीर पानी में डूब गया। केवल सिर के कुछ बाल पानी के ऊपर लहराते रह गये। उसने भीतर से ही कहा—हीरा, अब भी मान जाओ। नहीं तो ज़िन्दगी भर पछताओगी।

हीरा बोली—तुम अपनी जाति तो बताओ। यह क्या तमाशा कर रहे हो ?

अब लाल के बाल भी ग़ायब हो गये और जहाँ वह खड़ा हुआ था, वहाँ एक काला साँप लहराने लगा। उसने कहा—"हीरा, यही मेरी जाति है। अच्छी तरह देख और समझ लो।" इसके बाद साँप भी ग़ायब हो गया। हीरा बड़ी देर तक किनारे पर खड़ी रही और लाल की बाट देखती रही कि वह अब बाहर निकलता है—अब बाहर निकलता है। मगर जब वह बाहर न निकला तो हीरा विलाप करने लगी। उसके विलाप से चारों दिशाएँ गूँज उठीं। वह रो-रोकर लाल को पुकारती थी। मगर लाल वहाँ कहाँ था ? जब हीरा रोती-रोती थक गई तो अपने महल को लौट आई। उसने राजकुमारी को खूब फटकारा और उससे कहा—"तेरी ही बातों में आकर मैंने अपने लाल को खो दिया। कितना कहा था, मगर तू न

माली।" सब हाल सुन कर राजकुमारी को भी बड़ा पछ-तावा हुआ और वह फूट-फूट कर रोने लगी।

मगर हीरा रो-धोकर बैठ जाने वाली स्त्री न थी। जब कुछ दिन बाद उसका जी शान्त हुआ, तो उसने इरादा किया कि जैसे बनेगा वैसे लाल को ढूँढ कर रहूँगी। अगर लाल को पाने के लिए जान भी देनी पड़ेगी तो दे दूँगी। सोच-विचार करते-करते उसने अपने राज्य भर मे इस मतलब की मुनादी करवा दी कि जो आदमी मुझे कोई नई और अजीब बात सुनावेगा, वह इनाम पावेगा।

× × ×

उसी राज्य मे एक गरीब ब्राह्मण रहता था, जो रोटियों तक को मुहताज था। एक दिन उसकी स्त्री ने उससे कहा—"महाराज, न हो, महारानी हीरा के पास ही चले जाओ। उन्हे कोई नई बात सुनाना। अगर उन्हे बात पसन्द आ गई और उन्होंने कृपा कर कुछ इनाम दे दिया, तो थोड़े-बहुत दिन तो आराम से बीतेगे।" ब्राह्मण बोला—"मैं उनके पास जरूर जाता। मगर मुझे कोई नई बात मालूम हो तब न! अगर जाऊँगा भी तो सुनाऊँगा क्या?" ब्राह्मणी बोली—"पर जाने मे हानि ही क्या है? रास्ते मे जो कुछ दिखाई दे, वही सुना देना। उनके लिए नई बात हो जायगी।"

ब्राह्मण को ब्राह्मणी की यह बात पसन्द आ गई। सवेरा होते ही वह ईश्वर का नाम ले राजधानी की ओर चल पड़ा। शाम होते-होते वह एक घने जङ्गल में जा पहुँचा। अब तो बेचारा बहुत घबराया। कोसों तक बस्ती का ठिकाना न था—जहाँ तक नज़र जाती थी, बियाबान जङ्गल दिखाई देता था। अन्धकार धीरे-धीरे घना होता जाता था। उसे रह-रह कर ब्राह्मणी पर क्रोध आता था। वह बार-बार यही सोचता था—"स्त्री की बातों में आकर कैसी मुसीबत में आ फँसा हूँ। अब क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, कैसे प्राण बचाऊँ! हे भगवान्, अब तो तेरा ही आसरा है।" जब उसे कुछ न सूझा, तब वह एक पेड़ पर जा चढ़ा।

जब थोड़ी रात बीत गई, तो ब्राह्मण क्या देखता है कि एक मनुष्य उसी पेड़ के नीचे आया और दूर-दूर तक के मैदान को झाड़-बुहार कर साफ करने लगा। जब उसका काम खतम हो गया तो दो भिश्ती आये और मशक से पानी छिड़क-छिड़क कर वह जगह ठण्ढी करने लगे। इसके बाद चार आदमी और आए और उन्होंने चारों तरफ लैम्पों से इस प्रकार रोशनी कर दी कि वह जगह जगर-मगर होने लगी। अब कुछ लोग और आये, जो उस जगह को फर्श, गलीचे और गद्दे-तकिये से सजाने लगे। जब यह काम खतम हो गया, तो बहुत से लोग बड़े-बड़े

थाल लेकर आए, जो तरह-तरह की मिठाइयों और फल-फलहरी से भरे हुए थे। उन्होंने थाल क़रीने से कई सतरों में रख दिये, इसके बाद सब लोग न जाने कहाँ चले गये।

अब चारों तरफ से काले, पीले, लाल, हरे, चितकबरे और न जाने किस-किस रङ्ग के साँपों का आना शुरू हुआ। वे ऊँचा सिर किये लहराते हुए आते और चुपचाप अपनी-अपनी जगह पर बैठते जाते थे। धीरे धीरे वह जगह साँपों से खचाखच भर गई। सबके पीछे एक बड़ा भारी काला नाग फुफकार मारता और जीभ लपलपाता हुआ आया। उसे देखते ही सब साँप सिटपिटा गये। उन्होंने अपने-अपने फन उठा कर उसका स्वागत किया। काला नाग अपने चारों तरफ एक तीखी नजर डालता हुआ, सब से ऊँचे आसन पर जा बैठा। अब सभा का काम शुरू हुआ। कितने ही साँपों ने नागराज के सामने पहुँच कर न जाने किस-किरा बात की प्रार्थनाएँ कीं, इसके सिवा उनके सामने कितने ही साँप हाजिर किये गये, मानों वे अपराधी थे और अपनी क़िस्मत का फैसला सुनने आये थे। नागराज सबकी बातें सुनते और हुक्म देते जाते थे। जब दरबार का काम खतम हो गया, तब नाग-राज ने कहा—"और किसी को कुछ कहना है ?" सब साँप बोले—"नही महाराज, अब हमें कुछ नहीं कहना।" इसके बाद सब साँप खाने-पीने को बैठे। जब भोजन हो

चुका तो सब अपने-अपने रास्ते चले गये। मैदान फिर पहले के समान साफ हो गया।

ब्राह्मण पेड की डाल से चिपटा हुआ यह सब तमाशा देख रहा था। जब तक साँपों का दरबार होता रहा, तब तक उसके प्राण साँसत मे पडे रहे। जब सब साँप चले गये, तब कही उसकी जान मे जान आई। सवेरा होते ही वह नीचे उतरा और प्राण लेकर राजधानी की तरफ भागा। जब मैदान से कुछ दूर निकल गया, तब वह रात की कुल वारदात पर विचार करता हुआ धीरे-धीरे चलने लगा। अब उसके चेहरे पर खुशी थी। बार-बार मन मे यही खयाल आता था—ससार मे आज तक किसी ने ऐसा तमाशा न देखा होगा। हीरा महारानी कुल हाल सुनेगी, तो बहुत खुश होंगी, और मेरी किस्मत जाग उठेगी। इसी तरह के विचारों मे डूबा हुआ वह दोपहर होते-होते राज-धानी मे जा पहुँचा, और ठीक राजमहल के सामने ही रुका। उसने पहरेदार से कहा—"जाकर महारानी जी से बोलो, एक ब्राह्मण आया है। वह जो हाल सुनाने वाला है, उससे महारानी को बडा ताज्जुब होगा। अधिक क्या, अभी तक उन्हें किसी ने ऐसा हाल न सुनाया होगा।"

हीरा ने ब्राह्मण के आने का समाचार सुनते ही उसे अपने सामने बुलवाया। उसका आदर-सत्कार किया और फिर उससे पूछा—"हाँ महाराज, सुनाओ तुम कौन सा

नया समाचार लाये हो ?" तब ब्राह्मण ने पिछली रात को जो तमाशा देखा था, शुरू से आखिर तक ज्यों का त्यों कह सुनाया। सुन कर हीरा को सचमुच बड़ा ताज्जुब हुआ। उसने कहा—"महाराज, क्या वह तमाशा मुझे भी दिखला सकते हो ? अगर तुम्हारा कहना सच निकला तो तुम्हे इतना इनाम दूँगी कि तुम्हारी दरिद्रता हमेशा के लिए दूर हो जायगी।"

ब्राह्मण घबरा कर बोला—भगवान का नाम लीजिए सरकार ! आपके शत्रुओं को भी ऐसा तमाशा न देखना पड़े। मै तो यही समझता हूँ कि मौत के मुँह से निकल आया हूँ। अगर आप वह तमाशा देखेंगी, तो प्राण छोड़ देंगी। फिर वह तमाशा देखना बड़े कष्ट का काम है। भला सोचिए तो सही, चमकदार अँधेरी रात, सुनसान जङ्गल और फिर घण्टों पेड़ की डाली से चिपटे रहना। अगर घबरा कर कहीं नीचे गिर पडे तो फिर क्या साँप बिना डँसे छोड़ देंगे ? नहीं-नहीं सरकार, आप उस तमाशे का नाम भी न लीजिए।"

हीरा ने हँस कर कहा—नही ब्राह्मण देवता, तुम इन बातों की चिन्ता न करो। अगर वह तमाशा देखने के लिए मुझे प्राण भी देना पडेगे तो खुशी से दे दूँगी। मामूली कष्टों की तो बात ही क्या है।

अब ब्राह्मण क्या करता। बेचारे को हीरा की बात

माननी ही पड़ी। उसने कहा—अच्छी बात है। अगर आपकी यही इच्छा है तो चलिए। मगर भगवान न करे, आपको किसी प्रकार का कष्ट हो, तो मुझे दोष न दीजिएगा।

यह हाल सुनते ही हीरा के हृदय में उथल-पुथल होने लगी। अब उसे इतना धीरज कहाँ था, जो वह दो-चार दिन के लिए भी ठहर जाती। उसने फौरन तैयारी की और ब्राह्मण के साथ जङ्गल की राह ली। शाम होते-होते दोनों उसी स्थान पर जा पहुँचे। ब्राह्मण के साथ हीरा भी पेड़ पर चढ़ गई और बड़ी बेचैनी से बाट देखने लगी कि साँपों की सभा कब होती है। जब वक्त हुआ तो हीरा ने देखा कि ब्राह्मण ने जो हाल सुनाया था उसका एक-एक अक्षर सच है।

सवेरा होते ही हीरा शहर में लौट आई। उसने ब्राह्मण को तो बहुत सा धन देकर विदा कर दिया और अब अकेले ही उस जङ्गल में जाने का विचार बाँधा। कुछ सोचकर वह बेशुमार मिठाइयाँ और खुशबूदार चीजें लेकर कितने नौकरों के साथ फिर उस जङ्गल में पहुँची। उसने नौकरों को हुक्म दिया कि यह मैदान खूब अच्छी तरह झाड़-बुहार कर साफ कर दो, चारों तरफ फूलों की सड़कें बना दो और उन्हें गुलाब जल व इत्र से सींच दो। शाम होते-होते कुल काम पूरा हो गया। अब जङ्गल में मङ्गल होने

लगा—जहाँ तक नजर जाती थी, फूल बिछे दिखाई देते थे। चारों ओर खुशबू उड़ रही थी। यह सजावट देख हीरा बहुत खुश हुई। उसने नौकरों से कहा—"अब तुम लोग शहर को लौट जाओ। मैं रात भर अकेली ही इस जङ्गल मे रहूँगी।" उसकी आज्ञा पाते ही नौकर चले गये, और वह खुद एक तरफ छिपकर बैठ रही।

ठीक वक्त पर साँपों की महफिल जमा हुई। आज सभी साँप बहुत प्रसन्न दिखाई देते और आपस मे इसी बात की चर्चा करते थे कि हमारे लिए इतनी तैयारियाँ तो कभी नहीं हुई। आज यह क्या बात है, जो चारों तरफ इतनी सजावट दिखाई देती है। जङ्गल भर मारे खुशबू के महक रहा है। साँपों के राजा ने कहा—"हमारी इतनी आव-भगत करने वाला चाहे जो हो, चाहे वह आदमी हो या भूत-प्रेत, मगर मैं उस पर बहुत प्रसन्न हूँ। अगर वह मेरे सामने आ जाय, और मुझसे जो कुछ भी माँगे, मै उसे वही दे दूँ।"

इतना सुनना था कि हीरा नागराज के सामने जा पहुँची, और हाथ बाँध कर बोली—महाराज, आज मैंने ही आपकी यह सेवा करने का साहस किया है। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तो मैं × × ×

हीरा की बात पूरी भी न होने पाई थी कि नागराज ने उससे पूछा—परन्तु बेटी, तुम कौन हो?

हीरा ने उत्तर दिया—महाराज, मैं इसी राज्य की रानी हूँ।

नागराज बोले—बेटी, तुम चाहे जो हो, मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूँ। तुम्हें जो कुछ माँगना हो खुशी से माँग लो।

आशा की ज्योति से हीरा का मुखडा चमक उठा। वह घुटने टेक कर बोली—महाराज, मेरे पतिदेव ने नाराज होकर मुझे त्याग दिया है। मुझे विश्वास है कि वे आपकी सभा मे मौजूद हैं। यदि वे मुझे मिल जायँ तो आपकी बडी दया होगी।

नागराज—क्या तुम उन्हें पहिचान सकती हो?

हीरा—प्रभो, यहाँ तो सभी एक रूप मे हैं। मैं कैसे पहिचान सकती हूँ। कृपाकर आप ही बतला दीजिए।

नागराज—जब तुम नहीं पहिचान सकती, तो मैं कैसे पहिचान सकता हूँ। हाँ, तुम उसका कुछ पता-निशान और हाल बतलाओ तो मालूम हो सकता है।

हीरा—महाराज, उनका नाम लाल है। मेरी एक बहिन और है। एक दिन उसकी बातों मे आकर मैं लाल से उनकी जाति पूछ बैठी। उन्होंने मुझे बहुत समझाया कि तुम मेरी जाति जानकर पछताओगी। पर मेरी बुद्धि पर पत्थर पड रहे थे। मैंने अपनी जिद न छोडी। तब लाल पानी मे उतर पडे, और साँप होकर न जाने कहाँ गायब हो गये। उसी दिन से मैं उनके लिए तडप रही हूँ। मगर

इसमे उनका क्या अपराध ! मैने जैसा किया वैसा पाया।
फिर भी मै प्रतिज्ञा कर चुकी हूँ कि यदि लाल न मिले, तो
मै किसी दिन चिता मे जल कर प्राण त्याग दूँगी।

नागराज—उफ ! लाल बडा दुष्ट था ! न कुछ बात
पर पत्नी को त्याग बैठा ! परन्तु बेटी, तुम घबराओ नहीं,
अगर वह मेरी सभा मे है, तो मै अभी उसे तुम्हारे सामने
किये देता हूँ।

यह कह कर नागराज घडी भर तक कुछ सोचते रहे,
और फिर एकबारगी गरज कर बोले—वक्रदन्त ! इधर
आओ।

वक्रदन्त दौड कर नागराज के सामने पहुँचा और
सिर झुकाकर बोला—पिता जी ! क्या आज्ञा है ?

नागराज हीरा की तरफ इशारा करते हुए बोले—पहि-
चानते हो, यह स्त्री कौन है ?

वक्रदन्त ने उत्तर दिया—जी हाँ ! यह मेरी धर्मपत्नी
हीरा है। मै इस पर बहुत प्यार करता था। मगर यह
उस प्यार की कीमत नही समझ सकी और एक दिन मेरी
जाति पूछने पर आमादा हुई। मैने इसे बहुत समझाया,
पर यह न मानी। तब मैं इसे अपनी जाति बतला कर
आपकी सेवा मे लौट आया।

नागराज हँसकर बोले—मगर बेटा, हीरा का अपराध
इस दण्ड के योग्य नहीं है। समझ मे नहीं आता कि मेरे

कुछ होने पर भी तुमने कैसे इतनी कठोरता की। अच्छा अब तुम हीरा के साथ जाओ।

वक्रदन्त घबराकर बोला—नहीं पिता जी, मैं अपनी जाति और अपने देश पर बहुत प्यार करता हूँ। अब हीरा के साथ कैसे जाऊँ।

नागराज ने एक मीठी झिड़की देकर कहा—उल्लू कहीं का! देश और जाति का प्यार यह थोड़े ही कहता है कि कोई अपनी पत्नी पर प्यार न करे। बेटा, मेरी बात मानो, बहू के साथ जाओ, और दोनों सुख-चैन से रहो।

अब वक्रदन्त क्या करता! लोट-पोट कर लाल बन गया। उसे देखकर हीरा को जो खुशी हुई, वह बयान से बाहर है। नागराज ने उसके पति प्रेम की बड़ी बड़ाई की, उसे आशीर्वाद दिया और उपहार में बहुत सी सुन्दर-सुन्दर वस्तुएँ भी दीं। जब वह चलने को तैयार हुई, नागराज ने उससे कहा—बेटी, जब तुम्हारा जी चाहे तब तुम इस जङ्गल में बेखटके मेरे पास आ सकती हो और सुनो, यदि लाल कभी तुम्हें सतावे या हैरान करे, तो तुम यहीं आकर मुझसे कहना।

अब हीरा खुशी-खुशी लाल के साथ घर को लौटी। मगर रास्ते में दोनों चुप थे। नीचा सिर किये चल रहे थे। शायद उन्हें उस दिन की गलती और जिदबाजी पर अफसोस हो रहा था।

ठग की बेटी

राजा साहब राजकुमार पर बहुत नाराज हुए, बोले—पाजी को कितना समझाया, मानता ही नही! न लिखने-पढ़ने की फिकर, न कुछ काम-धाम सीखने का ही ध्यान। ऐसे बैठा-बैठा कब तक खाता रहेगा!

बस, राजकुमार को भी ताव हो आया। उसने सोच लिया—अब इस घर मे रहूँगा ही नहीं। कहीं बाहर निकल जाऊँगा, जब गठरी कमा लूँगा, तभी इस घर मे आऊँगा। पिताजी को दिखा दूँगा कि मैं भी पैसा कमाना जानता हूँ।

राजकुमार ने कुछ हीरे-मोती और रुपए अपनी जेब मे रखे। फिर वह एक अच्छे से घोडे की पीठ पर सवार हो, एक तरफ को चल पडा। रास्ते मे उसे एक तरकीब सूझी। उसने कुछ अशर्फियाँ और हीरे-मोती घोडे की जीन मे छिपा दिये, जिसमे किसी को उनका पता न चले। चारों तरफ यह खबर फैल गई कि राजकुमार बहुत सा धन लेकर न जाने कहाँ चला गया है। राजा ने डौंड़ी पिटवा

दी कि जो आदमी मुझे उसका पता देगा या उसे मेरे पास ले आयेगा, उसे अच्छा इनाम दिया जायगा।

उधर राजकुमार चलता-चलता एक बड़े शहर में पहुँचा। वह इस विचार में ही था कि कहाँ ठहरना चाहिए, इतने में एक भला आदमी उसके पास आया। वह राजकुमार से घुल-घुल कर बातें करने लगा— आप कहाँ से आये हैं? कहाँ जायँगे? कहाँ ठहरेंगे? वगैरह-वगैरह। राजकुमार ने उसे अपना असली हाल तो न बतलाया, पर वह आदमी समझ गया कि यह छोकरा किसी बड़े आदमी का लड़का जरूर है, क्या ताज्जुब कि माँ-बाप से रूठ कर यहाँ भाग आया हो, या कहीं रोजगार करने जा रहा हो। उसने राजकुमार से कहा—भैया! अगर तुम्हें कुछ अड़चन न हो तो मुझ गरीब के यहाँ ही ठहर जाइए। भले आदमियों को अपने यहाँ ठहराने और उनकी सेवा करने में मुझे बड़ा आनन्द मिलता है। मेरे यहाँ ठहरने में तुम्हें कुछ भी कष्ट न होगा।

राजकुमार बहुत खुश हुआ। यह तो चाहता ही था। चटपट उस आदमी के साथ हो लिया और उसके घर पर जा पहुँचा। अभी राजकुमार को उस आदमी के यहाँ बैठे पाँच मिनट भी न हुए थे कि एक आदमी ने उसे इशारे से अपने पास बुलाया। राजकुमार उसके पास गया, तो वह राहगीर उससे बोला—सूरत शकल से आप किसी

भले आदमी के लडके जान पडते हैं। आपको देख कर मुझे दया आती है। जिस आदमी के यहाँ आपने डेरा जमाया है, वह बड़ा चाण्डाल है, ठगों का सरदार है, सात जवान लड़कों का बाप है। वे लडके यम के समान भयङ्कर है। जो इसके फन्दे में जा पडता है, वह अपने माल से ही हाथ नहीं धोता, जान भी खो देता है। आप के भले के लिए कहता हूँ, जैसे बने अपनी जान बचाइए।

इतना कह कर वह आदमी तो अपने रास्ते चला गया, पर राजकुमार को काटो तो शरीर में लहू नहीं, आँखों के सामने अँधेरा छा गया, पैरों के नीचे से धरती खिसक गई। वह चटपट दहलान मे आया और अपना सामान सँभालने लगा। इतने मे ही वह ठग-सरदार घर मे से बाहर निकल आया। उसके साथ नई उमर के दो-तीन जवान भी थे। राजकुमार को सामान बाँधता देख ठग-सरदार उससे बोला—"हैं! यह क्या भाई! अभी आये, अभी चलने लगे! दो-चार दिन भी न ठहरे! ऐसी जल्दी क्या पड़ी है! इस गरीब की पहुनई क्या तुम्हे बुरी जान पड़ती है?" फिर उसने एक जवान से, जो असल मे उसी का बेटा था, कहा—"उल्लू के समान क्या देखता है! ये सज्जन अपने पाहुने हैं। इनका सामान भीतर रख दे।" इसके बाद उसने दूसरे बेटे से कहा—"और तू गधे के समान खड़ा-खडा क्या कर रहा है? इन्हे घर के भीतर

क्यों नहीं ले जाता? भीतर ले जाकर इनका हाथ-मुँह धुला और इनके आराम का सब बन्दोबस्त कर दे।"

ठग के बेटों ने तुरन्त अपने पिता की आज्ञाओं का पालन किया। यह ढङ्ग देख कर राजकुमार ने भी कुछ चीं-चपड नही की। उसने क्षण भर में सोच लिया कि उतावली करने या घबराहट दिखलाने से कुछ फ़ायदा न होगा। अब तो मौका देख कर चतुराई से ही काम करूँगा। ठग के बेटों ने राजकुमार को घर के भीतर ले जाकर किसी तरह का कष्ट नहीं दिया, जैसी चाहिए वैसी उसकी सेवा की, ख़ूब अच्छी तरह प्रेम से खिलाया-पिलाया और ऐसी-ऐसी मीठी बातें कीं कि राजकुमार यहाँ तक सोचने लगा कि ये तो सचमुच मे भले आदमी जान पडते हैं, शायद वही आदमी कोई धोखेबाज़ रहा होगा।

धीरे-धीरे शाम हुई, रात आई। ब्यालू के बाद ठग के बेटों ने राजकुमार के आराम का भी बन्दोबस्त कर दिया। राजकुमार बिछौने पर जा लेटा। एक़ान्त पाते ही उसका मन उस आदमी की चेतावनी सोचने लगा। क्या जाने वही आदमी सच्चा रहा हो, और ये सचमुच मे ठग हों, मुझे भुलावे मे डाले रहने के लिए ही यह मीठा व्यवहार कर रहे हों। राजकुमार की चिन्ता क्षण-क्षण पर बढ चली। उसकी आँखों से नीद भाग गई।

होते-होते रात आधी से अधिक ख़तम हो गई, पर

ठग के लम्बे-चौडे मकान में ज्यो का त्यों सन्नाटा छाया रहा। अब राजकुमार के मन को कही धीरज हुआ। उसे यह बात जँचने लगी कि उस आदमी ने झूठ-मूठ ही मेरे मन में चिन्ता बैठा दी है। मन का भार हलका होते ही उसकी आँखे अलसाने लगीं। धीरे-धीरे निद्रा ने उस पर अपनी चादर डाल दी। पर अभी बेचारे को सोये हुए आधा घण्टा भी न हुआ था कि धीरे-धीरे उस कोठे के किवाड खुल गये। यद्यपि किवाड़ खुलने से कुछ अधिक आवाज नहीं हुई थी, फिर भी राजकुमार की आँखों से भरी हुई नींद खट से भाग गई। उसने चकित नेत्रों से घबरा कर द्वार की ओर नजर उठाई। एक बहुत ही खूबसूरत नौजवान स्त्री उसकी ओर धीरे-धीरे बढ रही थी। उसका सुन्दर रूप उसकी प्यारी सजावट देख राजकुमार को और भी अचरज हुआ। वह यह भी न सोच सका कि इस गहरी अँधेरी रात मे—इस सुनसान में, मेरे कमरे मे एकाएक आ पहुँचने वाली यह स्त्री पुरुष है या कोई देवी। जब वह पलङ्ग के निकट आ गई, तब राजकुमार उठ कर खड़ा हो गया।

जान पडता है, वह स्त्री यह नही चाहती थी कि राजकुमार मुझे जागता हुआ मिले, क्योंकि राजकुमार को पलङ्ग छोड़ता देख वह खुश नहीं हुई और एकाएक रुक कर खड़ी हो गई। कुछ क्षण तक दोनों एक दूसरे को

देखते रहे—कमर मे सन्नाटा छाया रहा। अन्त मे स्त्री ने वह सन्नाटा तोडा, जैसे उस कमरे मे धीरे से वशी कूक उठी—"पथिक! तुम अब तक जाग रहे हो, तुम्हारी आँखों मे नींद नही आई?" राजकुमार बोला—"देवि! तुम कौन हो? इस एकान्त कमरे मे किस पुण्य-हेतु से दर्शन देने आई हो? इस बिना जान-पहिचान के बटोही पर यह कृपा क्यों हुई है?" स्त्री ने उत्तर दिया—"पथिक! मैं इसी घर के स्वामी की बेटी हूँ। तुम राह के हारे थके होओगे, तुम्हारी थोडी सी सेवा कर दूँ, इसी मतलब से चली आई! क्यों, क्या तुम्हे कुछ एतराज है?" राजकुमार कानों पर हाथ रख कर बोला—"देवि! मै आपकी इस कृपा के योग्य नहीं हूँ, ऐसी बाते कर मुझे पाप के कीचड मे न ढकेलो। तुम पर-नारी हो, पर नारी की ओर देखना भी मेरे लिए पाप है, फिर उससे सेवा कराने की तो बात ही क्या?"

पर उस ठग की बेटी ने राजकुमार की इस बात पर ध्यान नहीं दिया। वह उसके पलङ्ग पर जा बैठी। उसने राजकुमार का हाथ पकड कर उसे भी पलङ्ग पर बिठा लिया। यहाँ-वहाँ की बातें होने लगी। राजकुमार को इस बात का विश्वास सा हो गया कि मैं जिन लोगों के यहाँ ठहरा हूँ, वे सब बडे ही भले आदमी हैं और बडे प्रेम से अपने पाहुनों की सेवा करते हैं। ऐसे नेक आदमियों के यहाँ ठहरने से वह अभी मन ही मन खुश

हो रहा था कि वह सुन्दरी एकबारगी उछल कर राज-कुमार की छाती पर चढ बैठी। उसने अपनी चोली के दामन से एक तेज़ कटार निकाल ली। वह दीपक के टिमटिमाते हुए प्रकाश मे बिजली के समान चमक उठी। यह सब देख कर राजकुमार के रोम-रोम काँप उठे। ठग की बेटी बोली—"मुसाफिर! सावधान होकर मेरी बात सुन! मेरा पिता एक प्रसिद्ध ठग है, मेरे भाई भी उससे कम नही हैं। जो एक बार इस कोठरी में आ जाता है, वह फिर सही-सलामत वापिस नहीं जाने पाता। अब तेरी कुशल इसी में है कि जो कुछ तेरे पास हो चुपचाप सीधे-सीधे बतला दे, नहीं तो तेरी गर्दन पर यह कटार रखी है।

राजकुमार ने उत्तर दिया—हे ठग की बेटी! जब मैंने इस घर की छाया मे पैर रक्खा था, तभी मेरी बाईं आँख फड़क उठी थी और मैं समझ गया था कि कुछ न कुछ आफत ज़रूर ही सिर पर पड़ने वाली है। और जब मैंने इस घर मे पैर रखा तथा यहाँ का रङ्ग-ढङ्ग देखा तभी समझ लिया था कि अब मेरी खैरियत नहीं है। पर मैं तुझे धोखे में नहीं रखना चाहता, मेरे पास कुछ नहीं है। अब जो तेरे जी में आये ख़ुशी से कर। पर इतना याद रखना, मेरी हत्या से तू सुखी नहीं होगी। मुझे मार कर तू उसी तरह पछतायेगी, जिस तरह राजा ससान को मार कर पछताया था।

यह सुन ठग की बेटी ने कहा—"मुसाफिर! तुम्हारी बात का मतलब मेरी समझ में नहीं आया। मैं तुम्हें मार कर क्यों पछताऊँगी? राजा ससान को मार कर क्यों पछताया था? ये सब बातें खुलासा कर बतलाओ।" राजकुमार बोला—"वाह, तुम छाती पर सवार हो, मैं सब बातें कैसे समझाऊँ?" यह सुनते ही ठग की बेटी राजकुमार की छाती पर से उतर पड़ी और उससे बोली—"अच्छा, अब सब बातें मुझे ठीक-ठीक समझाओ।"

राजकुमार ने कहना शुरू किया—"सुन ठग की बेटी! एक राजा था। उसने ससान नामक एक पक्षी पाला था। वह ससान पर बहुत प्यार करता था। जहाँ जाता, ससान जरूर ही उसके साथ रहता। एक बार राजा अपने मित्रों और मन्त्रियों के साथ शिकार खेलने निकला, ससान भी उसके साथ हो लिया। राजा घोड़े पर बैठा जा रहा था और ससान आकाश मे उड़ता हुआ उस पर छाया करता चलता था। अपने स्वामी पर पक्षी का यह प्रेम देख जहाँ बहुत से लोग खुश हुए, वहाँ कुछ को बुरा भी लगा, मन मे सोचने लगे—यह तो पूरा गुलाम है गुलाम! टुकड़ों पर मरा जाता है। खैर।

चलते-चलते राजा एक जङ्गल में पहुँचा। बेचारे जङ्गली जानवर तीर-तलवार और भाले से छेदे-काटे जाने लगे। धीरे-धीरे दोपहर का सन्नाटा आया, गरम हवा

जोरों से बहने लगी। कुछ तो थकावट ने और कुछ सूरज की तीखी किरणों ने शिकारियों के हौसले ढीले कर दिये। अब सबको आराम करने की धुन सवार हुई। बस, हरे-हरे पेड़ों के नीचे सबों ने डेरे डाल दिए।

धीरे-धीरे गरमी का जोर और भी बढ़ा। अब प्यास ने राजा को बेचैन कर दिया। वह मन्त्री से बोला—भई! कहीं से दो घूँट जल लाकर मेरे प्राण बचाओ। यदि थोड़ी देर तक पानी न मिलेगा, तो दम निकल जायगी, गला एकदम सूख गया है।

यह सुन मन्त्री ने कहा, प्रभो! इधर भी यही हाल है। शिकार के चाव मे हमने इधर पनवास का विचार नही किया—यह बडी गलती हुई। खैर, अब तो कुछ उपाय करना ही पड़ेगा। यह कहकर मन्त्री एक ऊँचे पेड पर चढ़ गया और चारों ओर नजर फेक कर पानी के चिह्न ढूँढ़ने लगा। थोड़ी ही देर मे वह पेड़ से नीचे उतर आया और एक ओर को चला गया।

मन्त्री को लौटने मे देर हुई। इधर राजा की बेचैनी बढ़ने लगी। उसी समय एक आदमी उससे बोला— महाराज, वह देखिए, उस पेड की किसी डाली से पानी की एक एक बूँद धरती पर गिर रही है। जब तक मन्त्री जी नहीं लौटते, तब तक आप इन्ही बूँदों से क्यों न अपना गला तर करे? राजा का मुख चमक उठा। वह खुद उस

पेड़ के नीचे पहुँचा और टपकती हुई बूँदों के नीचे उसने एक छोटी सी कटोरी रख दी। कोई दस मिनट में कटोरी भर गई। राजा ने कटोरी उठाई, वह उसे मुँह से लगाना ही चाहता था कि पेड़ की डाली पर बैठा हुआ ससान झपटा। उसने एक ही झपट्टे में राजा के हाथ से कटोरी नीचे गिरा दी।

ससान की इस हरकत पर राजा को बड़ा दुःख हुआ। पर उसने कहा कुछ नहीं, कटोरी फिर जहाँ की तहाँ रख दी। दस मिनट में वह फिर भर गई। राजा उसे उठाकर ज्योंही पीने लगा, त्योंही ससान ने फिर झपट्टा मारा, खन-खन करती हुई कटोरी चार-छः हाथ की दूरी पर जा गिरी। राजा आग हो गया। जो लोग पहले से ही ससान पर जल रहे थे, वे मौका पा गये और बोले—महाराज! यह तो आपका शत्रु जान पड़ता है। राजा फिर भी चुप रहा और कटोरी में जल लेने लगा। परन्तु इस बार भी ससान ने राजा के हाथ से कटोरी गिरा दी। बस राजा का क्रोध भड़क उठा, उसी समय ससान के शत्रुओं ने जैसे उसकी क्रोधाग्नि में घी छोड़ दिया—'महाराज, क्या ऐसा पक्षी भी पालना चाहिए? यह तो आपके प्राणों का प्यासा हो रहा है।' राजा ने धनुष उठाया और तीर छोड़ दिया, ससान दो-तीन बार तड़प कर ठण्ढा हो गया।

इसके पाँच मिनट बाद ही मन्त्री जल लेकर आ गया। राजा ने पानी पिया। ससान को मरा हुआ देखकर मन्त्री को अचरज जान पड़ा। उसने राजा से पूछा—'प्रभो! आपके प्यारे ससान की यह दशा क्योंकर हुई? मै तो अभी-अभी इसे भला-चङ्गा छोड़ कर गया था। मन्त्री ने सब हाल सुना और एक नौकर को आज्ञा दी—'ज़रा इस पेड़ पर चढ़कर तो देखो कि ये पानी की बूँदे कहाँ से आ रही है।'

नौकर पेड पर चढा। क्षण भर मे ही एक मरा हुआ अजगर लद रो धरती पर गिरा। नौकर उतर कर बोला—सरकार! यही साँप मरा हुआ, पेड़ की डालियों मे फँसा था। पत्ते घने होने से हम इसे नीचे से नहीं देख सके। इसी के मुँह से पानी की बूँदें गिर रही थीं।

मन्त्री ने राजा से कहा—'सुना महाराज आपने! जिस ससान ने आपके प्राण बचाये, उसी को आपने बिना सोचे-समझे मार डाला।'

अब तो राजा के दु:ख का ठिकाना न रहा। वह ससान का मृत शरीर गोद मे लेकर 'हाय ससान! हाय ससान!' करने लगा।"

हे ठग की बेटी! कान लगा कर सुन! जिस प्रकार वह राजा बिना विचारे ससान की हत्या कर बुरी तरह पछताया था, मेरी हत्या करने के बाद तू उससे भी कहीं अधिक पछतायेगी।

यह छोटी सी कहानी राजकुमार ने इस प्रकार नमक-मिर्च लगा कर कही कि जिसका कुछ ठिकाना नहीं। फिर ठग की बेटी का इतना हियाव न हुआ कि वह राजकुमार पर हाथ उठाती। कहानी खतम होते-होते मुर्गे ने भी बाँग दी और ठग की बेटी उस कमरे से बाहर निकल गई।

इस चतुराई से राजकुमार ने उस दिन अपने प्राण बचा तो लिए, पर उसका जी बड़े खटके में पड़ गया। वह दिन भर इसी सोच में डूबा रहा कि इस मौत के जाल से किस तरह मेरा पीछा छूटेगा। ठगों ने भी ऐसी सावधानी रक्खी कि राजकुमार घर के बाहर तक न झाँक सका। धीरे-धीरे शाम हुई, रात आई और राजकुमार की चिन्ता क्षण-क्षण पर लम्बी-चौड़ी होने लगी।

आधी रात के बाद ठग की बेटी ने उसी ठाट-बाट से फिर राजकुमार के कोठे में पैर रक्खा। राजकुमार की आँखों में नींद कहाँ? ठग की बेटी पर नजर पड़ते ही वह उठकर बैठ गया। सोचने लगा, क्षणभर में ही ये प्राण यह शरीर छोड़ देंगे। ठग की बेटी भी पहले के समान खञ्जर खींच कर उससे बोली—हे मुसाफिर! क्यों परेशान होते हो, जो कुछ तुम्हारे पास हो, चुपके-चुपके मेरे हवाले कर दो, नहीं तो आज यह खञ्जर तुम्हारी छाती का गरम-गरम लहू पिये बिना नहीं मानेगा। कल मैंने तुम पर दया कर दी थी, नतीजा यह हुआ कि

पिता और भाइयों ने जैसी मन मे आई, बक-झक कर डाली, सो आज मै तुम पर तनिक भी दया न करूंगी।

राजकुमार ने उत्तर दिया—हे सुन्दरी, मुझे जो कुछ कहना था, वह मैं कल ही कह चुका। मेरे पास कुछ होता, तो मै कभी का तुम्हे सौंप देता। वैसे तुम मुझे मारना चाहती हो, तो भले ही मार डालो। स्त्री पुरुषों की माता है, उसी स्त्री-जाति मे तुमने भी जन्म लिया है, सो यह मेरा बडा भाग्य है, जो मै तुम्हारे हाथों मरने जा रहा हूँ। पर यह याद रक्खो कि तुम मुझे मार कर उसी तरह पछताओगी, जिस तरह बञ्जारा अपने कुत्ते को मार कर पछताया था।

ठग की बेटी ने पूछा—बञ्जारे ने अपने कुत्ते को क्यों मार डाला था ? और उसे मार कर वह पछताया ही क्यों था ?

राजकुमार ने उत्तर दिया—हे देवि ! बात बडी नहीं है, बिलकुल मामूली है, पर सोचने की जरूरत है। तुम ध्यान से यह कहानी सुन लो, फिर जो तुम्हारे मन मे आवे, कर गुजरो।

"बहुत बरस हुए, किसी नगर मे एक बञ्जारा रहता था। वह बडा ही व्यापारी था। एक-एक लाख बैलों पर माल लाद कर वह देश-विदेश का सफर करता था। एक बार की बात सुनो। एक बार बञ्जारा किसी काम से दूसरे नगर को गया। वहाँ उसे बहुत

फायदे का कुछ सौदा देख पड़ा। बञ्जारे ने सौदा कर लिया। हिसाब करने पर उसे मालूम हुआ कि उसके पास माल की कीमत से एक हजार रुपये कम हैं। अब तो बञ्जारा बड़ी चिन्ता में पड़ा, परदेश का मामला, कौन उसे एक हजार की ढेरी सौंप देगा? फिर भी वह निराश नहीं हुआ।

बञ्जारा ऋण लेने की गरज से एक महाजन के यहा पहुँचा। महाजन ने उसे जवाब दिया—भई, एक हजार तो क्या, मैं तुम्हें दो हजार भी दे दूँ। पर हमारी-तुम्हारी कोई जान-पहिचान नहीं, और इसका क्या भरोसा कि तुम मेरे रुपये मय व्याज के लौटा ही दोगे।

बञ्जारे के पास एक कुत्ता था। वह उसे जान से भी ज्यादा प्यारा था, जहाँ जाता कुत्ता उसके साथ जरूर रहता। बञ्जारे ने महाजन से कहा—साहु! मेरी बात का विश्वास करो। हजार तो क्या, मैं लाख भी ले जाऊँ, तो तुम्हारी कौड़ी-कौडी तुम्हारे यहाँ आ जायगी। और जो तुम्हें मेरी बात की खातिरी नहीं है, तो मेरा यह कुत्ता बन्धक रख लो। यद्यपि यह कुत्ता है, पर इसका कोई मोल नहीं है, यह मेरा साथी है, मित्र है और भाई है। इससे अधिक मैं इसकी बड़ाई नहीं कर सकता। एक महीने के भीतर ही भीतर मेरा आदमी तुम्हारे रुपये लेकर आयेगा, और कुत्ते को ले जायगा। देखना भाई, मेरे

मोती को कुछ कष्ट न होने पाये, इसके आराम के लिए यदि तुम महीने भर मे दो-चार सौ भी खर्च कर दोगे, तो चिन्ता नहीं, मैं एक-एक पाई करके तुम्हारा ऋण चुका दूँगा।

अब महाजन और किन्तु-परन्तु नहीं कर सका। उसने बञ्जारे के सामने एक हज़ार की थैली रख दी। बञ्जारे ने मोती से कहा—भई, एक महीने के लिए ये साहु जी तुम्हारे स्वामी हुए। इन्हे भी मेरे समान ही मानना। जब मेरा आदमी तुम्हे लेने आवे, तभी तुम घर लौटना। देखना, मेरी बाते कानों पर न उडा देना। यह कहते-कहते बञ्जारे की आँखे डबडबा आईं। फिर वह रुपयों की थैली उठा कर चला गया।

कुत्ते ने अपने स्वामी की आज्ञा का पालन भलीभाँति किया। अब वह महाजन को ही अपना स्वामी समझने लगा। क्या मजाल कि महाजन आज्ञा दे और मोती उसे न माने! महाजन भी उस पर प्यार करता था, और मोती दिन-रात उसके मकान का चक्कर काट कर पहरा देता था। एक दिन जब कि रात को खूब अँधियारी छा रही थी, चोरों ने महाजन के घर पर छापा मारा। वे महाजन की सब नकदी और जेवर जवाहरात उठा ले गये। मोती दहलान मे पड़ा-पड़ा चोरों की सब करतूत देखता रहा। उस समय वह चोरों से तनिक भी न बोला—इस डर से

कि कहीं वे मुझे मार न दें, तो मैं अपनी जान से तो जाऊँगा ही और महाजन का भी कुछ उपकार न कर सकूँगा। चोरों ने वह माल ले जाकर एक तालाब में छिपा दिया। मोती चुपचाप उनके पीछे-पीछे गया और वह स्थान देख आया।

सवेरा होते ही महाजन ने चिल्ल-पों मचाई। तब मोती आया और उसके पैरों पर सिर रख कर कूँ-कूँ करने लगा। फिर उसने कुछ दूर दौड कर महाजन को अपने पीछे आने का इशारा किया। कुछ लोगों ने कहा—सेठ जी, कुत्ते के पीछे चल कर देखना तो चाहिए कि उसका मतलब क्या है, शायद वह माल के विषय में कुछ जानता हो। बस सेठ जी और उनके साथ कई लोग कुत्ते के पीछे चल पडे। तालाब के किनारे पहुँच कर कुत्ता रुक गया। फिर उसने सेठ जी से इशारा किया कि तालाब में पता लगाओ। इतना ही नहीं, मोती खुद तालाब में घुस गया और गोता मार कर एक थैली निकाल लाया। फिर क्या था, बात की बात में सब माल बाहर निकाल लिया गया।

सेठ जी के आनन्द का ठिकाना न रहा। वे लोगों से कहने लगे—भई यह कुत्ता नहीं, देवता है। बन्जारा सच ही कहता था। यदि वह इसे मेरे यहाँ गिरवी न रख गया होता, तो मैं तो भिखारी ही बन चुका था। बन्जारा बड़ा भाग्यवान् है, जो उसे ऐसा कुत्ता मिल गया है। फिर उसने

कुत्ते पर खूब प्यार किया, उसे खूब खिलाया-पिलाया। एक चिट्ठी लिखकर उसके गले में बाँधी और उससे कहा—प्यारे मित्र ! अब तुम खुशी से घर चल जाओ, तुम्हारे एक हजार के बदले मुझे पचासों हजार मिल गये हैं।

मोती खुशी से उछलता हुआ अपने घर की ओर चला। उसे आता देख बञ्जारे का मुँह उतर गया। उसने सोचा—मोती ने मेरी आबरू धूल में मिला दी। यह मुझे झूठा बनाकर भाग आया है। ज्योंही मोती पास आया और अपने स्वामी के चरणों से लिपटने लगा त्योंही बञ्जारे ने क्रोध में पागल हो उसके सिर पर पत्थर पटक दिया। बेचारा मोती अपने स्वामी के चरणों की धूल माथे पर लगा, चल बसा। उसी समय बञ्जारे की नजर मोती के गले में बँधी हुई चिट्ठी पर पड़ी। उसने चिट्ठी पढ़ी। बस, पढ़कर वह हाय-हाय करने लगा—'मेरे मोती ! मेरे प्यारे मोती ! तूने मेरी लाज बचाई—मेरे मुँह की लाली रक्खी और मैंने तेरे प्राण ले लिये ! हाय ! तेरे जैसा साथी अब मुझे कहाँ मिलेगा ?'

"हे ठग की बेटी ! तुमने उतावली का नतीजा देखा ? उतावली के बाद आदमी हमेशा ही पछताता हुआ देखा गया है। इसीलिए बुद्धिमान् लोग कभी उतावली नहीं करते।"

यह कहानी होते-होते बहुत समय निकल गया था,

रात थोड़ी ही रह गई थी। कहानी सुनकर ठग की बेटी भी सोच म पड गई। मैं अब क्या करूँ—यह उसकी समझ मे आता ही न था। इसलिए वह चुपचाप सोच-विचार मे डूबी हुई वहाँ से चली गई।

इसी प्रकार सात दिन बीत गये। राजकुमार कहानी सुनाता और ठग की बेटी सोच-विचार करती हुई कमरे मे बाहर चली जाती। अब दिन-रात वह इसी सोच मे रहती कि इस मुसाफिर की हत्या करूँ या नही! पर उसकी समझ में कुछ न आता। यहाँ घरवाले उसे चैन न लेने देते, वे बार-बार उससे अण्ट-सण्ट बातें करते और कहते—जैसे बने इस मुसाफिर के बाप-दादों तक की सम्पत्ति का पता लगा ले और इसे ठिकाने लगा दे। उधर राजकुमार की शिक्षा से भरी हुई कहानियाँ, इधर घर वालों के पेचो-ताव। ठग की बेटी परेशान हो गई। आठवे दिन उसने राजकुमार से पूछा—तो अब तुम मुझसे क्या करने को कहते हो? तुम्हारी कहानियाँ तो मैंने बहुत सुनीं, पर घरवालों को क्या जवाब दूँ? वे तो मेरे प्राण खाए जा रहे है।

राजकुमार ने मुस्कुरा कर उत्तर दिया—हाँ, अब आई तुम रास्ते पर। हे ठग की बेटी! दुनिया मे किसी निरपराध जीव की और वह भी मनुष्य की हत्या करने से बढ कर कोई पाप नही है। तुम्हारे पिता और भाई इस

पाप से दूर रहते हैं और तुम उनके कहने पर खून से अपने हाथ रँगती हो। आज तुम उन सबसे यह पूछो कि वे केवल धन या पुण्य के ही साथी है या तुम्हारे इस पाप मे भी साथी होगे? उनका उत्तर मालूम होने पर आगे की बात सोची जायगी।

जब उस स्त्री ने अपने पिता और भाइयो से यह बात पूछी, तब तो वे बहुत बिगड़े, बोले—तुझे किसने ये बाते पढाई है? जान पडता है, तू उस मुसाफिर के चकमे मे आ गई है। अरी रॉंड, यह तो तनिक सी बात है, न कोई किसी के पुण्य मे शामिल हो सकता है, न पाप मे। जो जैसा करता है, उसे वैसा फल मिलता है। फिर इन बातों से क्या मतलब! जिन मुसाफिरों का धन तू खींचती है, उसे अकेले हमी तो खा नहीं लेते, तू भी तो खाती है। फिर हम तेरे पाप मे शामिल क्यों हों? और तुझे पैसे से मतलब है या इस पाप-पुण्य के पचड़े से? यदि आज तूने उस मुसाफिर का माल बरामद न किया तो तू जान। अब हम तेरी एक बहानेबाजी न सुनेंगे।

दूसरे दिन ठग की बेटी ने पिता और भाइयों की ये सब बाते राजकुमार को ज्यों की त्यों सुना दीं। सुन कर राजकुमार उससे बोले—कुछ आया तुम्हारी समझ मे? पाप करोगी तो अपने लिए, पुण्य करोगी तो अपने लिए। वे तो धन के साथी हैं, तुम्हारे पाप-पुण्य से उन्हें

कुछ मतलब नहीं। उनका तो एक सीधा सा कहना है—रोटियाँ खाना चाहती हो तो जरूर उनके कहने पर चलना पड़ेगा। फिर तुम पुण्य छोड़ यह पाप क्यों कमा रही हो? क्या इतने पापों से कमाई हुई धन की यह गठरी परलोक में भी तुम्हारा साथ देगी?

ठग की बेटी की आँखें खुल गईं, पछता कर कहने लगी—"तुमने ठीक कहा। मैंने बड़ी गलती की, जो उनके कहने में आकर कितने ही लोगों को सताया। अब बताओ, मैं क्या करूँ? इनके पास रहूँगी, तो इनका कहना करना ही पड़ेगा। नही रहूँ, तो जाऊँ कहाँ? और मेरे निकल जाने से ही क्या होगा! वे मेरा पीछा थोड़े ही छोड़ देंगे! तुमने मेरे सोए हुए ज्ञान को जगाकर मेरे साथ भलाई की है या बुराई—यह मेरी समझ मे नहीं आता। मैंने जो पाप किये हैं, उनसे कैसे मेरा छुटकारा होगा! किसका पल्ला पकड़ कर मैं अपना शेष जीवन बिताऊँगी। अब तो भई, तुम्हीं मुझे पार लगाओ।" यह कहते-कहते उसकी आँखें भर आईं।

राजकुमार ने उत्तर दिया—इतनी चिन्ता न करो। यदि तुम चाहो तो मैं तुम्हें सब तरह की सहायता देने को तैयार हूँ। तुम खुशी से मेरे साथ रह सकती हो। रही पाप की बात, सो तुमने अनजाने यह अपराध किया है। यदि तुम उस पाप की कमाई से दीन-दुखियों का

कुछ उपकार करो, तो शायद भगवान् भी तुम पर दया करेंगे।

ठग की बेटी का मुखड़ा चमक उठा, बोली—मुझे तुम्हारी बात मञ्जूर है। बस, आओ अभी यहाँ से निकल चलें। मैं जाती हूँ और वह सब धन उठाये लाती हूँ, तब तक तुम भी तैयार हो जाओ।

राजकुमार ने सुख की साँस ली। उन्होंने चटपट बोरिया-बँधना बाँधकर घोड़ा कसा। इतने में एक बड़ी सी पोटली लिये ठग की बेटी भी आ पहुँची। दोनों घोड़े पर सवार हुए। चाबुक की फटकार सुनते ही घोड़ा हवा से बातें करने लगा। सवेरा होते-होते वे कोसों दूर निकल गये।

कुछ दिन के बाद राजकुमार अपने नगर में आ पहुँचा। माता-पिता भी उसे देख कर तथा उसकी कहानी सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। ठग की बेटी बहुत सुन्दर थी। राजकुमार से उसका बहुत प्रेम हो गया था। यह देखकर राजा-रानी ने उन दोनों का विवाह कर दिया। अब ठग की बेटी अपने भाग्य पर बहुत प्रसन्न थी। वह मन में अक्सर सोचने लगती थी—यदि उस दिन मैंने राजकुमार की हत्या कर डाली होती तो मैं आज इतने बड़े पद पर कैसे पहुँचती—इतने सुख कहाँ से पाती? ये सच ही कहते थे कि तुम मुझे मार कर पछताओगी।

राजकुमार ने अपनी पत्नी को सब तरह का आराम दे रक्खा था। उन्होंने उसकी एक भी कौडी नही ली थी। उस धन से वह दीन-दुखियों की ही भलाई किया करती थी। इस काम मे उसका मन भी खूब लगता था। राजकुमार भी उसे इस काम मे खूब सहायता दिया करता था। एक दिन वह राजकुमार से बोली—"तुम मुझे नरक से उठाकर स्वर्ग मे ले आये हो।" राजकुमार ने उत्तर दिया—"मैंने कहा था न कि मुझे मार कर तुम पीछे पछताओगी। उतावली करना अच्छा नहीं।" उसकी पत्नी ने कहा—"आप सच कहते हैं। उतावली बुरी चीज है।"

भाग्य-बल

राजा वज्रबुद्धि के पाँच बेटियाँ थीं। वे पाँचों बेटियों पर बहुत प्यार करते थे। एक दिन कोई त्योहार था। राजा महल मे बैठे थे, पाँचों बेटियाँ भी उनके पास बैठी हुई थी। बातों ही बातों मे राजा ने बड़ी बेटी से पूछा—"बेटी! तुम किसके भाग्य से खाती हो?" उसने उत्तर दिया—"पिताजी, मै तो आपके भाग्य से खाती हूँ।" राजा बहुत प्रसन्न हुए। फिर तो उन्होंने सब बेटियों से वही सवाल किया। और तो सबने वैसा ही उत्तर दिया–कि पिता जी हम सब आपके भाग्य से ही खाती हैं, पर छोटी बेटी निर्मल कुछ न बोली। उसे चुप देख वज्रबुद्धि ने कहा—"बेटी! यह क्या! तुमने तो कुछ उत्तर नही दिया।" निर्मल फिर भी चुप रही। तब राजा बोले—"निर्मल! तू बोलती क्यों नहीं! मेरे प्रश्न का उत्तर क्यों नहीं देती?" इस बार निर्मल का मुँह खुला। उसने कहा—"पिता जी, मेरा उत्तर सुन कर शायद आप नाराज हो

जाएँगे।" राजा बोले—"इसमें नाराज होने की क्या बात ? मैं पूछता हूँ, तू उत्तर दे।"

राजा की यह बात सुन निर्मल ने कहा—पिता जी, मेरा अपराध क्षमा करें। मेरी ये सब बहिनें झूठ बोलती हैं। दुनिया में जितने प्राणी हैं, सब अपने-अपने भाग्य से खाते हैं, कोई किसी के भाग्य से नहीं खाता।

राजा की त्योरियाँ चढ़ गईं, उन्होंने कहा—"निर्मल ! तू निरी मूर्ख है। भगवान् ने तुझे तनिक भी बुद्धि नहीं दी।" यद्यपि राजा ने उस दिन निर्मल से इससे अधिक कुछ न कहा, पर वह उनकी नजर से उतर गई, उन्होंने उस पर प्यार करना छोड़ दिया। यह देख सब बहिनें बहुत खुश हुईं। पर माता ने निर्मल से कहा—"बेटी ! पिता से ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए। देख, तूने उन्हें नाराज कर दिया है। अब कभी उनसे ऐसी बातें न करना। समझी !" निर्मल बोली—"तो अम्मा ! क्या झूठ बोलना अच्छा होता है ? अपने बच्चों को झूठ बोलते देख माता-पिता प्रसन्न हुआ करते हैं ?"

इसके कुछ दिन बाद राजा ने फिर सब कन्याओं से वही सवाल किया। चार बेटियों ने जवाब दिया—"पिता जी, हम तो आपके भाग्य से खाती हैं।" निर्मल इस बार भी चुप रही। राजा उस पर नाराज तो थे ही, चिढ़ कर बोले—"निर्मल तू मेरे सवाल का जवाब क्यों

नहीं देती ?" निर्मल ने दीनता के साथ उत्तर दिया—"पिता जी, इस प्रश्न का उत्तर मैं आपको पहले दे चुकी हूँ। उसे दुहरा कर मैं आपको और भी नाराज नही करना चाहती। राजा ने गरज कर कहा—"तो तू मेरे भाग्य से नहीं खाती ?" निर्मल धीरे से बोली—"नहीं !" राजा की आँखों से आग बरसने लगी, वह और भी चिल्लाकर बोले—"अच्छा-अच्छा राँड़ ! देखूँगा तेरा भाग्य ! यदि एक-एक दाने के लिए न तरसती फिरे, तो कहना ! मेरे सामने से हट जा !"

इसके बाद ही राजा ने अपने पुरोहित को बुलाया और उससे कहा—पण्डित जी, चार बेटियों के ब्याह तो हो चुके हैं, अब मैं निर्मल का ब्याह करूँगा। तुम्हे उसके लिए वर ढूँढ़ना पडेगा। पर देखो, वह खराब से खराब हो, बूढा हो, भिखमङ्गा हो, कुरूप हो, काना हो, लूला-लँगड़ा हो, चिन्ता नहीं। यदि तुम मेरी इच्छा पूरी करोगे, तो इनाम पाओगे, नहीं तो तुम जानो ! बस जाओ, मैं इस विषय मे तुम्हारी कोई बात न सुनूँगा। बेचारा पण्डित चुपचाप वहाँ से खिसक गया।

राजा की यह बात सुन रानी सन्नाटे मे आ गई, थोड़ी देर बाद बोली—"महाराज ! इतनी नाराजी अच्छी नही। निर्मल आप की ही बेटी तो है। बच्चों से कुसूर बन जाता है तो माता-पिता इतने नाराज थोड़े ही होते हैं। मैं आप

से ।" राजा बीच मे ही चिढकर, चिल्लाकर बोले—"रानी, मै तुम्हारी बाते नहीं सुनना चाहता। मुझे जो अच्छा लगेगा वही करूँगा !"

राजा उठ कर बाहर चले गये। रानी उनकी तरफ देखती ही रह गई।

२

विमलबुद्धि बहुत बडे राजा थे। कई देशों के मालिक थे। उनके अधीन कई छोटे-छोटे राजा थे। इतना सब होने पर भी राजा को घमण्ड नहीं था, बडे ही भले आदमी थे। राज्य का तो काम करते ही थे, पर इससे भी बढकर एक काम और करते थे। उन्हे दिन-रात दूसरों की भलाई करने की धुन लगी रहती थी। भेष बदल कर निकल जाते, जिस दीन-दुखी को देखते, चुपचाप उसका दु ख दूर कर देते। उसे कानों-कान खबर न होती कि हमारी भलाई करने वाले हमारे ही महाराज विमलबुद्धि हैं।

एक बार विमलबुद्धि अपनी प्रजा के सुख-दु ख का पता लगाते हुए एक घने जङ्गल मे जा निकले। उस समय जङ्गल मे जोरों से आग लग रही थी। राजा एक तरफ को जाने ही वाले थे कि उनके कानों मे एक आवाज आई—'हाय हाय! मुफ्त मे मेरी जान जा रही है। अरे कोई धर्मात्मा पास हो तो मेरे प्राण बचा ले! बडा पुण्य होगा।' इस आवाज मे बड़ा ही दु ख भरा था। सुनकर उनका कोमल

हृदय मसोसने लगा। जिस तरफ से आवाज आ रही थी, महाराज विमलबुद्धि उसी तरफ चल पड़े। थोड़ा आगे बढ़ने पर उन्होंने देखा कि एक बाँबी के चारों तरफ लपटें उठ रही हैं। एक पुराना काला साँप उसका चक्कर काट रहा है, भागने के लिए रास्ता न देख बार-बार चिल्ला उठता है—'हाय-हाय! मुफ्त मे मेरी जान जा रही है। अरे कोई धर्मात्मा पास हो, तो मेरे प्राण बचा ले। बड़ा पुण्य होगा।' राजा पर नजर पड़ते ही साँप बोला—महाराज, आप भले आये। अब अवश्य ही मेरे प्राण बच जायँगे। जल्दी कीजिए।

महाराज ने आज तक बहुत से मनुष्यों का दु ख दूर किया था। बहुत से पशुओं के साथ भी भलाई की थी, पर उन्हे ऐसा मौका कभी न मिला था कि वे साँप या उस जैसे किसी और भयङ्कर जीव का उपकार करते। साँप की बात सुनते ही उनका जी हिचका। बोले—भई! तेरे प्राण बचाने में मुझे उजर तो कुछ नहीं है, पर साँपों का स्वभाव होता है दुष्ट! कहीं ऐसा न हो कि मै तेरे प्राण बचाऊँ और तू मेरे प्राण ले ले।

साँप ने गिड़गिड़ा कर कहा—हाय-हाय! महाराज, आप भी कैसी बाते करते हो। आपके दर्शन से ही दुखियों का आधा दुःख दूर हो जाता है। किसमे इतनी हिम्मत है, जो आपका बाल भी बाँका कर सके। और

मैं तो एक बहुत ही मामूली जीव हूँ। महाराज की हानि करने से मुझे तो इस दुनिया में रहने को भी ठिकाना न मिलेगा। जल्दी कीजिए, आग पास बढ़ती आ रही है। भगवान ने मेरे लिए ही आपको यहाँ भेज दिया है।

विमलबुद्धि साँप की बातों में आ गये। उन्होंने एक लम्बी लकड़ी के सहारे आहिस्ते से साँप को लपटों से बाहर खींच लिया। यद्यपि उन्होंने यह काम बड़ी साव-धानी से—बड़े सपाटे से किया था, फिर भी साँप का फन कुछ-कुछ झुलस गया। वह मुर्दे के समान जमीन पर पड़ कर बोला—"हाय-हाय! महाराज, मरा जाता हूँ, बड़ा कष्ट है, जैसे फन में आग लग गई है। आपने वहाँ से निकाला तो यह आफत आ गई। अब मैं बचूँगा नहीं।" यह कह कर वह रोने और कराहने लगा।

उसे दुखी देख विमलबुद्धि को बड़ी दया आई। समझा कर बोले—नागराज, धीरज धरो, घबराओ नहीं। अगर कोई उपाय हो तो बताओ, मैं तुम्हारा कष्ट दूर करने को तैयार हूँ।

नाग ने सिसकियाँ भरते हुए उत्तर दिया—उपाय तो है, पर क्या जाने आप उसे करेंगे या नहीं। फिर यह भी नहीं कह सकता कि आप मेरा विश्वास कहाँ तक करते हैं। यदि आप अपने मुँह में मेरा फन रख लें तो ठण्डक मिलने से थोड़ी ही देर में मेरा दु:ख दूर हो जायगा।

विमलबुद्धि ने कुछ सोच कर साँप की बात मान ली और उसका फन मुँह मे रख लिया। साँप कुछ देर तक तो शान्त रहा, इसके बाद एक सरसराहट ! वह राजा के पेट मे चला गया। राजा के दु ख का ठिकाना न रहा, काटो तो शरीर मे लहू नही। हाय ! इस दुष्ट के साथ मैंने भलाई की, उसका इसने यह बदला दिया। बेचारे वहीं बैठ कर रोने लगे।

२

वज्रबुद्धि ने तो आज्ञा दे दी, पर बेचारा पुरोहित आफत मे पड गया। वह जानता था कि निर्मल बडी अच्छी लडकी है। ऐसी लड़की पर नाराज होना राजा की मूर्खता है, और बहुत ही ख़राब वर के गले से उसे बाँध कर, राजा उसके साथ पूरी दुष्टता करना चाहता है। पुरोहित ने सोचा, यदि मै राजा की आज्ञा मानूँगा, तो बडा पाप होगा, बेचारी निर्मल का सब सुख धूल में मिल जायगा, क्योंकि लड़की को सुख तो तभी मिलता है, जब किसी अच्छे लडके के साथ उसका विवाह किया जाय। पर राजा की आज्ञा तो माननी ही पड़ेगी, न मानूँगा तो मुफ्त मे ही आफत सिर पर आ पड़ेगी। बेचारा पुरोहित दुखी मन से निर्मल के लिए वर ढूँढ़ने निकला।

पुरोहित भटकते-भटकते हैरान हो गया। पर राजा ने जैसा कहा था, वैसा आदमी उसे न मिला। पुरोहित

सोचने लगा कि निर्मल का भाग्य तो चाग्या है, पर राजा को भी क्या सूझी है ! वह भिखमङ्गे, कुरूप, अन्धे और लूले-लङ्गड आदमी को अपना दामाद बनाना चाहता है। धिक्कार है ऐसे पिता को ! भगवान करे उस पापी पर पहाड गिर पडे। अब तो कल जो आदमी पहले मुझे मिलेगा, पहले ही जिस पर मेरी नजर पडेगी, उसे ही राजा के सामने ले जाऊँगा। कह दूँगा, उससे बुरा आदमी मुझे तुम्हारे राज्य में मिला ही नहीं—इसमें मेरा क्या कुसूर ! ऐसा विचार कर पुरोहित सो गया।

सवेरा हुआ, पुरोहित ने बिछौने पर से सिर उठाकर सामने की ओर देखा। एक वृक्ष के नीचे एक भिखारी पडा हुआ था। पेट उसका मटके के समान भारी था, रङ्ग कोयले से कुछ ही कम काला, देखने में वह किसी भूत से अधिक सुन्दर नहीं मालूम पडता था। उसे देखते ही पुरोहित ने एक ठण्डी साँस ली। फिर वह आप ही आप कहने लगा—"फूट गया, निर्मल का भाग्य फूट गया, अब मैं क्या करूँ ! हाय ! वज्रबुद्धि, तेरा नाश हो ! तूने उस गरीब लडकी के साथ किस जन्म का बैर भँजाया।" इस तरह बडबडाता हुआ वह उठा, और उस भिखारी के पास जाकर बोला—"राजा के दामाद ! मेरे साथ राजधानी में चलोगे ? तुम्हारा भाग्य जागा है, राजकुमारी के साथ तुम्हारा विवाह होगा।"

भिखारी अपनी गोल-गोल आँखे मटका कर बोला—"अरे दादा! क्यो इस भिखमङ्गे के साथ ठठोली करते हो। मेरा भाग्य ऐसा ही होता तो क्यों द्वार द्वार जाकर एक-एक टुकडे के लिए गिडगिडाता।

पुरोहित बडी खामोशी के साथ कहने लगा—"नहीं-नहीं, राजा के दामाद! मै तुम्हारे साथ दिल्लगी नही करता। दिल्लगी करने की मेरी आदत भी नही। मैंने तुमसे जो कुछ कहा है, वह बिलकुल सच है—इतना ही सच, जितना कि हमारी-तुम्हारी बातों का होना। तुम वज्रबुद्धि को जानते हो न? वही, जो इस अभागे देश के स्वामी हैं। उन्ही की सुन्दर कन्या निर्मल के साथ तुम्हारा विवाह होगा। अचरज मत करो, जिस दिन तुम्हारा विवाह होगा, उसी दिन तुम्हे मालूम हो जायगा कि मै झूठ नही बोलता। समझे!" इसके बाद पुरोहित ने उस भिखमङ्गे को सब हाल शुरू से आखीर तक कह सुनाया।

सुन कर भिखमङ्गा बहुत खुश हुआ, बोला—दादा! ऐसा करा दो, तो क्या कहना। जीवन भर तुम्हारा उपकार न भूलूँगा। और नहीं, तो यह घर-घर का भीख माँगना ही छूट जायगा।

बस, दोनों राजधानी की ओर चल पडे। पुरोहित ने भिखमङ्गे को राजा के सामने खडा कर दिया। राजा कुछ कहे, इसके पहले ही भिखमङ्गा बोला—"दुहाई सरकार की!

मैं अपनी इच्छा से नहीं आया। ये महाराज ही मुझे पकड़ लाये हैं।" पुरोहित ने हाथ जोड़ कर कहा—"अन्नदाता! मैंने तमाम देश छान डाला, इससे बुरा आदमी मुझे मिला ही नहीं।"

राजा भिखमङ्गे को सिर से पैर तक देख कर पुरोहित से बोले—मैंने जैसा आदमी कहा था, वैसा तुम नहीं लाये! इसकी एक आँख कहाँ फूटी है? नाक चपटी नहीं है, हाथ पाँव भी नहीं टूटे हैं! ब्राह्मण की जाति ही तो ठहर, निर्मल पर दया आ गई होगी, बस इसी को पकड़ लाये!

फिर उन्होंने भिखमङ्गे से कहा—क्यों रे! तू कौन है?

भिखमङ्गा—भिखमङ्गा!

राजा—तेरे माँ-बाप कौन थे?

भिखमङ्गा—अब मैं किसे बताऊँ! बताऊँगा भी तो आप मानेंगे ही कहाँ!

राजा—अच्छा, तू क्या काम करता है?

भिखमङ्गा—भीख माँगना—भले आदमियों के सामने गिड़गिड़ाना।

इसके बाद राजा साहब पुरोहित से बोले—महाराज! यह आदमी काफी अच्छा है! पर जब तुम इसे ले ही आये हो तो मैं पसन्द किये लेता हूँ।

४

अन्त मे राजा वज्रबुद्धि ने अपनी फूल सी सुन्दर कन्या निर्मल को उस भिखमङ्गे के गले से बॉध ही दी। बेचारे भिखमङ्गे ने आशा की थी कि राजकुमारी के साथ विवाह होने से मुझे भीख न मॉगनी पडेगी। उसकी यह आशा पूरी तो हुई, पर बडे कष्ट के साथ। राजा ने निर्मल को दहेज मे तॉबे का एक तार भी न दिया। बेचारी एक पुरानी साडी पहिन कर पति के साथ बिदा हुई। जब वह चलने लगी, तब राजा ने उससे कहा—"निर्मल! अभागिनी! अब देखूँगा कि भिखमङ्गे के साथ तेरा भाग्य क्या खेल खेलता है।" राजा इतना करके ही शान्त नहीं हुआ, उसने बेटी-दामाद को आज्ञा दी कि तुम्हे इसी नगर में—बाहर एक झोपड़ी मे रहना पडेगा। मैं देखा करूँगा कि भाग्य तुम्हे कैसे-कैसे नाच नचाता है। इसके साथ ही उसने नगर में यह भी डौंडी पिटवा दी कि कोई भी आदमी निर्मल या उसके पति को सहायता देने का साहस न करे, नहीं तो उसे पूरी-पूरी सजा दी जायगी।

निर्मल ने ठण्डी सॉसे भरते हुए अपनी झोपड़ी में प्रवेश किया। उसके दु:ख का ठिकाना नही था। वह मन ही मन अपने खोटे भाग्य पर रोती थी। परन्तु भगवान् ने उसे बुद्धि दी थी। दो-चार दिन बाद उसने अपने हृदय को सँभाला, मन को समझाया। फिर वह इस चिन्ता मे

लगी कि अब दिन कैसे कटेंगे, इन प्राणों को तो भूख-प्यास के कष्टों से बचाना ही होगा। परन्तु नगर में, उसे किसी से रत्ती भर सहायता मिलने की आशा न थी। बहुत सोच-विचार कर उसने पति से कहा—"सुनो महाराज! अब भीख माँगने का यह खोटा काम छोड़ना पड़ेगा। इतना बड़ा जङ्गल सामने पड़ा है। हम उसी में चलेंगे, लकड़ियाँ बीनकर लायेंगे, बाजार में बेचेंगे, जो मिलेगा उसी से पेट पालेंगे। यह कोई बुरा काम नहीं है, इसमें हमें किसी के आगे हाथ न फैलाना पड़ेगा। हमें चोरी न करनी चाहिए, भीख न माँगनी चाहिए, न कोई बुरा काम ही करना चाहिए, इनके सिवा हम पेट पालने के लिए चाहे जो काम कर सकते हैं, और इसमें शर्म ही क्या? अपनी मेहनत की रोटी खानी चाहिए।" पतिदेव बोले—"मेरी लक्ष्मी! तुम जैसा कहोगी, जिस काम से सुख मिलेगा, मैं उसे ही करूँगा।"

दूसरे दिन से ही दोनों पति-पत्नी जङ्गल जाने और वहाँ से लकड़ियाँ लाकर बेचने का काम करने लगे। शुरू-शुरू में तो निर्मल को इस काम से बड़ा कष्ट हुआ, पर धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ जाने से वह उस कष्ट को कष्ट ही न समझने लगी। यह काम करते हुए भी उसे इस बात से सन्तोष था कि मैं अपनी मेहनत की रोटियाँ खाती हूँ। हाँ, एक बात रह गई, इतनी मेहनत करने पर भी निर्मल

पति की सेवा करना कभी नहीं भूलती थी। पति को किस प्रकार सुख मिल सकेगा, इस पर उसका ध्यान बराबर रहता था। उसका पति भिखमङ्गा है, कुरूप है, इसलिए उसने कभी उससे कड़ी बात नहीं कही। अपने भाग्य की बात सोचकर वह इसी हालत में अपने को सुखी मानने लगी थी। यदि उसे किसी बात का दु:ख था, चिन्ता थी, तो यह कि उसका पति दिनोंदिन कमजोर होता जाता था, पेट भी बढ रहा था। निर्मल बहुत सोचने पर भी यह नहीं सोच पाती थी कि उसके पति की यह दशा क्यों होती जा रही है, क्या करने से उसकी हालत सुधर सकेगी। वह पति से बहुत पूछती थी कि तुम्हारी यह दशा क्यों होती जाती है, तुम्हे क्या कष्ट है, क्या बीमारी है, पर वह उसे हमेशा एक ही उत्तर देता था—"प्रिये! मेरा हाल सुन कर क्या करोगी! सुना भी दूँगा, तो कोई लाभ न होगा। मेरी बीमारी दूर करना तुम्हारे वश की बात नहीं है।" यह कह कर वह एक ठण्ढी साँस खींच लेता था। यह देख निर्मल के कोमल हृदय पर एक जोर का धक्का लग जाता था। बेचारी आँखों मे आँसू भर कर रह जाती थी।

एक दिन की बात सुनिए। निर्मल लकडियों का गट्ठर लिये पति के साथ जङ्गल से लौट रही थी। रास्ते में उसके

पति को थकावट जान पड़ी। वह बोला—"मेरी निर्मल रानी! अब आगे बढ़ने में कष्ट जान पड़ता है। जब तक थोड़ी देर आराम न कर लूँ तब तक और न चल सकूँगा।" निर्मल ने कहा—"जैसी आपकी इच्छा।" बस पतिदेवता आम के एक पेड़ की घनी छाया में बैठ कर सुस्ताने लगे। निर्मल अपना अञ्चल हिला कर उन पर हवा करने लगी। थोड़ी ही देर में उनकी झपकी लग गई। निर्मल भी अपने भाग्य की आगे-पीछे की बातें सोचने लगी।

इतने में एक अनोखी घटना हुई। सोच में डूबी हुई निर्मल ने ज्योंही पति की ओर नजर उठाई, त्योंही वह क्या देखती है कि उनका मुँह खुला हुआ है और उससे बार-बार एक साँप बाहर को झाँकता है। निर्मल सन्नाटे में आगई। बात क्या है, यह जानने के विचार से वह पेड़ की ओट में छिप रही। अब किसी को सामने न देख साँप का डर जाता रहा। वह निर्मल के पति के मुख से अपना सिर कुछ बाहर निकाल कर हवाखोरी करने लगा।

आम के उस पेड़ के नीचे एक बाँबी भी थी। उसी समय उसमें से भी एक साँप बाहर निकला। उसने निर्मल के पति के मुख से बाहर सिर निकाले हुए नाग से कहा—"धिक्कार है रे पापी तुझे! राजा ने तेरे साथ क्या बुराई की थी? तू आग से मरा जा रहा था। राजा को दया आई, उसने तेरे प्राण बचा दिये। उसका तूने राजा को यह

बदला दिया कि अब तू उसके प्राणो का गाहक हो रहा है। भगवान ऐसे पापियो को मौत भी नही देता।" यह सुन निर्मल के पति के मुख मे बैठा हुआ नाग बाँबी वाले नाग से बोला—"और तू कम पापी है ? अपनी बाँबी म सात हण्डे अशर्फियाँ छिपाये बैठा है। न खुद खावे न किसी को खाने दे। सोच तो, तेरी इस माया से कितने लोगो का भला हो सकता है। कोई सुनने वाला होता तो मै उससे कहता कि इस बाँबी पर आग जला कर तेरा नाश कर दे और यह धन उठा ले जाय।"

अब तो बाँबी वाले नाग को ताव आ गया, बिगड कर बोला—और अपनी तो सोच। मै कहता हूँ, यदि राजा गरम-गरम मही, जिसमे खूब नमक, मिर्चें और राई पडी हो, पी ले तो तू भी छार-छार उड़ जाय। राजा का दुःख दूर होने का यही एक उपाय है।

निर्मल का हृदय उछल पडा। आज उसे मालूम हुआ कि उसका भाग्य बिलकुल खोटा नही है, उसका पति भी सचमुच मे भिखमङ्गा नहीं है, वह भी एक राजा है और बेचारे को परोपकार के बदले मे यह सजा मिली है। निर्मल को अभिमान हुआ कि मै एक सज्जन की पत्नी हूँ, सन्तोप की आभा उसके मुखडे पर झलक उठी। पर उसने किसी से कहा कुछ नही। पति से भी कुछ नहीं पूछा कि असल बात क्या है। उसने सोचा कि उतावली करना

ठीक नहीं। यदि मेरा भाग्य चोखा है, तो धीरे-धीरे एक दिन आप से आप सब भेद खुल जायगा।

६

निर्मल ने अपनी गाढी कमाई से जो थोडे से पैसे बचा रक्खे थे, उन्ही से मठे का बन्दोबस्त किया। मठा पीते ही उसके पति को बडा फायदा जान पडा। दो-एक दिन के बाद ही पेट मे बैठे हुए नाग देवता की धज्जियाँ उड गई पेट ज्यों का त्यों हो गया और तबियत मे खूब हल्कापन दिखाई देने लगा। धीरे-धीरे रङ्ग भी निखर चला और चहरे की रौनक बढने लगी। कुछ ही दिनो मे निर्मल के पतिदेव बिलकुल चङ्गे हो गये। भिखारी का रूप न जाने कहाँ जा छिपा और उसकी जगह पर कुन्दन के समान दमकता हुआ सुन्दर शरीर दिखाई देने लगा। पति का यह बदला हुआ रूप-रङ्ग देख निर्मल को बड़ा ही अचरज जान पडा तथा खुशी भी बहुत हुई। यही हाल उसके पति का भी था। वे एक दिन निर्मल से बोले—"मेरी रानी! तुमने न जाने क्या कर दिया है कि मेरी तो एकबारगी काया ही पलट गई। अब हम यहाँ न रह सकेंगे। तुम्हे मेरी बात माननी ही पडेगी। भगवान चाहेंगे तो शीघ्र ही हमारे दिन फिरेंगे।" निर्मल ने उत्तर दिया—"मेरे नाथ! तुम कोई भी हो, मै तो तुम्हे अपने प्राण-पति के नाते से ही पहचानती हूँ। मेरे लिए तुम जैसे तब थे

वैसे ही अब हो। तुम्हारी मैं बात मानूँगी, पर कुछ ठहर कर। अभी तो तुम्हें मेरी बात ही माननी पड़ेगी। मैं जैसा कहूँ वैसा ही करते जाओ। अब बहुत जल्दी इस झोपड़ी के स्थान पर एक अच्छा महल बनवाने का बन्दोबस्त कर डालो।"

पतिदेव अचरज-भरी निगाह से निर्मल की ओर देखकर बोले—एक-एक कौड़ी के लिए तो लाले पड़ रहे हैं, महल बनवाने के लिए इतना धन कहाँ से आवेगा?

निर्मल बोली—तुम इसकी चिन्ता न करो। धन तुम्हें मैं दूँगी!

निर्मल पति को आम के उसी वृक्ष के नीचे ले गई। उसने पति से कहा—"इसी बाँबी में अशर्फियों से भरे हुए सात हण्डे रखे हैं।" यह सुन पतिदेव बोले—"निर्मल! तुम्हारे पास इतना धन था, फिर भी तुम उसे अब तक मुझसे छिपाये रही!" निर्मल बोली—"नाथ! यही वह स्थान है जहाँ मेरे सोये हुए भाग्य ने करवट ली है।" फिर उसने शुरू से लेकर अन्त तक अपनी बीती हुई पतिदेव को सुना दी। सुनाते-सुनाते उसके नेत्रों में आँसू बहने लगे। पतिदेव ने उसके आँसू पोंछते हुए कहा—"मेरी निर्मल! दुखी न होओ। तुम्हारा भाग्य तुम्हारे पिता के भाग्य का भी स्वामी है। एक दिन तुम्हारे पिता अपनी करनी पर जरूर ही पछताएँगे।"

इसके बाद पति-पत्नी वह सम्पूर्ण धन अपनी झोपड़ी में उठा लाये। जहाँ धन प्राप्त हुआ वहाँ मनुष्य के हाथ में सभी साधन आप से आप आ जाते हैं। निर्मल के सम्बन्ध में भी यही बात हुई। उस झोपड़ी के सामने बड़े-बड़े विद्वान् पण्डित और कारीगर हाथ बाँध कर खड़े होने लगे। निर्मल ने एक अच्छे राजमहल का नक्शा बनवाया—वैसा ही, जैसा उसके पिता का महल था। हजारों मजदूर और कारीगर काम करने लगे। धड़ाधड़ काम चलने लगा। थोड़े ही दिनों में महल बन कर तैयार हो गया। वज्रबुद्धि के कानों तक भी यह समाचार पहुँचा। वह यह सोच भी न सका कि यह क्या हो गया। उसने अपने नौकरों-चाकरों को हुक्म दिया कि वे इस बात का पता लगावें कि यह सब कैसे हुआ।

इधर महल तैयार होते ही निर्मल ने नगर-भोज करने की ठानी। सब लोगों को न्यौते दिये गये। राजा वज्र-बुद्धि के यहाँ भी न्यौता पहुँचा। बड़ी धूमधाम से भोजनों की तैयारियाँ की गई। खाने के भाँति-भाँति के स्वादिष्ट पदार्थ बनाये गये। जिसने वे पदार्थ खाये, उसीने उनकी तारीफ की। निर्मल के कुछ आदमी राजा वज्रबुद्धि को भी बुलाने गये। राजा आये, नौकरों ने उन्हें निर्मल के सजे हुए बैठकखाने में एक सुन्दर सिंहासन पर बिठाया। इतने में निर्मल उस कोठे में आई और राजा वज्रबुद्धि के चरण

पकड कर बोली—पिता, यह अभागिनी निर्मल आपको प्रणाम करती है। अब तक राजा को यह देख कर अचरज हो रहा था कि निर्मल ने यह ठाट-बाट कहाँ से बना लिया। अब निर्मल को देख कर उनका हृदय जल उठा। जिसे उन्होंने जला दिया था वही इस तरह हरी-भरी हो रही थी। कुछ नाराज होकर बोले—"निर्मल! तूने यह धन-दौलत कहाँ से पाई? तेरा वह भिखमङ्गा पति भी नहीं दिखता! वह कहाँ है? मैं उसे देखना चाहता हूँ।" निर्मल ने उत्तर दिया—"पिता जी, आप उनका अपमान न करें। वे मेरे सौभाग्य के चमकते हुए सूर्य हैं। इस धन-दौलत की कथा वे ही आपको सुनाएँगे।"

इसी समय एक जवान ने आगे बढ़कर वज्रबुद्धि से कहा—"महाराज, अपनी जबान में लगाम लगा लीजिए। जिन महोदय को आप गालियाँ दे रहे हैं, वह देखिए, वे सामने से इधर ही आ रहे हैं।" वज्रबुद्धि ने उसी तरफ नजर दौड़ाई, तो क्या देखते हैं कि एक देवता के समान बहुत ही सुन्दर जवान उनकी ओर आ रहा है। उसका मुखड़ा बड़े सवेरे निकलने वाले सूरज के समान चमक रहा है, सिर पर उसके मुकुट है, गले में हीरे-मोतियों का हार झलमला रहा है, शरीर पर सोने के काम किये हुए रेशमी कपड़े चमक रहे हैं। वज्रबुद्धि उसे देखते ही ठिठक गये, सिंहासन छोड़कर अलग जा खड़े हुए। उसके